सूचीपत्र

स्वास्थ्य-प्रकरण

साधारण ज्ञान-प्रकरण

शिक्षा-प्रचार-प्रकरण

इतिहास-प्रकरण

विदुषीगण प्रकरण

भूगोल-प्रकरण

कलावती-शिक्षा

स्वास्थ्य-प्रकरण

चेचक का टीका

पत्र नं० १--

टीका के विषय में साधारण विचार—चेचक से हानियाँ—टीका लगाने की ठीक उमर—टीका लगाने की क्रिया—टीका लगाने की व्यवस्था में सुधार—टीका प्रचार की आदि कथा—चेचक-रोग वर्णन—डाक्टर जेनर का वृत्तान्त ।

इस वर्ष यहाँ चेचक का जोर-शोर है । भाई कृष्ण को हमने टीका लगवा दिया है। मेरे देखते-देखते टीका लगाने के काम में बड़ा परिवर्तन हो गया है। आज इस बात को तीस वर्ष से अधिक हो गये, जब मैं छोटा लड़का था तो टीकेवालों का भय मुझे इतना बताया गया था कि मैं और मेरे साथ के दूसरे

लड़के जब "छेवावाले" का नाम सुनते थे तब कोठे के भीतर छिप जाते थे। माताएँ बच्चों को छिपाने की बड़ी चेष्टा करती थीं। यह कोई नहीं जानता था कि टीका चेचक रोकने के लिए किया जाता है। गाँव के लोगों को यह विश्वास था कि अँग्रेज लोग अपने दुश्मन की तलाश में हैं। भारतवर्ष में एक ऐसा अवतार होगा जो सब अँग्रेजों को इस देश से निकाल देगा। अँगरेजों को मालूम हुआ है कि उस अवतार के शरीर में रुधिर के बदले दूध होगा। इसासे वे सब बच्चों के शरीर में छेवा देकर देखते हैं कि जिस लड़के की बाँह में दूध निकले उसको बचपन में ही मार दें। माताओं को भय था कि कहीं उनके बच्चे सन्देह में न पकड़ लिए जायँ। इसीसे वे उनको छिपा दिया करतीं। तुम्हारी दादी ने मेरे टीका न लगने दिया और फल यह हुआ कि मुझ पर चेचक का दौरा हुआ। गाँव में प्राय: सब बच्चों के माता निकला करती थी। बहुत से बच्चे मर जाते थे, कितने काने और अंधे हो जाते थे। तुम शायद अपने गाँव के सूरदास निन्नू को जानते होगे। वह जन्म का अन्धा नहीं था, बहुत समय तक वह मेरे साथ मदरसे में पढ़ने जाता रहा, हम दोनों बड़े मित्र थे। उसके जब चेचक निकली तो ठीक आँखों की पुतलियों पर दाने उठे। उसकी माँ ने बहुतेरी मिन्नतें मानीं, अनेक भूत-प्रेतों के अखाड़े किए, परन्तु, कुछ नहीं हुआ। जब दाने सूखे तो आँखों में सफेदी छा गई। सुन्दर आँखोंवाला लड़का सूरदास हो गया।

हमारी कृपालु सरकार ने जब देखा कि लोग अपने बच्चों को टीके से छिपाते हैं तब उनकी पैदाइश का रजिस्टर टीका लगानेवालों को दिया गया और सब बच्चों को टीका लगाने के लिए माँ-बाप को लाचार बनाया गया। जो टीका न लगवाए उसके लिए दंड भी निश्चित कर दिया। तो भी बहुत सी माताएँ टीका लगानेवालों को कुछ दे-दिलाकर अपने बच्चों को बचा लेती हैं। 'शान्ति' को इसी तरह टीकेवालों से बचा लिया गया, अन्त को उसे माता निकली, कुशल हुई कि ज़ोर नहीं किया। भाई प्यारे के मैंने जबर्दस्ती टीका लगवाया था। उस दिन उसकी माँ मुझ पर जितनी क्रोधित हुई थी वह मैं आज तक नहीं भूला। क्रमशः जब तुम्हारी माँ को यह निश्चय हो गया कि टीका लगाना बच्चों को चेचक से बचाना है तब तुम सबके बहुत थोड़ी उम्र में टीका लग सका।

टीका लगाने के लिए बच्चों की वही उम्र ठीक है जिसमें उनको बाँह खुजाने का बोध नहीं होता। स्याने बच्चे टीके को खुजा डालते हैं और घाव कर लेते हैं। घाव बिगड़ कर महीनों में अच्छा होता है। तब माताएँ टीका लगानेवाले को कोसने लगती हैं; परन्तु, दोष उन्हीं का है। जो वे छोटी उम्र में ही टीका लगवा देतीं तो बच्चों को हफ़्ते भर से अधिक कभी दुखी नहीं होना पड़ता। तन्दुरुस्त बच्चे को तो टीका लगाने के बाद केवल एक दिन ज्वर होता है। दानों में पीप पड़कर शीघ्र ही वे सूख जाते हैं और छिलका उतर जाता है। कृष्ण को केवल

ज्वर की जरा तकलीफ हुई, अब वह प्रसन्न है। टीका लगाने की क्रिया में भी बड़ा परिवर्तन हुआ है। मुझे याद है कि टीका लगानेवाले छठे-सातवें दिन टीका लगा देने के पीछे आया करते थे। एक बच्चे के पके हुए टीके की चेप लेकर दूसरे बच्चे को लगा देते थे। सर्वसाधारण इस क्रिया को पसन्द न करते थे। एक दोष इसमें यह भी था कि यदि किसी बच्चे के शरीर में बुरे रोग का विष मौजूद हो तो वह टीके के चेप के द्वारा दूसरे अच्छे-भले बच्चे के शरीर में प्रवेश कर जाता था। तब बछड़ों और पड़ा (भैंस के बच्चों) के द्वारा टीका लगाया जाने लगा। उसकी रीति यह थी कि बछड़ों के थन के पास जगह साफ करके टीका गोद दिया जाता था और जब दाना तैयार हो जाता तब उसका चेप लेकर बच्चों को लगाया जाता। टीका लगानेवालों को इस काम में बड़ा झंझट मालूम हुआ। तब शीशे की नलियों में चेप रखने की युक्ति निकाली गई। आजकल नैनीताल के पास एक कारखाना है जहाँ बछड़ों के दानों की चेप एकत्र करके ग्लिसरीन नाम की दवा में मिलाई जाती है और शीशे की नलियों में भरी जाती है। इन नलियों में बाल के बराबर छेद होता है। चेप भर कर नलियों के दोनों सिरे ऐसे बन्द कर दिए जाते हैं कि भीतर हवा न जा सके। शीशे की नली के सिरों को आग की लौपर रखने से काँच पिघल जाता है और छेद बंद हो जाता है।

लोग कहा करते हैं कि टीका लगाने पर भी चेचक निकल

आती है; परन्तु, ऐसा बहुत कम होता है। यदि निकलती भी है तो ज़ोर बहुत ही कम होता है। बचपन में टीके का असर ७ वर्ष तक रहता है। बहुत अच्छा हो जो ७ वर्ष पीछे फिर टीका लगा दिया जाय। लखनऊ में जब चेचक का ज़ोर हुआ था तब मैंने तुम सब को इसी भय से दुबारा टीका करा दिया था। फ़ौज में सब सिपाहियों को दुबारा टीका किया जाता है और भरती करने के समय उनसे शर्त करा ली जाती है कि दुबारा टीका लगाये जाने में उनको कुछ उज्र न करना होगा।

हमारे देश में अभी तक ऐसी माताएँ वर्तमान हैं जो टीके के फ़ायदों को नहीं समझतीं। बहुतेरी यह चाहती हैं कि टीका न उठे तो अच्छा। ज्योंही टीकेवाला टीका लगा कर गया त्योंही वे बाँह को पोंछ डालती हैं अथवा धो डालती हैं। एक से मैंने सुना कि उसने अपने बच्चे का टीका हुक्के के पानी से धो दिया। वह बड़ी ख़ुश हुई कि टीका नहीं उठा। भोली माताएँ यह नहीं जानतीं कि वे कैसी भूल में पड़ी हुई हैं। टीका उनके बड़े हित का काम है। इसके ठीक-ठीक लग जाने से बच्चों को चेचक का डर नहीं रहता। टीका जब दुरुस्त तौर पर लग जाता है तब दूसरे दिन नश्तर की लकीरें उठी हुई मालूम होती हैं। तीसरे-चौथे दिन रतूबत (पानी) पैदा हो जाती है। टीके की जगह अधिक सूज जाती है। पाँचवें-छठे दिन दाना तैयार हो जाता है, उसका रङ्ग सफ़ेदी लिए हुए होता है, किनारे उठे हुए और बीच में दबा हुआ होता है। सातवें-आठवें दिन

दाने के चारों ओर सुर्खी आ जाती है और दो दिन तक जोर रहता है। बीच का दाना मोती सा झलकदार जान पड़ता है। आस-पास की सुर्खी के साथ ही साथ बाँह में भी सूजन आ जाती है, ज्वर भी हो जाता है। दसवें-ग्यारहवें दिन सुर्खी दूर होने लगती है, दाना बीच में से सूखने लगता है और भीतर का मवाद गँदला होकर खुरंड बनने लगता है। चौदहवें-पन्द्रहवे दिन खुरंड सूख जाता है और एक हफ्ते के बीच में गिर पड़ता है। इसके बाद टीके का दाग रह जाता है जो सारी उम्र रहता है। टीका फूलने के दिनों में दो बार बुखार होता है। एक बार जब टीके में पानी भरता है और दूसरी बार जब दाना पूरा हो जाता है।

डेढ महीने से कम के बच्चे को टीका लगाना ठीक नहीं। यदि, आस-पास चेचक का ज़ोर हो तो उम्र का लिहाज नहीं किया जाता, परन्तु, बच्चे को तन्दुरुस्त होना चाहिए।

जब टीके का प्रचार न था तब चेचक का रोग महामारी की भाँति भयानक हुआ करता था। पृथ्वी पर ऐसा कोई देश न था जहाँ चेचक अपना दौरा न करती थी। चेचक बड़ी ही छूतदार बीमारी है। जब बच्चों को चेचक निकलती थी तो उनमें से आधे बच्चे अवश्य मर जाते थे। जिस तरह टिड्डी पत्तों को चाट जाती है उसी तरह चेचक बच्चे को मार जाती थी। सन् १८५० में एक बार कलकत्ते में ऐसे जोर की चेचक फैली थी कि सैकड़ा पीछे ४७ रोगी मर गए थे। सन् १८६५ में लाहौर के

सात हज़ार प्राणी दो महीने में शीतला की भेंट हो गए। सन् १८६६ में यह रोग यहाँ देशव्यापी हुआ था। एक छोटे से सूबे में मृत्यु-संख्या लिखी गई तो जान पड़ा कि दो लाख मनुष्य चेचक से मरे। टीका जारी होने से पहले चेचक से बचने का उपाय यह किया जाता था कि जिस किसी मनुष्य के चेचक निकलती थी तो घर और पड़ोस के लोग दानों की पीप का गोदना करा लेते थे। ऐसा करने से उन सब के भी चेचक निकल आती थी। परन्तु, उसका ज़ोर अधिक नहीं होता था। बंगाल और पहाड़ी इलाकों में ऐसे मनुष्य पाये जाते हैं जिनके शरीर में चेचक के मवाद से गोदना किया गया था। इस गोदने में उतनी ही बुराइयाँ थीं जितनी चेचक में। गोदने के बाद जब चेचक निकलती थी तो उससे भी बहुत लोग लङ्गड़े, लूले, बहरे, काने या अन्धे हो जाते थे। जो लोग गोदना नहीं कराते थे उन में चेचक की छूत बड़े जोर-शोर से फैलती थी। ये सब बातें आजकल के टीके में नहीं हैं। टीका लगाए हुए बच्चे से चेचक का रोग घर में औरों को कभी नहीं फ़ैलता और न चेचक का निकलना ही आवश्यक होता है।

सम्भव है कि तुम यह भी न जानती हो कि चेचक है क्या बला? ऐसे मनुष्य तो अवश्य देखे होंगे जिनके चेहरे चेचक के दागों से विचित्र बने हुए हों, परन्तु, चेचक का बीमार कोई भी न देखा होगा। क्योंकि अब हमारे घर मे सब ही टीका कराये हुए हैं और जो नहीं कराये हैं उनके चेचक एक बार निकल

चुकी है । इस रोग का साधारण वर्णन जान लेना कुछ बुरा नहीं है । चेचक निकलने से पहले ज्वर आता है, हाथ-पैर टूटते हैं । कमर और पीठ में बडा दर्द होता है, कभी बेहोशी हो जाती है । जाडा देकर बुखार आता है और तीसरे दिन चेहरे और माथे पर लाल-लाल फुंसियाँ निकल आती हैं और फिर कंधा, गर्दन, हाथ, छाती, पेट और पैरों तक पहुँच जाती हैं। पाँचवे दिन इन फुंसियों में पानी हो जाता है। ये फुंसियाँ बीच में दबी होती हैं और इनके चारों ओर लाली होती है। ज्वर दूर हो जाता है, गले में दर्द होने लगता है जिससे खाने-पीने में और बोलने में तकलीफ होती है। आठवें दिन फुंसियों में पीप पड जाती है। चेहरे पर सूजन आ जाती है। आँखें बन्द हो जाती हैं। जब फुंसियाँ मुरझाती हैं तब बीच में से सूखती हैं, सूजन सब उतर जाती है और खुरड बन कर झड जाते हैं। यह रोग की साधारण दशा वर्णन की गई है। जब फुंसियाँ बहुत घनी होती हैं तब जोर बहुत होता है। ज्वर भी बडे जोर से आता है। शरीर में घाव पड जाते हैं और बुरे बुरे नतीजे होते हैं।

जिस टीके के प्रभाव से चेचक की सब भयानकता मिट गई है उसको जेनर नाम के एक डाक्टर ने सबसे प्रथम सोचा था। डाक्टर जेनर ने मालूम किया कि जो ग्वाले दूध दुहा करते हैं उनके हाथों में गाय के थन में से एक प्रकार की फुन्सी का चेंप लग कर घाव हो जाता है। अर्थात् गायों के जब चेचक

निकलता है तो दूध दुहते समय ग्वालों के हाथ में उसका मवाद लग जाता है, घाव पड़ जाता है फिर उनको चेचक की बीमारी नहीं होती। डाक्टर ने एक गाय की शीतला के दाने का मवाद एक बच्चे के लगा दिया उससे उस जगह टीके का दाना उठा और वह अच्छा हो गया। तब उसी के शरीर में आदमी की चेचक का मवाद प्रवेश किया गया तो उस पर कुछ असर नहीं हुआ। जेनर को तब पूरा विश्वास हो गया। पहले पहल उसका विश्वास दूसरे डाक्टरों ने न माना, परन्तु, अन्त में सत्य की जय हुआ ही करती है। सब को टीके के फ़ायदे मानने पड़े। जेनर का बडा नाम हुआ। राजा-रानी ने उससे भेंट की। दस हज़ार पौंड उसको इनाम में दिया। अन्य राजा बादशाहों ने भी अपने-अपने देश में टीके का प्रचार किया। जेनर का जन्म दिन त्यौहार की तरह मनाया जाने लगा॥ रूस देश में जिस बच्चे को पहले टीका लगा उसका नाम "वैक्सी नौफ़" (टीकाराम) रक्खा गया। फ्रान्स देश के बादशाह ने जेनर के। नाम पर क़ैदी छोड दिए। धीरे-धीरे सब जगह प्रचार हुआ। जेनर का जन्म सन् १७४६ में हुआ १८२३ में मृत्यु हुई। हमारे देश से भी सन् १८१२ में ७३८३ पौंड की भेंट उनको भेजी गई थी।

पत्र नं० २—

क्षयी से जवानी में मौत—रोग का कारण लक्षण, रोग का एक स्थान से दूसरे स्थान जाने का नियम—स्त्रियों के पर्दे में रहने और घूँघट से घूँघट मिला कर वार्तालाप करने की भयानकता—रोग चिकित्सा में बेपरवाही—जहाँ-तहाँ थूक देने की बुराइयाँ—क्षयी रोग रोकने का उपदेश—मक्खियों द्वारा रोग की वढ़वारी—पशुओं में क्षयी रोग—शारीरिक बनावट—रोग ग्रसित होने के योग्य लड़कियों की तन्दुरस्ती और रोग से बचने के उपाय।

पिछली छुट्टियों में तुलाराम की बीमारी बढ़ने का हाल सुन कर अपनी माता के साथ तुम उन्हें देखने गई थीं। तुमने देखा था कि उनके शरीर में केवल हड्डियाँ ही हड्डियाँ थीं। उन्हें खाँसी इस जोर से उठती थी कि शरीर पसीने से तरबतर हो जाता था शरीर का सार खकार के रूप में होकर निकल गया था और रोज रात को ज्वर हो जाता था। यह दशा होते हुए भी उन्हें अपने जीवन की आशा थी। वे इतने निराश नहीं हुए थे जब तुम पहुँची थीं तब वे बड़े प्रसन्न हुए थे। तुम्हारे चले आने के कुछ ही दिन पीछे उनकी मृत्यु का हृदय-विदारक समाचार मिल गया। हमारी सब आशाएँ मट्टी में मिल गईं बहिन शान्ति का सुखसूर्य प्रातःकाल ही डूब गया। बेचारी जयदेवी ने अपने पिता की गोद का आनन्द नहीं पाया। जं

तुलाराम एक दिन छरहरा जवान था; परन्तु, वह थोड़े ही दिन के रोग से ठठरी के समान होगया। यह दशा क्यों हुई और कहाँ से हुई? केवल कलकत्ते में रहने और परिश्रम के अनुसार भोजन न करने तथा गन्दी-वायु में रहने से। तुम कहोगी कि कलकत्ते में लाखों आदमी रहते हैं उनकी यह दशा क्यों नहीं होती? आश्चर्य कुछ नही है, कलकत्ते मे बहुतों का यही हाल होता है। उस नगर में दो हजार से अधिक मृत्यु इसी प्रकार की होती है।

इस रोग का विष शरीर में पहुँचने पर दुर्बलता बढ़ने लगती है। रोगी का वज़न घटता जाता है। शरीर का इस प्रकार क्षय होने के कारण ही वैद्य लोगो ने इसका नाम क्षयी रक्खा है। रोगी को एक ख़ास तरह का ज्वर भी होता है जिसको फ़ारसीवाले तपेदिक़ कहते हैं। एक समाचारपत्र में प्रकाशित हुआ है कि सात में से एक मनुष्य इस रोग से ग्रसित पाया जाता है। हमारे देश में ही नहीं, विलायत में भी यह रोग विद्यमान है। अन्तर केवल यह है कि वहाँ के लोग हमारी अपेक्षा अधिक विद्वान् हैं और वे रोग से बचने के उपायों पर पूरा ध्यान देते हैं। इसके विरुद्ध हम लोग भाग्य के भरोसे रहते हैं और समझते है कि हकीम की दवाई से सब बीमारियाँ हट सकती हैं। अधिक मृत्यु एक ही से लक्षणों से होते देख कर विलायत वालों का ध्यान इस ओर गया था। बड़े-बड़े डाक्टरों को इस रोग का मूल कारण जानने के लिए आग्रह किया गया, बड़ी-बड़ी खोज-तलाश हुई। अन्त में फ्रांस के डाक्टर कोचले

ने इस रोग का भेद निकाला। पशुओं पर परीक्षा करके उसने सिद्ध किया कि यह रोग एक प्रकार के कीड़ों से होता है। ये कीड़े मनुष्य के फेफड़ों में अपना वास करते हैं और दीमक की तरह फेफड़े को खाकर उसमें गड्ढे कर देते हैं। फेफड़े के ही कार्य से मनुष्य जीता है, जब उसमें घुन लग जाता है तब तन्दुरुस्ती एक दम बिगड़ जाती है। फेफड़े के सिवाय कभी कभी अन्य अङ्गों में भी ये कीड़े जा पहुँचते हैं। इन कीड़ों का मनुष्य के शरीर में श्वास के द्वारा प्रवेश होता है। गर्द-गुबार के साथ यह हवा में उड़ा करता है। इसमें स्वयं चलने की शक्ति नहीं, केवल हवा के झोंके के साथ इधर-उधर चला जाता है। जब हवा स्थिर हो जाती है तब नीचे आ जाता है और गर्द-मट्टी में मिल जाता है। इस ही कारण से यह निश्चय हुआ है कि एक रोगी से दूसरे को यह रोग स्पर्श-द्वारा नहीं हो सकता। हाँ, रोगी की खकार और श्वास की हवा के द्वारा ऐसा हो सकता है। ऐसे रोगियों के लिए खुली हुई हवा में रहना उपयोगी समझा जाता है तथा यह भी बड़ी आवश्यकता है कि थूक और खकार का यथोचित प्रबन्ध किया जाय जिससे विष गर्द-गुबार अथवा हवा के साथ उड़ कर अच्छे-भले आदमियों के फेफड़ों में जा पहुँचते हैं। यह बात देखी गई है कि इन कीड़ों की बढ़वारी अधिकतर फेफड़ों में ही होती है। फेफड़े के भीतर पहुँचते ही थोड़े दिनों में एक कीड़े के लाखों कीड़े हो जाते हैं। हमारे देश में ऐसे बहुत कम मनुष्य हैं

जो क्षयी रोग के मूल कारण को समझते हों। ऊपर जो कुछ लिखा गया है उससे तुम समझ सकती हो कि जो लोग ऐसे रोगी के घर में होते हुए चारों ओर दीवारों से बन्द मकान में रहते हैं उनको इस रोग की छूत लग जाने का कितना भय है। पर्देदार घरों में ऐसी स्त्रियाँ प्रायः मिलती हैं जो तपेदिक़ से कष्ट पा रही हैं। स्त्रियों में तपेदिक़ की विशेषता का एक बड़ा कारण उनका पर्दे मे रहना है। बेचारियों को खुली हवा में रहना नसीब होता ही नहीं। वे जब एक घर से दूसरे घर, रिश्तेदारों के यहाँ, जाती हैं तब भी बन्द गाड़ी, पर्देदार इक्के अथवा चारों ओर से बन्द गाड़ियों में जाती हैं। मैं नहीं जानता कि यह बात कहाँ तक सच है कि किसी-किसी जाति में स्त्रियाँ, स्त्रियों से भी परदा करती हैं। बन्द घर में भी मुँह खोल कर आपस में बात-चीत नहीं करतीं। एक लड़की को तपेदिक़ की बीमारी थी। जब उसकी शादी हुई और वह दूसरे परिवार में गई तो सर्वदा घूँघट किये बैठी रहती थी। उसकी ननदें जब उससे बात-चीत करतीं तो उसके घूंघट के किनारे मुंह ले जातीं, जिससे उसकी साँस की हवा उनकी साँस के साथ मिल जाती। वह तो कुछ दिन पीछे मर ही गई, परन्तु, अपना स्मरण चिन्ह तपेदिक़ का विष उस घर में छोड़ गई। जिससे कई जवान लड़कियाँ तपेदिक़ से मर गईं। पुरुषों की बैठक भी बाहर रहती है तथा काम-काज के कारण उनका बहुत सा समय ताज़ी हवा में कटता है· परन्तु, स्त्री बेचारियाँ

दिन-रात घरों ही मे बन्द रहती हैं । उनमें जो अधिकतर रोगी होती हैं वे तपेदिक के कारण ही होती है। वर्षों तक तो उनको बीमारी केवल खाँसी या बुखार समझी जाती है। जब दुर्बलता बहुत बढ जाती है तब वैद्य अथवा हकीम बुलाया जाता है। लज्जा के कारण वे अपना पूरा हाल इनसे नहीं कहतीं अथवा वह अपने रोग की विशेष बातों को समझती ही नहीं हैं। चिकित्सक नाडी देखकर जितना अनुमान लगा सकता है उस के अनुसार औषधि देता है। जब एक से आराम नहीं होता तब दूसरा बुलाया जाता है। बीमारी क्रमशः बढ़ती जाती है। हमारे घरों में लोग जहाँ चाहें थूक देते हैं। रोगी भी ऐसा ही करता है। चारपाई के आस-पास खकार पडी रहती है और उस पर मक्खियाँ भिनभिनाया करती हैं। जो किसी को यह अच्छा न लगा तो उस पर कुछ धूल डाल दी। समझना चाहिए कि तपेदिक वाले बीमार की खकार में रोग के कीडे भरे रहते हैं। यदि इसमें से जरा सा लेकर और एक काँच टुकडे पर चुपड कर ख़ुर्दबीन शीशे से देखा जाय तो उनकी कैफीयत खुले। सभ्य देशों में थूकना बहुत बुरा समझा जाता है। हमारी सभ्य गवर्नमेंट ने हमारी बुरी आदत सुधारने के लिए यह नियम कर दिया है कि सर्कारी दफ़रों, डाकखानों और रेलगाडी के कमरों में कोई न थूके। मौक़े-मौके पर साइनबोर्ड टँगा देखने में आता है जिन पर लिखा होता है— "थूकना मना है"। यह न समझना चाहिए कि तपेदिक के

बीमारों का ही थूक भयानक है। नहीं, प्रायः सब ही के मुँह में हवा के साथ रोगोत्पादक कीड़े आते-जाते रहते हैं। तन्दुरुस्त मनुष्य में इनका कुछ असर नहीं होता; परन्तु, दुर्बल मनुष्यों को रोग का कारण होते हैं।

तपेदिक़ की बढ़वारी रोकने के लिए बड़े बडे डाक्टरों ने निम्नलिखित उपदेश दिये हैं :—

(१) थूकने की आदत छोड़नी चाहिए। (२) जिन लोगों को यह रोग हो गया हो उन्हें सर्वदा ऐसे गमले में थूकना चाहिए जिसमें पानी और उसका पचमांश कार्बोनिक ऐसिड मिला हुआ पड़ा हो। (३) छोटे-छोटे घरों में बहुत से आदमी न रहा करें। (४) शरीर का पालन पुष्ट पदार्थों-द्वारा होना चाहिए। (५) घर रहने के लिए वे ही काम में लाए जायँ जिनमें ताज़ा हवा और धूप का आवागमन रहता हो। दीवारों में खिड़कियाँ हों और वे रात को भी खुली रहें। (७) फ़र्श पक्का हो तो बहुत अच्छा इसमें गर्द नहीं होता। (८) मक्खियाँ न होने पावें (९) कच्चा दूध कदापि न पिया जाय।

मक्खियों के सम्बन्ध में एक विद्वान् ने परीक्षा की है और फल निकाला है कि तपेदिक़ रोग के फैलाने में ये भी सहायता देती हैं। रोगी को खकार पर बैठकर ये उसको खा लेती हैं और उससे उनको कुछ नुक़सान नहीं होता। परन्तु, इनके पेट में जाकर रोग के कीड़ों की बढ़वारी और भी विशेष हो जाती है। जिस पदार्थ के

ऊपर ये मल करती हैं उसके ऊपर ये कीडे अपना रोगोत्पादक भय लिए विद्यमान रहते हैं और उस पदार्थ को जव मनुष्य खाने-पीने के काम में लाता है तव आँतों में क्षयी का रोग पैदा हो सकता है। यही वात ध्यान में रखकर अंगरेजी फौज में इस वात की चेष्टा की जा रही है कि भोजनशाला और दुग्धशाला के सव दर्वाजे और खिडकियाँ तारों की जाली से वन्द रहें। उनमें होकर एक भी मक्खी भीतर न जा सके। फल इसका वहुत अच्छा हुआ है। तपेदिक के सिवाय मक्खियों द्वारा और भी कई रोग फैला करते हैं। वे भी अव वन्द से होगए हैं। छावनी में मल-मूत्र त्याग के स्थान वने हैं, उनमें अव ऐसा प्रवन्ध है कि मक्खियाँ विल्कुल नहीं होने पातीं। सव मल-मूत्र आग में जला दिया जाता है। मलत्याग के गमलों में ऐसी औषधि डाल दी जाती है कि न वदवू उठती है, न मक्खियाँ आती हैं।

यह सन्देह किया गया है कि क्षयी का रोग गौ को भी होता है और गौ से दूध द्वारा मनुष्य को हो सकता है। इस सम्वन्ध में यह भी कहा जाता है कि जव दूध दुहा जाता है तव गाय के थनों पर लिपटे हुए मल का अंश दूध में मिल जाता है और इस मल में क्षयी के कीडे हो सकते हैं। गोवर में क्षयी के कीडे वहुत वढा करते हैं और यही गोवर थनों से लिपट जा सकता है और दुहते समय वही दूध में मिल कर रोग का कारण होता है। इस भय से वचने का उपाय यही है कि दूध कच्चा कभी

न पिया जाय। पीने से पहले उसे सर्वदा उबाल लेना चाहिए। मेरा भी निज का विचार ऐसा है कि कच्चा दूध हानिकारक है। गोबर से लीपने का हमारे घरों में बड़ा प्रचार है, परन्तु, गोवर से वही जगह लीपनी ठीक होती है जिसे धूप आकर तत्काल सुखा दे। जहाँ धूप का गुजर नही वह जगह गोवर से लीपना ठीक नहीं है क्योंकि परीक्षा से ऐसा पाया गया है कि गोवर में क्षयी के कीड़े बढ़ा करते है। रसोई घर को मट्टी से पोतना ठीक है। यदि फ़र्श पत्थर का हो तो सफ़ाई भी ख़ूब रहे और रोग का भय भी न रहे।

कुछ पुरुष-स्त्रियों की शारीरिक बनावट ऐसी है कि उस पर रोग का आक्रमण बहुत शीघ्र होता है। ऐसे लोगों का हुलिया कहते हुए बताया गया है कि उनका क़द लम्बा, शरीर दुबला-पतला, हड्डियाँ अलग-अलग गिनी जा सकती हैं। चेहरा छोटा सा और ख़ूबसूरत, रंग साफ़ तेज़ और चमकती हुई आँखें, बडी-बड़ी पुतलियाँ होती हैं। खाल बहुत मुलायम और नाज़ुक जिसमें से नीली रगें और नसें साफ़-साफ़ दिखाई देती है। रेशम के लच्छों के समान हलके और बारीक बाल होते हैं। सीना (छाती) छोटा, तङ्ग और चपटा होता है। ऐसे लोगों को जब किसी कारण से तन्दुरुस्ती बिगड़ जाय तो क्षयी होने का बड़ा डर है। परन्तु यदि, अच्छा भोजन मिले, खुली हवा में काम-काज करें, व्यायाम जारी रक्खे और खुली जगह में सोवें तो उनकी आरो-

श्यता में कोई वाधा नहीं पड़ सकती। जब पुष्टिकारक पदार्थ खाने को न मिले अथवा आमाशय के विगाड से वे उनको पचा न सकें तो फिर शरीर का पालन ठीक-ठीक नहीं होता। बड़े-बड़े शहरों की तङ्ग गलियों में रहना पड़े तो वह बड़े दुर्भाग्य की बात है। बहुत से घर ऐसे बने होते हैं कि यदि उनका दर्वाज़ा बन्द कर दिया जाय तो वे मनुष्य के लिए जीते जी समाधि बन जाते हैं। स्त्रियों को ऐसे घरों में दिन-रात रहना पड़ता है। पहले उनकी तन्दुरुस्ती विगड़ती है, फिर क्रमशः दुर्बलता बढ़ने लगती है। यदि उसका शीघ्र प्रतीकार नहीं होता तो तपेदिक़ के कीड़े उनके फेफड़ा में आ बैठते हैं। जो लोग दिमाग़ी काम बहुत करते हैं, जिनको रात-दिन सोच-विचार घेरे रहते हैं अथवा अपने किसी प्रिय सम्बन्धी की मृत्यु से शोकित रहते हैं उनको तपेदिक की बीमारी होजाना आश्चर्य की बात नहीं है।

लड़कियाँ जबतक अपने माँ-बाप के घर रहती हैं ख़ूब खेलती-कूदती और भीतर-बाहिर जाती-आती रहती हैं। उन्हें घूँघट मारने और परदे में बैठने के लिए लाचार नहीं होना पड़ता। परन्तु, विवाहोपरान्त जब सासरे में पहुँचती हैं तब उनकी दिनचर्य्या एक दम बदल जाती है। प्रारम्भ में कभी ज्वर होता है अथवा ज़ुकाम बिगड़ता है। कमजोरी बढ़ जाती है, घर का सारा काम अपने हाथों करना नई वहू की नामवरी का कारण होता है। अपनी कमजोरी तथा क्षुधा न लगने की बात वे शरम के मारे किसीसे नहीं कहतीं। दुर्बलता में परिश्रम

किए जाना बड़ा भयानक है। अन्त में उनको तपेदिक़ रोग ही हो जाता है। बाल्य-विवाह इस रोग का बड़ा कारण है। घर के भीतर मट्टी के तेल का दीपक जला कर उसकी रोशनी में सोना बहुत बुरा है। छाती झुका कर काम करना रोगोत्पादक है। गर्द-ग़ुबार में रहना फेफड़ों को कमज़ोर कर देता है। जिन घरों में सील रहने के कारण तरी बनी रहती है ऐसे घरों में रहनेवालों में क्षयी के रोगी अवश्य पाये जाते हैं।

ऊपर जो कुछ लिखा गया है उस पर ध्यान रखने से केवल क्षयी रोग से ही रक्षा नहीं मिलती, वरन् साधारण स्वास्थ्य में भी बहुत सुधार होता है। ताज़ा हवा के लाभों का समझाना इस पत्र का प्रधान उद्देश्य है।

चर्म-रोग

पत्र न० ३—

खाज रोग का देहातों में मौजूद रहना—खाज से बचने के लिए देवता पूजना—खाज के कीड़ों का वर्णन—रोग पैदा होनेका क्रम—खाज की चिकित्सा—छूतदार रोग—दाद का वर्णन—कोढ़ रोग और कुष्टाश्रम।

हमारे गाँव के आस-पास जितने गाँव हैं उन सब में मैंने देखा है कि परिवार के परिवार चर्म-रोग से पीडित हो रहे हैं। हमारे गाँव में भी कई ऐसे रोगी हैं जिन्हें खुजला ने तंग कर रक्खा है। खुजली का प्रचलित नाम खाज है। तुमको यह जान कर बहुत बुरा मालूम होगा कि तुम्हारे बड़े भाई भी इस व्याधि को कहीं से ले आये हैं। महीनों तक तो उन्होंने कुछ पर्वाह ही नहीं की, परन्तु, जब क्लेश बढ़ गया तब कहना पड़ा। अब जब अच्छे प्रकार चिकित्सा की गई है तब रोग से मुक्त होने की आशा हुई है।

हमारे देश में ऐसे कम बच्चे निकलेंगे जो यह कह सकें कि उनको खाज कभी नहीं हुई। अभी तक हमारी स्त्रियाँ यह नहीं जानतीं कि खाज एक छूतदार रोग है। वे खाजवाले बच्चों को दूसरे बच्चों के साथ मिलने देना बुरा नहीं समझतीं। उनका ख़याल बिल्कुल उलटा है। वे जानती हैं कि जो बच्चे अन्य खाज

वाले वच्चों से परहेज़ करते हैं उनको ही खाज का रोग लगता है। वे समझती हैं कि इस रोग का भी कोई देवता है और जो कोई उस से घृणा करता हैं वही उसका कोपभाजन होता है। तुम शायद नही जानती होगी कि हमारे इस मथुरा जिले ही में ऐसे देवता का स्थान है और प्रतिवर्ष उसका वडा भारी मेला लगता है। उस देवता को "स्वामी वावा" कहते हैं। जव घर में सव को खाज हो जाती है तव मिन्नत माँगी जाती है कि—"स्वामी वावा ! जव सव अच्छे हो जायँ तव तेरी जात करेंगे।" ऐसा भी विश्वास है कि देवता के पास वाले तालाव में स्नान करने वालों को फोडा-फुंसी का डर नही रहता। प्रति वर्ष हमारे गॉव से वहुत सी स्त्रियाँ स्वामी वावा की जात को जाती हैं।

तुमसे शायद मै इस वात की चर्चा पहले भी कर चुका हूँ कि खाज के रोग को उत्पन्न करनेवाले एक प्रकार के कीड़े हैं। यह कीडा आँखों से तो मुश्किल से दीखता है; परन्तु, खुर्दवीन शीशे से इसका पूरा रूप दिखाई देता है। एक इच में १४० कीड़े रक्खे जा सकते हैं। एक कीडे की उमर दो महीने है। एक समय में कीड़े की मा ५० अंडे देती है और खाल के नीचे नाली वनाकर रहती है। ध्यानपूर्वक देखने से यह भली, काली-काली, पतले वाल जैसी दिखाई देती है। नाली के सिरे पर अंडे-वच्चों समेत माता निवास करती है। ऊपर के चर्म पर फुंसी पैदा हो जाती है और उसमें पीप पड़ जाती है। अंडे पक कर नये कीड़े पैदा हो जाते हैं और वे नये-नये घर वनाते हैं। इन कीडों का

रग सफेद होता है और गोल शरीर मे ८ टाँगे होती है। खुजली कई प्रकार की होती है। कभी तो खाली खुजली ही होती है और फुंसी एक भी नहीं जान पडती। कभी-कभी इतने जोर की खुजली होती है कि बीमार लोहू-लुहान कर डालता है। हाथों की घाइयों और पैरों की उँगलियों के बीच में इस रोग का होना विशेष कर देखा जाता है। कलाई पर भी इसकी फुसियाँ उठती है।

जिन कीडों की ऊपर चर्चा की गई है उनके द्वारा ही यह रोग एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचता है। ऐसे रोगी का स्पर्श जब अच्छे-भले बालकों को होता है तब दूसरों को भी खुजली का रोग हो जाता है। हाथ से हाथ मिलने अथवा कपडों के मिलने से इस रोग का होना सम्भव है। तुम्हारे भाई का कहना है कि उनकी क्लास में शहर का एक लड़का खाज लेकर आया था और उसके द्वारा उसके पास बैठनेवाले कई लड़कों को खाज हो गई। मुझको याद है कि एक बार पलटन के एक सिपाही को खुजली हुई थी। फिर उस बारक में जितने सिपाही थे सब में खुजली फैल गई। स्पर्श होने के ४-५ दिन पीछे ही इस रोग के लक्षण देखे जाते हैं। गोद के बच्चों को यह रोग जाँघों से प्रारम्भ होता है क्योंकि गोद लेते समय यही स्थान शरीर से स्पर्श करता है। अन्य बच्चों की जाँघों में भी यह रोग हो जाता है। उनके हाथों से वहाँ फुसियाँ पैदा होती हैं। पहले जो फुंसी उठती है वह साफ़ पानी से भरी हुई होती है। परन्तु, वही फिर

बढ़कर पीली पीपवाली हो जाती है। इस रोग की फुंसियाँ ऊपर ही ऊपर होती हैं, चमड़े में गहरी नहीं होवीं जैसे फोड़े में होता है। ये फुंसियाँ जब छिल जाती हैं तब उसके चारों ओर लाली फैल जाती है और जलन मालूम होने लगती है। छोटे छोटे बच्चों को इनकी पीड़ा बहुत बुरी जान पड़ती है और वे बहुत रोते हैं। अधिक फुंसियाँ हो जाने से उनको ज्वर हो जाना भी सम्भव है।

इस रोग की चिकित्सा उन लोगों के लिए कुछ भी कठिन नहीं है जो इसके मूल कारण को समझे हुए हैं। अर्थात् जो इस बात को जानते है कि खाज एक प्रकार के कीड़ों के कारण होती है। बच्चों की चिकित्सा के लिए उनकी माताएं चिन्तित तो बहुत रहती हैं। जो कोई उन्हें टोना-टोटका करने को कहता है उसे ही करती हैं और इस पर भी जब बीमारी नहीं जाती तथा घर में और बच्चों को खाज होती जाती है तब उनको बड़ी घबराहट होती है। इस रोग की चिकित्सा कुछ भी कठिन नहीं है। सब से ज़रूरी बात यह है कि बच्चा जो कपड़े पहनता है वे सब उतार कर उबाल डालने चाहिए और बच्चों को गर्म जल से स्नान कराकर उसके हाथों को तथा उन स्थानों को जहाँ पर फुंसियाँ हैं साबुन के सहारे ख़ूब साफ़ करना चाहिए और तब उन फुंसियों के ऊपर गंधक का मरहम लगा देना चाहिए। गन्धक इस रोग के कीड़ों का काल है। तेल अथवा किसी अन्य चिकनाई के साथ गन्धक जब शरीर पर लगाया जाता है तब

उसमें से एक ऐसी बू पैदा होती है कि खाज के सब कीड़े मर जाते हैं। जो कपड़े बच्चा पहनता है और ओढ़ता-बिछाता है उनको उबाल डालने से यह सन्देह नहीं रहता कि रोग का अंश कपड़ों के द्वारा शरीर पर फिर फुंसियाँ पैदा करे। जाड़े के दिनों में ओढ़ने-बिछाने के लिए चद्दर का व्यवहार करना चाहिए और उसको उबाल कर सुखा लेना चाहिए। कपड़ों के उबालने का काम स्त्रियों को एक झंझट मालूम हो सकता है; परन्तु, अपने बच्चे की आरोग्यता तथा अन्य बच्चों को इस रोग से बचाने के लिए यह कष्ट अवश्य स्वीकार करना चाहिए।

१ हिस्से गन्धक को ७ हिस्से नारियल के तेल में मिलाने से मरहम बन जाता है। बड़े शहर में गन्धक का मरहम शुद्ध गन्धक को वैसलीन के योग से बनाना अच्छा है। फुंसियों को धोने में तकलीफ हो तो बीस मिनिट गरम पानी से भीगा रक्खे। हाथों को गरम पानी में डुबावें। पश्चात् फुंसियों के ऊपर मरहम लगा दें। सब शरीर पर मरहम का उबटन कर देना बुरा नहीं है केवल सिर और मुंह को छोड़ दें क्योंकि इन जगहों पर खाज की फुंसियों के होने का भय नहीं है। हो सके तो दिन में दो-तीन बार मरहम का व्यवहार किया जाय। तीन दिन तक इसी प्रकार मरहम लगाने के पीछे चौथे दिन गर्म जल और साबुन के साथ स्नान किया जाय। कपड़े सब नये पहराये जायँ। ऐसा करने से निश्चय ही रोग नष्ट हो जाता है। पिछले वर्ष लड़की जयदेवी जब गाँव से

आई थी तब उसके खाज हो रही थी। उसको इसी प्रकार तीन दिन करने से वह बिल्कुल आरोग्य हो गई। इससे पहले न जाने वह कितने दिन से तकलीफ़ पा रही थी।

जब बड़े आदमी के खुजली हो जाय तब वे रात को मरहम का व्यवहार कर सकते हैं क्योंकि दिन-रात घिरा रहना उनके लिए सुविधाजनक नहीं हो सकता।

एक और दवाई है जिसका तैयार करना कुछ कठिन नहीं है, इसके व्यवहार से एक ही दिन में खाज का राज नष्ट हो जाता है। पाव भर बुझा हुआ चूना और आध पाव उड़ाया हुआ गन्धक लेकर ५ सेर पानी में मिला कर उबाल लें, आध घण्टे तक उबाल आता रहे तब उसे नीचे उतार कर ठंडा होने दें। जब खूब ठंडा हो जाय तब छान कर काँच या मट्टी के पात्र में ढक कर रख छोड़ें। यह आवश्यक नहीं है कि इतनी ही दवाई तैयार की जाय। छटाँक के बदले तोले के हिसाब से चीजें मिला कर उसी क्रिया से औषध तैयार की जा सकती है। बर्तन के पेंदे में जो दवाई बैठी रह जाय उससे कुछ मतलब नहीं है। केवल पानी को निथार कर छान लें। इस पानी में यह गुण है कि फुंसियों पर लगते ही कीड़े मर जाते हैं। औषध लगाने से पहले जैसा ऊपर कहा गया है उसी तरह से पहले रोग-स्थान को शुद्ध कर लेना परमावश्यक है। जिस साबुन को मुलायम (Soft soap) कहा जाता है उससे धोना अच्छा समझा जाता है। फुरेरी से इस दवा को फुंसियों के ऊपर

लगाना चाहिए। एक बात याद रखनी चाहिए कि जब शरीर में घाव पड़ रहे हों तब यह दवाई लगती बहुत है। अर्थात् जलन जान पड़ती है। कपड़ों को गन्धक की धूनी देकर ऊपर से पहन सकते हैं। इस गधक-चूने के पानी को कई बार लगाना होता है। जब कीडा खाल में भीतर जा बैठता है तब एक बार के लगाने स वह बचा रह सकता है। जलन के डर से अधिकतर लोग मरहम का ही व्यवहार करते हैं। फौजी सिपाहियों को जब खाज हो जाती है तब उनको जो ओढ़ने का कम्बल दिया जाता है उस पर भी मरहम चुपड दिया जाता है। ऐसा करने से रोग के सब कीडे मर जाते हैं।

तुम्हारी माँ का खयाल है कि खाज के रोगी को तेल पीने से बहुत फायदा होता है। गाँव में जब यह रोग किसी घर में बडे-बड़े आदमियों को हो जाता है तब वे तेल पीकर ही इस रोग से छुटकारा पाते हैं। मैं नहीं समझता कि जो रोग साधारण चिकित्सा से अच्छा हो सकता है उसके लिए ऐसी चीज क्यों खाई जाय जो किसी की रुचि के विरुद्ध हो।

एक डाक्टर का कहना है कि जिनको गन्धक की बू अच्छी न लगती हो वे नारियल के तेल में कपूर और चूना मिलाकर लगा सकते हैं। नारियल के तेल में कुनैन मिला कर लगाना भी अच्छा समझा जाता है। आरम्भ में जब कि बहुत फुंसियाँ न हों तो टिंकचर आइडीन फुन्सियों के ऊपर लगा देने से भी आराम हो जाता है। मुझे इसका ख़ुद तजुर्बा है। एक मनुष्य

की घाइयों मे दो-तीन फुंसियाँ उठीं थीं। उसके घर में कई आदमियों को खाज थी। मैंने उसको समझाया कि वह घर में अपना विस्तर और कपड़े अलग करले। शरीर पर जो कपड़े हैं तथा व्यवहार में जो अन्य विस्तर है वे सब उबाल लिये जायँ। उसने ऐसा ही किया। 'फुंसियों के ऊपर टिंक्चर आइडीन लगा दिया गया, फुंसियाँ जहाँ की तहाँ मर गई' और नई नहीं उठी। घर के और बच्चों को इससे इतना लाभ नहीं हुआ। उनको तो जब कई दिन तक मरहम लगाया गया तब ही आराम हुआ।

जो रोग एक शरीर से दूसरे शरोर पर चले जाते हैं वे छूतदार कहलाते हैं। खाज को भी छूतदार रोगों में गिनना चाहिए। जो स्त्रियाँ यह वात समझ लेती हैं उन्हें इस बात की बड़ी चिन्ता रहती है कि एक बच्चे का रोग दूसरे को न लगे। चिकित्सा भी वड़ी सावधानी से करती हैं; परन्तु, जिनकी समझ में यह बात नही आती उनके घर में महीनों रोग रहा करता है। वे यह चाहती तो हैं कि उनका परिवार रोगशून्य रहे, परन्तु, मूल कारण के दूर हुए विना उनकी यह इच्छा पूरी नहीं होती।

खाज के सिवाय और भी कितने ही ऐसे रोग हैं जिनका प्रभाव चमड़े पर ही देखा जाता है; जैसे—दाद। यह रोग दाद वाले रोगी का कपड़ा व्यवहार करने से दूसरों को हो जाता है। मुझे याद है कि वम्बई में दाद का रोग वहुत होता है। मैं कुछ

दिन के लिए एक बार बबई गया था। जिस मकान में हमारा निवास था वहाँ कइ परिवार रहते थे। गुसलखाना सब का शामिल था। एक दिन भूल स मैंने किसी दूसरे मनुष्य की तौलिया से अपना शरीर अँगोछ लिया, फल यह हुआ कि मेरे भी कई चकत्ते दाद के हो गये और फिर बडी मुश्किल से गये। तब से मैंने यह ज्ञान प्राप्त किया है कि दूसरे आदमी की धोती, अगोछा और तौलिया कभी न व्यवहार करना चाहिए। बोर्डिङ्ग हौस में लडके अक्सर अपने साथियों से कपडे बदल लिया करते हैं। स्वास्थ्य-रक्षा के नियमों में यह बात अनुचित बताई गई है।
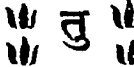
इसी प्रकार उस भयानक रोग की दशा है जिस को कुष्ठ या कोढ कहते है और जो बडे पापों का फल समझा जाता है। अमरीका में जब किसी मनुष्य को कोढ़ होजाता है तब वह बस्ती में नहीं रहने पाता। उन लोगों के लिए बस्ती से दूर आश्रम बना होता है और वे वहीं रहते है, वहीं पर उनकी चिकित्सा होती है। इस प्रकार का नियम होने से कुष्ठ रोग अन्य लोगों को नहीं होता। कुछ समय हुआ एक समाचार-पत्र में छपा था कि अमरीका में कोढियों की सख्या नहीं के बराबर हो गई है। बिना शिक्षा के भारतवर्ष में से रोगों का नष्ट होना बहुत कठिन है।

केश-रक्षा

पत्र नं० ४—

बालों की बहार—बाल का हाल—बालों की रक्षा—बालों का बढ़ाना—फ्यास का रोकना—बाल धोने की क्रिया—तेल लगाना—कंघी और ब्रुश का व्यवहार।

तुम्हारी जीजी को इस बात की चिन्ता लगी रहती है कि तुम अपने सिर के बाल ठीक रखने में कहीं आलस्य न करती हो। हरदेवी के सिर के बाल ठीक रखना भी तुम्हारे आधीन है। मुझे यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि सब लड़कियों को अपने बालों का ध्यान रहता है। वे सर्वदा चाहा करती हैं कि उनके बाल घने, लम्बे और मुलायम हों। जो लड़की अपना सिर ठीक रख सकती है वह और भी काम ठीक कर सकेगी। कहावत है—"केश सिगार—केश जजाल।" जो लडकियाँ आलसिनी हैं उनके लिए सिर के बाल जजाल ही हैं। बालों को संभाल कर रखना इतना कुछ कठिन भी नहीं है। अच्छा अभ्यास डाल लेने से बालों का सँभालना स्वाभाविक हो जाता है।

"बाल की खाल" निकालना एक कहावत है। यह उन लोगों के लिए कही जाती है जो किसी बात के गूढ़-गूढ तत्त्वों की जाँच करते हैं। तुमको आश्चर्य होगा कि विद्वानों ने सचमुच

"वाल को खाल" निकाली है। मै इस चिट्ठी मे इसका पूरा हाल नहीं लिखूंगा, परन्तु, वाल की वनावट पर तुम्हारा ध्यान खींचने की वडी इच्छा है। एक वाल को जड से उखाड कर देखो। साधारण दृष्टि से वह तुम्हारे लिए तार सा है। परन्तु तुम यदि इसे खुर्दबीन शीशे के सहारे देखोगी तो अचरज मे डूब जाओगी। जड की ओर से देखने से तुम्हें जान पडेगा कि वाल पोला है। जड मे लगी हुई जरा सी सफ़ेदी को देख कर तुम समझ बैठती हो कि वाल जड समेत उखड गया। यह तुम भूल करती हो। सिर के चमडे में वाल की जड़ खूब पैवस्त होती है। वाल को झटके के साथ उखाडने से ऊपर नहीं आसकती। जड की दो तह होती हैं। एक ऊपर के चमड़े से पैवस्त रहती है और दूसरी भीतरी चर्म में सटी रहती है। वाल के वाहर की ओर एक छिलका सा लगा रहता है और वाल की भीतरी पोल में रग रहता है और उस रग से ही वालों में रग की झलक आती है। तुमको यह मालूम है कि हमारे गाँव में स्त्रियाँ वालों को खूब कस कर बाँधती हैं और बीच की बडी चोटी को वल देकर जूडा गूँथती हैं। जहाँ तक संभव होता है सिर भी नहीं उघाडतीं। ऐसा करने से वालों की असली शोभा मारी जाती है। डाक्टरी ख़याल तो यह है कि लड़कियों को दिन में कुछ समय के लिए अवश्य अपने केश खोल देने चाहिए। खुले केश से कुछ समय के लिए खुली हवा और ठंडी धूप में फिरना अच्छा है। धूप और वायु से सिर

का चमड़ा शुद्ध होता है तथा चमड़े के आरोग्य रहने से बाल भी ठीक रहते हैं। तुमको अपने बोर्डिङ्ग हौस के हाते मे ऐसा करना कुछ भी कठिन न होगा । मेरा ख़याल है कि जब लड़कियाँ कसरत करती होंगी तब उनके सिर खुले ही रहते होंगे।

जो लडकियाँ अपने सिर के बालों की सेवा नही करती उनके बाल पतले पडकर झडने लग जाते हैं, उनकी चमक जाती रहती है। मैंने इस बात को कई बार देखा है कि हरदेवी के बाल बहुत बुरे और रूखे से रहा करते हैं। कारण यही है कि वह उनकी सेवा नहीं करती। बहुधा ऐसा होता है कि माँ के बाल यदि संभाल कर नहीं रक्खे गये हों तो बेटियों के बाल भी रूखे ही रहते हैं। हाँ, यदि चेष्टा की जाय तो यह दोष दूर हो सकता है।

सिर मे 'फ्यास' बढ जाने से भी बाल कमज़ोर हो जाते हैं। चाँद के चमड़े को तेल से तर रखना भी बुरा है। मैल भी बालों के पालन में बाधा देता है। रोज़-रोज़ सिर को भिगाना, कंघी न करना तथा शरीर में दुर्बलता बढ़ने से भी बालों की चमक चली जाती है। वे झडकर गिरने लगते हैं और सफ़ेद पड़ जाते हैं।

मैं जानता हूँ कि तुमने अपनी जीजी को यह कहते सुना होगा "छोरी! तेरे मूँड में कितनी फ़्यास–भूसी सी है जो

सिर के चमड़े के ऊपर जमी रहती है। तुम नहीं जानतीं कि खोपड़ी के चमड़े में से सर्वदा एक प्रकार का तेल निकलता रहता है, इसीसे बालों में दृढ़ता रहती है। जब किसी कारण से वह तेल निकलना बन्द हो जाय अथवा मैल के कारण छिद्र रुक जाय या प्रतिदिन सिर भिगोते रहने से तेल धुल जाया करे तो चमड़े में खुश्की आ जाती है और उसके ऊपर यही भूसी सी जम जाती है और इसी का नाम फ्यास है। सभव है दूसरे ज़िलों की लड़कियाँ इसको कुछ और कहती हों। सिर में फ्यास होने से बालों की बढ़वारी रुक जाती है। चमक नहीं रहती, सिर बुरा ही दीखता है। इसको दूर रखने का उपाय यही है कि पन्द्रहवें दिन सिर को गरम पानी और साबुन अथवा मट्टी, रीठा आदि से धोया करो और सुखा कर फिर तेल के हाथों से चाँद को चिकनी कर लिया करो। बहुत तेल थोप लेने से सिर मैला रहा करता है। तेल को इतना रगड़ो कि सब भीतर चमड़े में प्रवेश कर जाय।

धोने से पहले सिर को अच्छी तरह खोल लो और देख लो कि बाल उलझे हुए तो नहीं हैं। फिर जब मट्टी या रीठा लगा चुको तब गरम पानी से धोओ। साथ ही खोपड़ी और बालों को रगड़-रगड़ कर इतना धोओ कि सब मैल निकल जाय और साफ पानी निकलने लगे। जब सिर खूब धुल चुके तब उसे साफ़ और ठण्डे पानी से और धोओ फिर पानी को बालों में से भाड़ कर तौलिये से सुखालो। सिर को जितनी जल्दी सुखा

लिया जाय उतनाही अच्छा है। भीगे सिर से काम में लग जाना अच्छा नहीं है। गरम पानी से धोने के बाद ठंडा पानी काम में लाने का फ़ायदा यह है कि फिर ठंड लगने का डर नहीं रहता। बाल सुखाने के समय बरामदे में टहलना या हाते में फिरना बुरा नहीं है।

जब सिर सूख जाय तब तेल का व्यवहार करो और कंघी कर लो। बालों को सँभालने के लिए हमारी ओर कंघी से काम लिया जाता है। परन्तु, यदि इस काम के लिए बुरुश का व्यवहार भी किया जाय तो कुछ बुरा नही है। बुरुश से सिर की खाल सुधरती है, बालों की जड़ें मज़बूत होती हैं तथा बाल बढ़ते, चमकते और घने होते हैं।
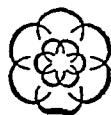
दन्तरक्षा

पत्र नं० ५—

दाँत का दुख—दाँत की बनावट—निकलने का समय और नियम—कैसे दाँत अच्छे होते हैं—स्कूल के बच्चों की दन्तपरीक्षा—शिक्षकों का धर्म—उचित भोजन—दाँतों का धर्म—चाय का दाँतों पर असर—दाँतन अथवा टूथ ब्रुश—दाँत साफ करने की रीति—दाँतों में चोंप ठुकाना—मिस्सी लगाना—पान चबाना—दाँत के कीड़े—दन्त-महिमा।

तुम्हारा भाग्य अच्छा है जो तुमको कभी दाँतों का दर्द नहीं सहना पड़ा। परन्तु, तुम्हारी छोटी बहिन हरदेवी जानती है कि दन्त-पीड़ा कितनी कष्टदायक है। दाँत में दर्द होते समय सिर भी पीड़ित हो जाता है। न खाना खाया जाता है, न पानी सुहाता है। नींद तक नहीं आती। जब साथ-साथ मसूड़ा भी सूजा हो तो मुँह की शक्ल और की और हो जाती है। ये सब क्लेश तुम्हारे सामने हरदेवी भोग चुकी है। भला हो, तुम्हारी प्रधानाध्यापिकाजी का जिन्होंने कृपा करके उसे अस्पताल में भेजने की सुविधा कर दी। परिचर्य्या के लिए टहलनी दी। साथ ही अनेक धन्यवाद हैं उन लेडी डाक्टरानी साहिबा का जिन्होंने दाँत की अच्छी तरह परीक्षा करके निश्चय किया कि दाँत निकम्मा होगया है, जबतक इस को न निकाला जायगा, तबतक रोग न हटेगा। बड़े प्रेम से हरदेवी को सन्तोष

दिलाया और क्लोरोफ़ार्म अर्थात् बेहोशी की दवा सुँघा कर दाँत को निकाल दिया। उसी दिन से हरदेवी की सब तकलीफ़ दूर होगई। यदि वह मुर्दार दाँत न निकाला जाता तो सम्भव था कि एक दाँत के पीछे दूसरे दाँत में यह मुर्दारी पहुँच जाती। दाँत के साथ-साथ कभी जबड़े में भी विकार पहुँच जाता है और ठोड़ी के आस-पास छेद होकर मवाद बहने लगता है।

मनुष्य के शरीर में दाँत बड़ी कीमती चीज है। मुख की सुन्दरता दाँतों से ही है। बुढ़ापे में जब दाँत गिर जाते हैं तब चेहरे की शकल ही और हो जाती है। अपनी दादी का स्मरण करो, जब से उसके दाँत गिर गये हैं तब से उसको दलिया पर ही गुज़र करनी पड़ती है। दाँतों के मुख्यतः दो काम हैं। भोजन और भाषण। सामने के दाँत काटने के लिए बनाये गए हैं, बग़ल वाले फाड़ने के लिए और डाढ़ें पीसने के लिए। मनुष्य के शरीर में दाँत दो बार आते हैं। एक बार बचपन में जिनको दूध के दाँत कहते हैं और दूसरी बार स्यानपन में जिनको पक्के दाँत कहते हैं। पहली बार जब दाँत निकलते हैं तब बच्चों को बड़ा दुःख होता है। दस्त लग जाते हैं, आँखें दुखने आजाती हैं, बुख़ार हो जाता है। दुर्बल बच्चों के तो प्राण तक चले जाते हैं। कारण यह है कि मसूड़ों के ऊपर जो झिल्ली लगी रहती है, दाँत उसको फाड़कर बाहर आता है, इसी से सब तकलीफ़ें बच्चों में देखी जाती हैं। यदि मसूड़े के ऊपर चीरा दे दिया

जाय तब दाँत आसानी से निकल आता है। जब मसूड़ा तना हुआ जान पडे तब बच्चे को अवश्य डाक्टर के पास ले जाना चाहिए।।चीरा लग जाने से बच्चे की सब तकलीफें हट जाती हैं। पक्के दाँतों के निकलने पर ऐसी कुछ तकलीफ़ नहीं होती। दोनों प्रकार के दाँत कब-कब निकला करते हैं इसका जानना सब किसी को आवश्यक है:—

दूध के दाँत—

सामने के बीच वाले दाँत—निचले वाले छठे महीने, ऊपर वाले ७ वें महीने।

सामने के शेष दो-दो दाँत—ऊपर वाले ६ वें महीने, निचले वाले १०वें महीने।

पहली दाढ़—बारहवें महीने।
कीलरे—१८ वें महीने।
दूसरी दाढ़ें—२, वर्ष में।
दूध के दाँत हर जबडे में २० होते हैं।

पक्के दाँत—

पहली दाढ	६॥	वर्ष की उमर में
सामने वाले बीच के दाँत निचले	७	"
सामने वाले बीच के दाँत ऊपर के	८	"
सामने वाले शेष दाँत	६	"

पतली दाढ़ पहली	१० वर्ष की उमर में
पतली दाढ़ दूसरी	११ "
कीलरे	१२ "
दूसरी दाढ़ें	१३ "
अक़ल दाढ़	१७ से २५ वर्ष तक

की उमर में अथवा और भी पीछे।

पक्के दाँत कुल ३२ होते हैं। १६ ऊपर और १६ नीचे।

अच्छे दाँत वे गिने जाते हैं जो मुख में अलग-अलग रहते हैं अर्थात् छिरछिरे दाँत ठीक होते हैं। कारण यह है कि ऐसे दाँत सरलता से साफ़ किये जा सकते हैं। जो दाँत अन्य दाँतों से भिडे हुए और ठसे हुए रहते हैं उनमें कीडा आसानी से लग जाता है। जहाँ दो दाँत मिलते हैं वहाँ दरार सी होती है, उस में मैल भर जाता है और उसको निकालना कठिन होता है। बच्चों को बडे फल चबाने का अभ्यास करना अच्छा है। यदि बचपन से ही चबाने की मश्क की जायगी तो जबड़े चौडे होंगे और उनमें के दाँत घिस-पिस कर न निकलेंगे। जब मुँह की हड्डियाँ छोटी होती हैं तब दाँतों को पूरी जगह नहीं मिलती, यही कारण उनके पास-पास होने का है। जिस तरह परिश्रम करने से शरीर के अन्य अंग यथा, हाथ-पैर मोटे होते हैं, उसी तरह चबा-चबा कर फलादिक खाने से जबड़ों का आकार बढ़ता है। जो बच्चे ऐसा नहीं करते उनके मुँह पिचके से रह जाते हैं।

एक डाक्टर की सलाह है कि जिस तरह सर्कार स्कूल के बच्चों को जिमनास्टिक अर्थात् वर्जिश सिखाती है, लड़कियों के लिए भोजन बनाना सिखाने का जितना ध्यान है उतना ही ध्यान उनके मुख शुद्ध रखने पर रखना चाहिए। परीक्षा के बाद जाना गया है कि जिन बच्चों के दाँत मैले और मुँह बदबूदार रहता है वे बच्चे अपने दर्जे में सर्वदा नीचे रहा करते हैं। जो लड़कियाँ ट्रेनिंग में पढ़ती हैं उनको इस बात पर अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि वे दाँतों की सफाई के लाभों को खूब समझें और अपने दाँत स्वच्छ और मुख शुद्ध रखकर अपने दर्जे की लड़कियों को ऐसा ही करने का उपदेश देती रहें। उनको समझना चाहिए कि कहने के लिए तो दाँत हाड़ के हैं; परन्तु, इनका मूल्य सुवर्ण से भी बढ़ कर है। जब दाँत बिगड़ जाता है तब उसके छिद्र में सोना भरने से ही काम चलता है। बोर्डिंगहौस में जो लड़कियाँ भोजन बनाती हैं, उनको ऐसी चीजें कभी न पकानी चाहिए जिनसे दाँत खराब होते हैं। उनको साग-सब्जी खाने का ही अधिकतर अभ्यास रखना चाहिए। मिठाई से परहेज रखना दाँतों के लिए बड़ा उपकारी है। जो पैसे वे मिठाई पर खर्च करना चाहती हैं उसे वे फलों पर किया करें।

यह तो तुम जानती हो कि दाँतों का काम क्या है। सामने वाले दाँत काटने का काम करते हैं और दाढ़े चबाने का। जब मुँह में खाने का पदार्थ जाता है तब तत्काल थूक आने लगता

है और थूक की सहायता से दाढ़ें उसे पीसने लगती हैं। थूक में यह गुण है कि जब वह खाने के पदार्थ के साथ अच्छी तरह से मिल जाता है तब उदर अर्थात् पेट (जिसको आमाशय भी कहते हैं) बहुत सरलता से भोजन को पचा सकता है। जो लोग थूक के बदले पानी से काम लेते हैं वे भूल करते हैं। ऐसी चीज़ें कभी न खानी चाहिए जिनके लिए मुंह से ख़ूब थूक न निकले। अभ्यास बढ़ाने से बिना पानी पिए भोजन किया जा सकता है।

अभी तक हिन्दुओं में चाय का रिवाज़ नहीं चला है, परन्तु, अँगरेज़ों की नक़ल करनेवाले अब चाय का व्यवहार बहुत करने लग गए हैं। विलायत में तो चाय पीने का समय निश्चित है और प्रति मनुष्य वर्ष दिन में ढाई-तीन सेर चाय पी जाता है। अँगरेज़ों में साधारण लोग भी वर्ष दिन में मन भर चीनी थोड़ी-थोड़ी कर के चाय के साथ पी जाते हैं। चाय के साथ बिस्कुट खाने का रिवाज़ है। बिस्कुट दाँतों के लिए बड़े हानिकारी हैं क्योंकि वे बहुत महीन आटे के बनते हैं और दाँतों की दरार में उनका आटा अटक जाता है तथा सड़ कर दाँतों को ख़राब करता है।

विलायत में दाँतों को साफ़ करने के लिए ब्रुश काम में लाया जाता है। जिस को टूथब्रुश कहते हैं, यह तुमने अवश्य देखा होगा। लकडी के या हाथी दाँत के दस्ते में एक प्रकार की घास लगी रहती है जिसके रेशे बड़े मजबूत होते हैं और

वाल से जान पडते हैं इनके सहारे से दाँतों को रगड कर शुद्ध किया जाता है। हमारे देश में ब्रुश के वदले "दाँतन" करने का कायदा है। फायदा दोनों का एक सा ही है। वैद्यक जानने वाले उपदेश करते हैं कि दाँतन १२ अंगुल लम्बी हो, जिसकी लकडी मुटाइ में छोटी उङ्गली के सदृश हो। गाँठ-गठीली और टेढ़ी-मेढ़ी न हो। जहाँ तक मिल सकें वहाँ तक ताजा दाँतन काम में लानी चाहिए और यह भी देख लेना चाहिए कि लकडी गूदे वाली न हो। जब ताजा दाँतन का मिलना कठिन हो, तो, सूखी दाँतन को ही वारह घंटे के लिए पानी में भिगो कर नरम कर लेना चाहिए। ववूल और नीम की लकडी अच्छी है। सिरा एकसा कटा हुआ होना चाहिए। पहले सिरे को चवा-चवा कर कूँची बनावें। यदि दाँतों में इतनी शक्ति न हो अथवा दुखते हों तो कूँची कूट कर तैयार करे। इस कूँची के सहारे प्रत्येक दाँत को चारों ओर से घिस कर साफ करें। विशेष कर दो दाँतों के वीच को ख़ूव साफ करना चाहिए, उनके वीच में कुछ भी मैल शेष न रहे। आक, करजा, कुटकी, अनार, कदंव, आम-चम्पक, सिर्स और मौलसिरी आदि वृक्षों की लकड़ी से भी दाँतन बनाई जा सकती है। दाँतन कर चुकने के पीछे स्वच्छ जल से इतने कुल्ले करने चाहिए कि मुख में पूरी सफ़ाई हो जाय। स्मरण रखना चाहिए कि दाँतों के वने रहने में अनेक लाभ हैं। इच्छानुसार भोजन मनुष्य तव ही कर सकता है जब उसके दाँत ठीक हों। दाँत विगड जाने से वहुत चीज़ों के

लिए तरसना पड़ता है। इसका असर तन्दुरुस्ती पर भी पड़ता है। मुँह का भाषण भी दाँतों पर ही निर्भर है। पोपलों की बोल-चाल जैसी होती है उसकी नक़ल बहुत सी लड़कियाँ कर सकती हैं।

तुमसे यह बात छिपी नहीं हैं कि गहने के लिए नाक-कान छिदाना एक साधारण बात है, यह तो कुछ कष्ट ही नहीं, परन्तु, ऐसी स्त्रियाँ भी हैं जो अपने दाँतों में भी गहना पहनती हैं। मथुरा में मैं अनेक स्त्रियों को देखता हूँ जिनके सामने के दाँतों में सोने की कील जड़ी हुई है अथवा पूरा दाँत सोने की चोंप से ढका हुआ है। उनकी धारणा है कि जब वे बात-चीत करती है तब उनके दाँतों का सुवर्ण उनके मुख की शोभा को बढ़ा देता है। अनेक पुरुष भी सामने के दाँतों में सोना जड़वाते हैं। यह भी कहा जाता है कि मुँह में सोना रहने से मुँह कभी जूठा नहीं रहता, सदा पवित्र रहता है, वे जो जल पीते हैं वह गंगा जल के समान पवित्रता देने वाला है। ख़ैर, धर्म की ख़ातिर सोना मुँह में रखना तो दूसरी बात है; परन्तु, मुँह की शोभा बढ़ाने के लिए ही अधिकतर चोंप लगाई जाती हैं। मैंने सुना है कि जब सुनार दाँत में छेद करके उसमें कील ठोकता है तब कभी-कभी दाँत ही टूट जाता है। कई दिन तक बड़ा कष्ट रहता है। कील यदि गहरी ठुक जाय तो वह दाँत को भी निकम्मा कर देती है। संभव है कि तुम्हारे स्कूल में चोंप वाली कोई लड़की न हो, परन्तु, मथुरा में तुम्हें सैकड़ों स्त्रियाँ मिलेंगी।

मुँह की शोभा बढ़ाने के लिए दाँतों के ऊपर एक अत्याचार और होता है अर्थात् उन पर मिस्सी मली जाती है। जब काली-काली मिस्सी दरारों में भर जाती है तब दाँत अजब तरह के दिखाई देते हैं। शौक़ीन लड़कियाँ अपने उन दाँतों को देखकर भले ही सिहाती हों, परन्तु, विद्वान्, समझदार और सुशील लड़कियाँ अपने दाँतों को तथा मुंह को कभी काला करना पसन्द नहीं करेंगी। मिस्सी का रिवाज अब उठता जाता है। शुद्ध दाँतों में जो सौंदर्य है वह दाँतों को रंग लेने से कभी नहीं रहता। इसी अवसर पर मुझे एक और बात स्मरण आई है अर्थात् पान खाना। पान खाने वालों के दाँत बहुत ही ख़राब हो जाते हैं। जब पीड़ा अधिक उठती है तब वे पान के साथ तमाकू खाने लगते हैं। रात-दिन मुँह चला करता है। थूकते-थूकते घर के फ़र्श को भी बिगाड़ देते हैं। हम आज कल जिस घर में रहते हैं, उसमें पहले एक मुसलमान सज्जन रह गए हैं। उनकी घर वाली पान खाकर दीवारों पर थूका करती थी। सब दीवार और फ़र्श पर लाल-लाल दाग होगए थे और बड़ी खुरचा-खुरची के पीछे उनके चिन्ह मिटे हैं। हमारी बिरादरी में तो केवल धनी परिवार की स्त्रियाँ ही पान खाती हैं, परन्तु, खत्री और कायस्थ तो प्रायः परिवार के परिवार ही पान का सेवन करते हैं। मुसलमानियों की तो चर्चा करना ही व्यर्थ है। उन्हें तो पर्दे में सिवाय पान खाने के और दूसरा कुछ काम ही नहीं है। मुझे विश्वास है कि तुमने लखनऊ की मुसलमान लड़कियों को देखा

होगा और शायद ही कोई ऐसी लडकी देखी होगी जो पान न खाती हो। पञ्जाब में पानों का इतना प्रचार नहीं है। वहाँ की स्त्रियाँ एक प्रकार की छाल से दाँत घिसती हैं। उससे होट लाल हो जाते हैं। पान की अपेक्षा उसका व्यवहार हानिकारक नहीं है।

जब दाँत निकम्मा हो जाता है तब उसका रंग काला पड जाता है। कभी-कभी दाँतों में छेद हो जाता है। साधारण लोग इसको कीड़ा लगना कहते हैं। उनको निश्चय है कि सच मुच दाँत को कीड़े ने खा लिया है। मैंने कंजर जाति की स्त्रियों को देखा है कि वे दाँत से कीड़े निकाल कर दिखा देती हैं; तुम को जानना चाहिए कि यह सब चालाकी का कर्तब है और कुछ नहीं। बहुतेरी भोली स्त्रियाँ इसको सच समझती हैं और ठगा जाती है। दाँत के नष्ट होने का मूल कारण मुख को साफ़ न रखना है। दाँतों की क़दर तब मालूम होती है जब दाँत नहीं रहते। मैं आशा करता हूँ कि तुम अपनी सहेलियों को भी शिक्षा दोगी और समझाओगी कि वे अपने दाँतों को सावधानी से रक्खें।

साधारण ज्ञान प्रकरण
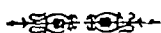
चाय-पान

पत्र नं० ६—

चाय द्वारा मेहमानों की खातिर—चाय का प्रचार—चाय की खेती—उत्पत्ति-कथा—चाय से लाभ हानि—बाजारी चाय—चाय का संग्रह—चाय बनाने की क्रिया—चीन में चाय का प्रचार।

तुम बचपन में हमारे पडोसी मियाँजी के घर उनकी पुत्रियों से खेलने जाती थीं। तुमको याद होगा कि जो स्त्रियाँ उनके यहाँ अन्य घरों से आती थीं बीबीजी उनका बडा सत्कार करती थीं। गर्मियों में उनके लिए बर्फ का शर्बत, लेमोनेड और सोडा लाया जाता था और जाडों में चाय तैयार की जाती थी। पुरुष मेहमानों के लिए भी चाय घर ही में तैयार करके बाहर भेजी जाती थी। मियाँजी के सब बाल-बच्चे, छोटे-बडे चाय के शौकीन थे। उनकी देखादेखी बहुत सर्दी पडने पर शायद तुमने भी अपने घर में चाय बनाई हो। परन्तु, प्रतिदिन चाय-पानी की आदत हमारे यहाँ किसी को नहीं हुई। तुम सब को तो चाय केवल इसलिए रुचती थी कि उसमें अच्छा दूध और खूब मीठा होता था। असली

चाय की ओर तुम्हारा कभी ध्यान नहीं गया। हम लोगों को कभी चाय पीने की आवश्यकता भी मालूम नहीं हुई। कारण यह है कि हमारे संस्कार गाँव वालों के से हैं। गाँव के लोग चाय को औषधि समझते हैं और उसी तरह व्यवहार में लाते हैं तुम्हारी माँ अवश्य थोड़ी सी चाय का संग्रह घर में रखती है। गाँव में जब किसी को ज्वरादिक आजाता है तब वह उसके पास ही चाय माँगने के लिए आता है। जब पसीना आकर बुखार उतर जाता है तब तुम्हारी माँ को आशीर्वाद भेजता है। गाँव में नियमपूर्वक चाय पीनेवाले कहीं कोई विरले ही होंगे। जो लोग कलकत्ता बम्बई से कमाई करके लौटते हैं वे लोग ही कुछ दिन तक शहरों के शौक़ को पालते हैं; परन्तु, काल पाकर फिर जैसों में तैसे मिल जाते हैं। हाँ, क़सबों में पढ़े-लिखे कोई-कोई सज्जन जाडों में चाय पीने लगे हैं, परन्तु, शहरों में धीरे-धीरे ख़ूब प्रचार होता जा रहा है। अब तो खोमचेवाले गरम चाय की पियालियाँ गली-गली वेचा करते हैं। इस मथुरा शहर में भी चाय की कुल्हड़ें बाजार-बाज़ार में मिलने लगी हैं। कुछ ही वर्ष पहले केवल साहिब लोगों के लिए स्टेशन पर चाय तैयार हुआ करती थी, परन्तु, अब तो हर ट्रेन के स्टेशन पर पहुँचने पर आवाज़ आती है—"चाय गरम—चाय गरम"।

पिछले साल जब मैं देहरादून गया था तब मैंने देखा कि यहाँ पर चाय के बग़ीचे कोसों में फैले हुए हैं। चाय की छोटी-छोटी झाड़ियाँ होती हैं। आसाम में चाय के बग़ीचे

बहुत विस्तार से है। इन झाड़ियों में से ही चाय के पत्ते चुने जाते हैं। हजारों कुली चाय के बगीचों में काम करते हैं। भारतवर्ष से चाय बक्सों में भर कर दूर-दूर देशों में जाती है। चीन में भी चाय बहुत होती है और ऐसा विचार किया जाता है कि वहाँ भारतवर्ष से ही चाय गई है। आसाम के जंगलों में चाय अपने आप उपजती है, परन्तु, यह बात चीन में नहीं देखी जाती। चाय की उत्पत्ति के सम्बन्ध में एक अद्भुत कथा कही जाती है। बौद्ध-धर्म के महात्मा उन दिनों भारतवर्ष से बाहिर भी धर्म-प्रचारार्थ जाया करते थे। चीन, जापान तथा ब्रह्मा में जो बौद्ध धर्म फैला है वह भारतवर्ष के महात्माओं के द्वारा ही फैलाया गया है। वे लोग ऐसे थे कि उन्होंने अपनी भूख-प्यास और निद्रा को अपने वश में कर रक्खा था। इन्हीं महात्माओं में से कोई एक थे जो संसार विरागी और अतिशय कठोर आचारवाले साधु थे। वे बहुत कम सोते थे, सर्वदा ज्ञान-चिन्ता में मग्न रहते थे। एक दिन इच्छा न होने पर भी उनको निद्रा ने ऐसा सताया कि उनकी आँखें लग गईं। जब जगे तो उनको बड़ा शोक हुआ और फिर ऐसा न हो इसलिए उन्होंने अपने पलकों का चमड़ा काट कर डाल दिया, जिससे कभी भी उनकी आँखें बन्द न हो सकें। कहा जाता है कि उस चर्म-खण्ड से चाय-वृक्ष की उत्पत्ति हुई है और इसमें यह गुण है कि चाय पी लेने से निद्रा नहीं आती। आज कल ऐसे महात्मा तो दिखाई नहीं पड़ते जो

हरिभजन करने के लिए जागते रहने की इच्छा से चाय-पान करते हों; परन्तु, विद्यार्थियों में ऐसे बहुत हैं जो रात को अधिक जगने के लिए चाय पी लिया करते हैं। मैं जब पढ़ता था तब अपने दो सहपाठियों को देखता था कि वे रात को चाय पीकर १२ बजे तक पढते थे। परीक्षा के दिनों में तो उनका यह दृढ़ नियम था। मैं इस प्रकार के जगने को तन्दुरुस्ती के लिए अच्छा नहीं समझता था और रात को १०-११ बजे से अधिक जगना मुझे बहुत अखरता था।

जिस तरह बौद्ध महात्माओं के द्वारा चाय चीन में पहुँची, यूरोप में भी इसका जाना भारतवर्ष से ही हुआ। मुसलमान बादशाहों के वक़्त में यूरोप से अनेक लोग यहाँ की यात्रा के लिए आते थे और जो चीज़ भारतवर्ष में अनोखी पाते थे उसे वे अपने देश को ले जाते थे। ऐसा निश्चय किया गया है कि ईष्ट इण्डिया कम्पनी के सौदागर चाय को यूरोप में ले गए। यूरोप बडा ठण्डा देश है। वहाँ के लोगों को चाय पान करने से जो हरारत और फुर्ती मालूम हुई उससे वे बड़े प्रसन्न हुए। प्रारम्भ में यूरोप के बड़े-बड़े लोग ही चाय पी सकते थे। इसका बहुत प्रचार करने के लिए आसाम में अँगरेज़ों ने इसकी खेतियाँ प्रारम्भ कीं। इस देश के लोगों की समझ में यह बात नहीं बैठी कि चाय की खेती करके उससे लाभ उठावें। पहले यूरोप में चाय चीन से आती थी क्योंकि चीन वाले ख़ुद चाय पीते थे और चाय को अपने देश में पैदा करते थे।

आजकल आसाम का बहुत चाय यूरोप के देश में जाती है। चाय की खेती हिन्दोस्तान में कई पहाड़ों पर होती है।

परीक्षा करने से चाय के पत्तों में तीन चीजें पाई गई हैं। पहली चीज का नाम केफीन है अर्थात् वह पदार्थ जिसके प्रभाव से मनुष्य के शरीर में फुर्ती आती है। दूसरी चीज का नाम टेनिन है। टेनिन का गुण कब्ज करना है। तीसरी चीज एक प्रकार का तेल सा है जिससे चाय में ख़ुशबू रहती है। इनके सिवाय और भी चीजें हैं, परन्तु, उनका असर चाय पीने वाले पर कुछ नहीं होता। यदि हम पाव भर चाय के पत्ते लेकर ५ मिनिट भिगोवें और फिर उन्हें सुखा कर तोलें तो वे एक चौथाई हलके जायँगे। इससे यह अर्थ निकलता है कि पत्तों का चौथाई अंश पानी में घुल गया। ऊपर जिन चीज़ों का वर्णन किया गया है वे एक दम पानी में नहीं मिल जातीं। सबसे पहले केफीन पानी में घुलती है फिर टेनिन की बारी आती है। खुशबूदार तेल तो गरम पानी में मिलते-मिलते पत्तों से अलग हो जाता है। पत्ते यदि ४० मिनिट गरम पानी में रहें तो फिर चाय का असली जुज जिससे फुरती आती है सब बाहिर हो पड़ता है, उन पत्तों में फिर कुछ बाकी नहीं रहता। केवल वह चीज बाकी रहती है जिसके पानी में मिल जाने का गुण कब्ज होता है। गोरे सिपाहियों के लिए बारहों महीने चाय बना करती है। चाय के पत्ते जिनका असली अंश निकाल लिया गया है फेंके नहीं जाते,

जो नौकर-चाकर यहाँ कुली का काम करते हैं वे इन पत्तों को समेट ले जाते हैं और सुखा कर पंसारियों के यहाँ बेच आते हैं। पंसारी इन पत्तियों में कुछ अच्छी चाय मिला कर फिर वही चाय लोगों के हाथ बेच देते हैं। ग़रीब, भोले आदमी उसी को असली चाय समझ कर व्यवहार में लाते हैं।

बड़े-बड़े शहरों में जो चाय का व्यवहार चल पड़ा है वह ठीक उसी तरह है जैसे लोग तम्बाकू पीते हैं। चाय से भी थोड़ी देर के लिए ज़रा सा नशा होता है। जो लोग परिश्रम करते हैं वे जब थक जाते हैं तब थोड़ा सा विश्राम लेकर एक चिलम तम्बाकू पिया करते हैं। शहरों में तम्बाकू के सिवाय एक प्याला चाय का भी पिया जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि अच्छी चाय मिले तो उसमें कुछ बुराई की बात नहीं है, परन्तु, वे लोग तो अपना उलटा नुकसान कर लेते हैं। ऐसी चाय से तो मनुष्य केवल गरम पानी ही पी लिया करे तो उतना ही असर हो सकता है। सबसे अच्छी बात तो यह है कि थकावट के समय पाव भर गर्म दूध पी लिया जाय। इसमें दोनों लाभ हैं। शरीर में फुरती भी आती है और पेट में दूध जाने से शारीरिक बल की भी उत्पत्ति होती है। बहुत लोगों को चाय पीने की आदत अधिक हो जाती है। फल यह होता है कि उन का शारीरिक अनिष्ट होने लगता है। सिर में दर्द हुआ करता है, घुमेर आ जाती हैं और सोच-विचार कर काम करना उन्हें कठिन हो जाता है। जो विद्यार्थी अधिक पढ़ने की इच्छा से

चाय पीने का बहुत अभ्यास बढ़ा लेते हैं उनका यही हाल होता है।

कलकत्ता और बम्बई में चाय की दुकाने बहुत हैं। किसी बडे बाजार में चलकर देखो; हर दस दूकानों के पीछे एक चायवाले की दूकान मिलेगी। लोगों को ऐसा विश्वास है कि बड़े सवेरे चाय का एक प्याला पी लेने से फिर दोपहर तक कुछ खाने की आवश्यकता नहीं रहती। यह ग़लत खयाल है। चाय के पानी में शरीर पुष्ट करने की तो एक भी चीज नहीं है। जो लोग शारीरिक बल की इच्छा करते हैं वे चाय के साथ बिस्कुट खाते हैं, अथवा डबल रोटी के टुकडे सेक और उन पर मक्खन चुपड कर खा लिया करते हैं। बहुत से साहब चाय के साथ अन्य पदार्थ खाते हैं, ऐसा करने से शरीर को सहारा अवश्य पहुँचता है, परन्तु, केवल चाय से कुछ नहीं होता। असली बात तो यह है कि हमारे देश के लोगों ने जो चाय पीना सीखा है वह अँगरेजों ही की नकल है। मुसलमानों के संसर्ग से इस देश के लोगों ने तम्बाकू पीना सीखा और अब अपने वर्तमान शासक अँगरेजों से चाय पीना सीखा है। हमारे देश में ऐसे बहुत से लोग हैं जो अंगरेजों से भली बात एक भी नहीं सीखते और दिखावटी बातें कई सीख लेते हैं। ऐसे बहुत कम मनुष्य हैं जो उनके समान एकाग्रता, एकता, कार्यतत्परता आदि सद्गुण प्राप्त करने की चेष्टा करते हों। हमारे देश में बनिये का काम सबसे घटिया गिना जाता है। इस काम को भी जिस

उत्तमता से अँगरेज़ करते हैं उस तरह से हम लोग कभी नहीं कर सकते।

चाय पीने का असली कारण बहुत कम लोग जानते हैं। अँगरेज़ों की स्त्रियाँ चाय को जिस उत्तमता के साथ तैयार करती हैं वह बात हमारे देश की स्त्रियों में अभी तक नहीं है। पुराने समय की स्त्रियों को तो चाय की ज़रूरत ही समझ में नहीं आती, अब यहाँ चाय का नया-नया चलन हुआ है। जिस घर में अँगरेज़ी शिक्षा ने प्रवेश किया है वहाँ चाय ने भी साथ-साथ प्रवेश किया है। इसलिए लड़कियों को यह जानना बड़ा जरूरी है कि चाय तैयार करने का असली तरीक़ा क्या है? अब सब घरों में चाय का संग्रह रक्खा जाता है। उचित है कि फुटकर चाय न ख़रीदी जाय क्योंकि उसमें मिलावट का सन्देह हुआ करता है। चाय का पूरा डब्बा लाकर रखना चाहिए। आजकल जिन डब्बों में चाय आती है वे डब्बे बहुत मजबूत बने हुए होते हैं और चाय निकालने का छिद्र ऐसे ढकने से ढका रहता है जिसको सरलता से खोला जा सकता है। चाय के लिए पहली ज़रूरत पानी की है। साफ़ और ताज़ा पानी तत्काल गर्म करके व्यवहार में लाना चाहिए। ऐसा नहीं कि पानी घंटों गर्म होता रहे। बहुत देर तक पानी खौलता रहने से पानी का गुण बिगड़ जाता है और स्वाद मारा जाता है। चायदानी में चाय के पत्ते रख कर उसके ऊपर खौलता हुआ जल डाल कर ५ मिनिट तक उन पत्तों को भीगने दें और फिर

समझें कि चाय तैयार हो गई। ५ मिनट में पत्तों का लाभ-दायक गुण पानी में मिल जाता है। अर्थात् चाय की खुशबू निकल आती है और शरीर को फुर्तीला बनानेवाला पदार्थ पत्तों में से निकल कर पानी में मिल जाता है। ये ही दो चीज़ें हैं जो मनुष्य के लिए गुणकारी हैं। यदि ५ मिनट से अधिक देर तक पत्ते भीगते रहेंगे तो उनमें से कब्ज करने वाली वस्तु पानी में मिल जायगी। देर तक भीगी हुई चाय के पीने से दस्त खुश्क हो जाता है। जो लोग असल बात नहीं जानते वे चाय के पत्तों को बहुत से पानी में उबाल लिया करते हैं। बाजार में जो चाय मिलती है वह इसी तरह की होती है। पानी के एक बर्तन में चाय डाल दी जाती है और वह दिन भर उबला करती है। ऐसी चाय का पीना लाभदायक न होकर हानिकारक हुआ करता है। जिन लोगों को चाय का असली फ़ायदा लेना हो उनको अपने घर पर ही चाय तैयार करनी चाहिए और वही चाय लाभदायक होती है। दुकानदार लोग तो अच्छी चाय भी व्यवहार में नहीं लाते। सवेरे ही एक अंगीठी के ऊपर पानी में चाय के पत्ते मिला कर चढा देते हैं। वह पत्ते उस पानी में उबलते रहते हैं। जब किसी ने चाय माँगी तब उन्होंने वही पानी पियाले में भर कर और उसमें जमा हुआ दूध मिला कर दे दिया। जमा हुआ दूध अँगरेजी में कंडेंस्ड मिल्क कहलाता है। यह दूध रबडी जैसा होता है और टीन के डब्बों में विलायत से आता है। इसके एक भाग में ४ भाग पानी मिलाने से साधा-

रण दूध के समान हो जाता है। चाय में अच्छा दूध मिला कर पिया जाय तो उससे चाय विशेष स्वादिष्ट हो जाती है और उससे फिर क़ब्ज़ होने का डर नहीं रहता।

दस वारह वर्ष के लगभग हुआ कि हिन्दोस्तान से वहुत सी फ़ौज चीन देश को गई थी। राजधानो पेकिंग में डेढ वर्ष के लगभग उन लोगों का निवास रहा था। अँगरेज़ी सरकार ने उनके खान-पान का सब प्रवन्ध इस देश की रीति के अनुसार किया था। केवल इस वात का अन्तर था कि उनको वारहों महीने चाय पीने का आदेश कर दिया था। यह तो प्रत्यक्ष वात है कि लडाई-भिडाई के मौके पर अच्छा पानी मिलना कठिन हो जाता है। जो पानी वहाँ के नदी-नालों और तालावों में मिलता था उससे रोगी होने का सन्देह रहता था। इससे वचने का एक मात्र उपाय यही था कि पानी उवाल कर पिया जाय। सिपाहियों ने चाय का व्यवहार वढ़ा लिया। वे कच्चा पानी नही पीते थे। पानी को वे सर्वदा उवाल कर तथा चाय मिला कर पीते थे। ऐसा करने से हिन्दोस्तानी सिपाहियों का वडा उपकार हुआ। वे अनेक रोगों के आक्रमण से वचे रहे। सर्दी के दिनों में पेकिन की ओर वहुत ही सर्दी पडा करती है। मुँह से जो साँस निकलती है वह भी वाहर निकलते-निकलते वर्फ वन जाती थी। सिपाहियों को पहरे पर खडा होना कठिन हो जाता था। वे चाय के प्याले से हो वचे थे। जव कोई सिपाही पहरे पर खडा होता था तव वह ख़व

चाय पीकर जाता था और घंटा पूरा होते न होते उसके पास फिर चाय पहुँचा दी जाती थी। बहुतेरे मनुष्य ऐसा विश्वास करते हैं कि शराब पीने से भी गर्मी आ जाती है और सर्दी का असर नहीं होता। परन्तु, यह मिथ्या विचार है। शराब पीने से मनुष्य की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। उसे दोस्त-दुश्मन तथा अपने-पराये का ज्ञान नहीं रहता। चाय में यह बात नहीं है। जितने ठण्डे देश हैं उन सब में चाय का चलन पाया जाता है। चीन निवासी क्या अमीर, क्या ग़रीब सब बारहों महीने चाय पीते हैं। गर्मियों के दिनों में इससे बार-बार की प्यास बुझती है और जाड़ों में गर्माई आती है। बड़े शहरों में तो चाय की दूकानों की गिनती ही नहीं; किन्तु, छोटे-छोटे कसबों में भी चाय पीने का प्रबन्ध रहता है। वहाँ लम्बी-लम्बी मेज़ें बिछी रहती हैं, उनके ऊपर प्याले सजे रहते हैं और मेज़ के दोनों ओर बेंच लगे होते हैं। मजदूर तथा अन्य लोग जब काम से फ़ुर्सत पाते हैं तब वहाँ बैठकर चाय पीते हैं, खोमचा खाते हैं। दूकानदारों के यहाँ थोड़ी-थोड़ी देर में ग्राहकों को चाय के प्याले नज़र किये जाते हैं। जैसे यहाँ पान, तम्बाकू का चलन है वैसे ही चीन में चाय पिलाने का दस्तूर है।

विमान

पत्र नं० ७—

हिन्दुस्तान में हवाई जहाज और वैलून—बनाने का मूल मंत्र—शादियों के गुब्बारे—अन्य देशोंमें हवाई जहाज़—उनका इतिहास—युद्ध में हवाई जहाज—उड़ने वालोंको मृत्यु का भय—भारतीय विमान निर्माता— विमानों का प्रचार—लाभ और हानियाँ।

सन् १९१० में जो प्रदर्शिनी प्रयाग में हुई थी उसमें अनेक अच्छी-अच्छी और आश्चर्यभरी चीज़ें एकत्र हुई थीं, उनमें सबसे अधिक कुतूहल-जनक "हवाई जहाज़" था। मै बहुत दिनों से समाचार-पत्रों में वेलून और हवाई जहाज़ों की चर्चा पढ़ा करता था। वेलून तो कई बार देख भी लिया था; परन्तु, हवाई जहाज देखने का अवसर प्रयाग में ही प्राप्त हुआ। कई वर्ष हुए काबुल के अमीर हवीबुल्लाख़ाँ आगरे में आए थे। उनके सामने सर्कार की फ़ौज दल बाँध कर निकली थी। इन फ़ौजों में सफ़रमैना नाम की कम्पनो के पास एक वेलून था। यह तुम जानती हो कि हवा में हलकी चीज़ें ऊपर जाती हैं। वैलून बनाने के लिए वायु के उस अंश का व्यवहार किया जाता है जो सब से हलका है। हाइड्रोजन कहलाने वाली गैस बहुत हलकी होती है। जब उसको गुब्बारे में भर दिया जाता है तब वह हलकी होनेके कारण गुब्बारे को

ऊपर ले जाती है। इस गुब्बारे के नीचे एक बड़ा टोकरा बँधा रहता है जिसमें एक-दो आदमी खान-पान आदि का सामान लेकर बैठ जाते हैं। ऊपर पहुँच कर जब नीचे उतरना हो तब गुब्बारे में से गैस धीरे-धीरे कम कर दी जाती है और वह नीचे आ जाता है। एक प्रकार के छाते के सहारे भी ऊपर से नीचे उतारा जा सकता है। इस गुब्बारे से अधिक लाभ नहीं है क्योंकि वह ऊपर हवा के रुख के अधीन रहता है। जिधर हवा का रुख हो उधर ही वह चला जाता है। हमारे देश में शादियों में गुब्बारे छोड़े जाते हैं। गरम हवा हलकी होने के सबब से ऊपर को उठती है। आतिशबाजी के गुब्बारे इसी कारण ऊपर उठते हैं। कागज का बुर्ज सा बना कर उसके पेंदे में तेल का पलीता जला दिया जाता है जिसकी गरमी से हवा हलकी होकर गुब्बारे को ऊपर लिए हुए उठती है। जब तक कागज में आँच नहीं लगती, तब तक गुब्बारा उड़ा चला जाता है। यह सिर्फ मन को ख़ुश करने का खेल है, इससे लाभ कुछ नहीं है, परन्तु, बेलून से यह फायदा सम्भव है कि आदमी बहुत ऊँचा चढ़ कर, बहुत दूर तक नज़र फैला सके। फ़ौजों में गुब्बारे की मदद से छिपे हुए दुश्मन का पता चलाया जाता है।

गुब्बारे को देख कर चतुर कारीगरों को इस बात का ध्यान हुआ कि ऐसा यन्त्र क्यों न किया जाय जिससे मनुष्य जहाज की तरह आकाश में मनमाना विचर सके। इसी

विचार का फल वह हवाई जहाज था जो प्रयाग की प्रदर्शिनी में उड़ाया गया था। तब तो इस चेष्टा का प्रारम्भ था। अब तो कुछ ही वर्षों में हवाई जहाज़ ने बडी उन्नति की है। यूरोप देश के लोग अपनी बुद्धि के बल से अनेक चमत्कार दिखा कर हम आलसी भारतवासियों को आश्चर्य में डाल रहे हैं। उन लोगों में बहुतों का सिद्धान्त यही रहता है "कार्यं वा साधयेयं शरीरं वा पातयेय" अर्थात् या तो काम को पूरा करूँगा अथवा शरीर को छोड दूँगा। जो कोई किसी काम के लिए दृढ प्रतिज्ञा कर लेता है वह उस कार्य में अवश्य ही सफलता प्राप्त करता है। इतिहास में भी इस बात के अनेक उदाहरण मिलते हैं। महात्मा बुद्ध ने कहा था—वह संसार के रोग-शोक, जरा-दुःख को हटा कर छोडेगा और उसने वही कर दिखाया। विलायत के एक कुम्हार ने यह प्रतिज्ञा की थी कि चाहे वह सपरिवार भूखा ही क्यों न मर जाय, परन्तु, वह चीनी मिट्टी के बर्तन स्वदेश में बना कर ही चैन लेगा, उसने अपनी प्रतिज्ञा पूरी की। जो बर्तन चीन से बन कर आते थे वे उसने स्वदेश में बना कर दिखा दिए।

हवाई जहाज अथवा विमान (व्योम-यान = आकाश की सवारी) के बनाने में सन् १६११ से अब तक जितने धन और जन का नुकसान उठाना पडा है उसका ध्यान करके आश्चर्य होता है। फ्रांस और जर्मन वाले इस काम में अगुआ हैं। रूस अमेरिका, आस्ट्रेलिया, स्पेन, जापान और इंग्लैंड भी इस

धुन में हैं। सब कोई असम्भव को सम्भव कर दिखाने में लगे हुए हैं। विमान बनाने का ज्ञान दिन-दिन बढ़ता जाता है। वह समय दूर नहीं है जब इच्छानुसार चलने वाला जहाज भी बन कर तैयार हो जाय। ये विमान घंटे में अस्सी मील की चाल से चलने वाले होंगे। जिस तरह जहाज और रेल इञ्जन द्वारा चलते हैं उसी प्रकार हवाई जहाज में इञ्जन रहेंगे। सोचा गया है कि एक के बदले दो इञ्जन रहा करें तो अच्छा हो, ऐसा करने से लाभ यह होगा कि यदि किसी कारण से एक इञ्जन बिगड़ जाय तो दूसरे से काम लिया जा सकेगा। तुम को नक़शा देखने से जान पड़ेगा कि फ्रांस और इंगलैंड के बीच में जो समुद्र है उसका नाम इंगलिश चैनल है इस समुद्र को वर्ष में २५ बार विमान द्वारा पार किया गया है। जो विमान इस कार्य में लगे थे वे सब इकहरे इञ्जन वाले थे। आजकल जिस तरह रईस और राजा लोग मोटरकार में सवार होकर सैर करते हैं उसी तरह एक दिन वे लोग अपनी सवारी के लिए विमान रखने लगेंगे।

यह न समझना चाहिए कि विमान केवल शौक की चीज है। यदि यह केवल खेल-तमाशे की सामग्री होता तो शायद आज कल सभ्य समाज इसके लिए इतना उत्साह न दिखाता। कुछ वर्ष में ही हम देखेंगे कि विमान से कितने काम निकलते हैं। जिस प्रकार देश की रक्षा के लिए किले, फौज और फ़ौजी जहाजों की आवश्यकता है उसी तरह सब देश वालों को हवाई

जहाज़ रखने पड़ेंगे। रामायण में तुम पढ चुकी हो कि मेघनाद आकाश में जाकर वाण वरसाता था। वहुतों को इस वात पर विश्वास नहीं आता, परन्तु, वे शीघ्र ही देखेंगे कि ऐसा करना कुछ आश्चर्य की वात नहीं। मनुष्य के मस्तिष्क में एक वड़ी शक्ति है। उस शक्ति के वल से वह अनेक अद्भुत कर्म कर सकता है। जिस तरह एक स्थान से दूसरे स्थान पर आजकल विना तार के तार से ख़वरे भेजी जाने लगी हैं उसी तरह एक दिन आकाश-मार्ग से भी ऐसाही होने लगेगा।

यूरोप में जितने वादशाह हैं वे सव इस चेष्टा में हैं कि उन की फ़ौज अपने-अपने देश की रक्षा के लिए सव तरह से दृढ़ रहे और वे अपने पड़ोसियों से किसी तरह कम न रहें। जव वे देखते हैं किसी दूसरे वादशाह ने विमान वनाने में सफलता प्राप्त की है तव वे भी इसी चेष्टा में लगते हैं। लडाई के लिए जो हवाई जहाज़ तैयार हुए हैं वे तीन तरह के हैं। एक वे हैं जिन पर चढ़ कर और ऊपर पहुँच कर दुर तक चारों ओर दुश्मन की फ़ौज का पता लगाया जा सकता है। ऐसे विमान में केवल दो मनुष्य होते हैं। एक चलाने वाला, दुसरा दुरवीन के सहारे चारों ओर फ़ौज को देखनेवाला। इनमें ऐसे-ऐसे जहाज़ हैं जो घंटे में ६५ मील की चाल से चल सकते हैं। दूसरी तरह के विमान वे हैं जो केवल डाक का काम करते हैं अर्थात् एक कैम्प से दूसरे कैम्प (पडाव) को पत्र पहुँचाते हैं, इनमें केवल एक मनुष्य होता है। तीसरे वे विमान हैं जिनके ऊपर से

दुश्मन की फ़ौज के ऊपर गोला बरसाया जा सकता है। बिजली के सहारे एक स्थान से दूसरे स्थान को समाचार भेजे जा सकते हैं। संसार में विमान की अधिक प्रचार होने का एक कारण और भी है और वह यह है कि देश-रक्षा के लिए जो जंगी जहाज़ रखने पड़ते हैं वे बड़े महँगे पड़ते हैं। युद्ध के एक जहाज़ के तैयार करने में सब ख़र्च एक करोड़ रुपये तक पहुँच जाता है। परन्तु एक करोड़ रुपये में २००० हवाई जहाज़ बन सकते हैं। फ़्रान्स और जर्मनीवालों ने परीक्षा के लिए दुश्मन की तलाश का काम विमानों से लिया था और इस काम में उन्हें बड़ी सफलता हुई है। इन पर चढ़ कर उन्होंने क़िलों की तस्वीरें उतार ली थीं और गोले भी बरसाये थे। टर्की और इटली के बीच में जो युद्ध हुआ था उसमें इटलीवालों ने विमान पर से गोले बरसा कर टर्कीवालों की सेना का वध किया था। स्कूल में जैसे लड़कों की दौड़ होती है, घुड़दौड़ होती है उसी तरह आकाश में इनकी भी दौड़ हुआ करती है और जीतनेवाले हज़ारों-लाखों रुपये इनाम पाते हैं। दौड़ कई तरह की होती है। कभी शर्त होती है कि कौन सा विमान अधिक दूर जा सकता है, कभी ठहरता है कि कौन सबसे ऊँचा उड़ सकता है, अधिक यात्री लेकर अधिक यात्रा करने की भी बाज़ी होती है।

विमान की धुन जब से यूरोपवालों को लगी है तब से बहुत से कारीगरों के प्राण गए हैं। कुछ ही वर्षों के भीतर १०० के

लगभग आदमी मर चुके हैं। इतना भयानक काम होने पर भी उस देशवालों का उत्साह बिल्कुल भग नहीं हुआ है। सन् १६१० में केवल १०० आदमी विमान-परीक्षा में लगे थे, परन्तु, आजकल हज़ारों कारीगर इस कार्य में लगे हुए हैं। वे लोग जानते हैं कि इस कार्य में जानजोखों का बड़ा ही भय है; परन्तु, वे इस बात की तनिक भी चिन्ता नहीं करते। हमारे भारतवर्षवाले केवल तमाशाई हैं। वे सकष्ट के काम में नहीं पड़ते। आज तक केवल एक सज्जन ऐसे हैं जिन्होंने इस ओर ध्यान दिया है। पहले वे रुड़की मे इञ्जीनियरी पढ़ चुके हैं और उनका नाम है मिस्टर सेठी। उन्होंने विलायत जाकर विमान बनता हुआ देखा और सीखा और भारतवर्ष में आकर अपने हाथों से एक विमान तैयार किया। यह विमान घण्टे में ४०-५० मील चलता है।

विलायत में विमान पर चढ़ना आजकल भयानक नहीं समझा जाता। बहुत सी स्त्रियाँ भी इन पर चढ़ कर आकाश की यात्रा कर आती हैं। एक समाचार-पत्र में मैंने पढ़ा था कि एक दूलह और दुलहिन अपने घरों से विमान में बैठ कर गिरजे में पहुँचे थे।

आजकल कुछ लोग आकाश द्वारा एक नगर से दूसरे नगरों को जाया करते हैं। जिस तरह पुराणों में चर्चा आती है कि देवता विमानों में बैठ कर विचरा करते थे उसी तरह आकाश

में विमानों का जाना-आना होने लगा। रेल, बाइसिकिल, मोटर-कार आज दिन कुछ भी आश्चर्य की चीज़ें नहीं रहीं, इसी तरह विमान की भी साधारण बात हो गई है। जिस तरह रेल के चलने से बैल गाड़ियाँ और इक्के कम होगए हैं उसी तरह एक दिन रेल और जहाज़ भी कम रह जायँगे। पृथ्वी पर विलक्षण परिवर्त्तन होगा। दुष्ट लोग विमान के सहारे चोरी-चकारी करेंगे, तब पुलिस के विमान इनकी तलाश में लगेंगे। मैंने सुना है कि यूरोप में अभी से ऐसे कानून बन गए हैं कि सर्कार में रजिस्ट्री कराए बिना कोई भी विमान आकाश में न उड़ने पावे। प्रत्येक देश के यात्रियों को अपने ही मुल्क के आकाश में उड़ने की आज्ञा है। दूसरे देशों के ऊपर जाने के लिए उसको राहदारी का परवाना लेना आवश्यक है। ऐसा न करने से वे क़ैद किए जा सकते हैं।

कितने ही रोग ऐसे हैं जिन में रोगी को आब-हवा बदलने का उपदेश दिया जाता है। घाव और चोट, हवा के बिगाड़ से बहुत दिनों में अच्छे होते हैं, परन्तु, जब विमान साधारण तौर पर चलने लग जायँगे तब चीर-फाड़ करना कुछ भी भय की बात न रहेगी। रोग के कीड़े अधिकता से पृथ्वी के धरातल पर ही उसके आस-पास की हवा में रहते हैं। बहुत ऊँचे चले जाने पर इनका कुछ भी डर न रहेगा। अभी तक पृथ्वी के अनेक भाग ऐसे पड़े हैं जिनका कुछ भी भूगोल तैयार नहीं हो सका है। विमान द्वारा अब कोई जगह छिपी न रह

सकेगी। यूरोप तथा जापान के यात्रियों को बड़ी इच्छा है कि वे दोनों ध्रुवों के ठीक ऊपर एक बार हो आवें। उनको यह इच्छा अब सहज ही में पूर्ण हो सकेगी। जिस तरह एञ्जिनों को बदली करके ट्रेन रात दिन चला करती हैं इसी तरह आकाश में भी लाइन दौड़ा करेंगी। रात को आकाश में विमानों की रोशनी दौड़ती हुई देख पड़ेगी। शायद तुम अपने बाप को इन बातों को शेख़चिल्ली का ख़याल समझ कर हँसती होगी; परन्तु, निश्चय जानो कि तुम अपने जीवन में ही बहुत कुछ देख सकोगी।

अमरीका

पत्र न० ८—

अमरीका कहाँ है ? भूगोल—भारत से जाने का मार्ग—न्यूयार्क शहर—बिजली का प्रचार—कार्य-तत्परता—विद्यार्थियों का जीवन—शिक्षाप्रणाली—कार्यकरी विद्या—बायस्कोप से लाभ—दूकानदारी—स्त्रियों का आदर।
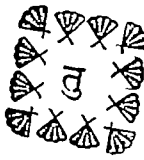
तुम जानती हो कि अमरीका क्या है और कहाँ है? यह प्रश्न मैंने इसलिए किया है कि लडकी ही नहीं, वरन् हमारे देश में कितने बडे बूढ़े भी यह नहीं जानते कि भारतवर्ष से बाहर कौन देश कहाँ और कैसे हैं। यह तो तुम्हें बताने की आवश्यकता ही नहीं है कि यह धरती नारङ्गी की तरह गोल है। इसका धरातल जल और थलमय है। थल के जिस भाग पर हमारा देश है वह पुरानी दुनिया है। यदि हम पुरानी दुनिया को धरती का ऊपर का धरातल समझ लें तो जो देश नीचेवाले धरातल पर है वही अमरीका है। जिस तरह हमारे सिर पर आकाश है उसी तरह उनके सिर पर भी। पृथ्वी की आकर्षण-शक्ति से हमारे और उनके पैर धरातल पर जमे हुए ह। अमरीका को नई दुनिया इसलिए कहते हैं कि वहाँ सभ्यता का प्रकाश पुरानी दुनिया से पहुँचा है। इस नई दुनिया की यात्रा करके एक सज्जन (महाशय सत्य-

देवजी) स्वदेश में आये है। उन्होंने अपनी वहाँ की यात्रा से जो कुछ देखा-सुना है वह सब हम लोगों को सुनाने के लिए वे भ्रमण करते रहते है। नई दुनिया अर्थात् अमरीका ने अपनी बहुत ही उन्नति की है और इस उन्नति के पथ पर भारतवासी भी चलकर लाभ उठा सकेंगे। मथुरा में सत्यदेवजी ने कई व्याख्यान दिये थे। मैं उनके व्याख्यान की कुछ बातें यहाँ लिखता हूँ।

अमरीका के दो हिस्से है। दोनो त्रिभुजाकार है, जिनकी नोक नीचे की ओर है। उत्तर के हिस्से की नोक बहुत पतली होकर दक्षिणवाले हिस्से के साथ मिलती है। इसी पतले भाग का नाम पनामा डमरूमध्य है जिसमें नहर खोदकर दोनों ओर के समुद्रों को मिला दिया है। उत्तर अमरीका का ऊपरी हिस्सा बृटिश अमरीका कहलाता है, इसस नीचेवाले देश को यूनाइटेड स्टेट्स कहते हैं। व्याख्यानदाता का कथन था कि अमरीका कहने से यही इलाक़ा समझना चाहिए। यहीं के रहनेवाले अमरीकन कहलाते है। भारतवर्ष से लन्दन तक की यात्रा का वृत्तान्त तो तुम्हारी रीडर में मौजूद ही है। इंग्लैण्ड के लिवरपूल नामक बन्दर से चला हुआ जहाज़ सीधा न्यूयार्क में जा लगता है। जब जहाज़ वहाँ पहुँचता है तब उसे सब से पहले स्वतन्त्रता की मूर्ति के दर्शन होते है। एक बड़े ऊँचे चबूतरे पर स्वतन्त्रता-देवी की स्थापना की हुई है। प्राचीनकाल में जब यूरोप के लोग अपने देश के अन्याय से नङ्ग आजाते थे।

तव वे भागकर यहीं आश्रय लेते थे। यहाँ आकर वे पूर्ण स्वतंत्र हो जाते थे। उन पर अत्याचारियों का कुछ अधिकार नहीं रहता था।

अमरीका की राजधानी का शहर न्यूयार्क है। न्यूयार्क एक वड़ा भारी शहर है, इस नगर की सड़कें और गलियाँ क़रीने और हिसाव से वनी हुई हैं। मकान यहाँ के ५५ मंज़िल तक ऊँचे हैं। आश्चर्य होता है कि इतने ऊँचे मकानों पर लोग कैसे चढ़ते होंगे, परन्तु, विज्ञान के प्रभाव से वहाँ यह कठिनाई नाम को भी नहीं है। चतुर कारीगरों ने ऐसी सीढ़ी वनाई हैं कि वात की वात में विना परिश्रम के इच्छित मज़िल पर पहुँचा देती हैं। सड़क के दोनों ओर वरावर-वरावर मकान वने हुए हैं। सौ-सौ मकान साथ-साथ हैं। मकानों के दरवाज़ों पर घरवालों के नाम के साइनवोर्ड लगे रहते हैं और टेलीफोन द्वारा वात-चीत करने का भी प्रवन्ध है। तुम शायद टेलीफ़ोन के विषय में न जानती हो। आजकल सव वडे-वडे शहरों में टेलीफ़ोन का प्रचार है। लखनऊ में भी टेलीफ़ोन है। तार के एक सिरे पर जो पोंगी सी लगी रहती है उसमें जव वात-चीत की जाती है तव वह दूसरे सिरे पर ज्यों की त्यों ही सुनाई दे जाती है। अमरीका में दरवाजे पर पोंगी लगी रहने से भेंट करने वाला अपना समाचार वाहर से ही भेज देता है, यदि घरवाला घर में न हो तो उसे इस वात की भी सूचना मिल जाती है। दरवाजे पर चिल्लाना नहीं पड़ता।

नलों का प्रचार वहाँ अधिक है। घर-घर में ठंडा और गरम पानी नलों के द्वारा पहुँचाया जाता है। बिजली के तार भी घर-घर में लगे हैं। तुमने रेल-यात्रा करते समय देखा होगा कि बहुत सी लाइनों पर बिजली की रोशनी का प्रबन्ध है। बटन दबाते ही हर गाड़ी में रोशनी हो जाती है। अमरीका में अब किसी को लालटेन नहीं जलानी पड़ती। नलों के द्वारा गैस भी घर-घर में पहुँचाई जाती है। इस गैस की लौ पर तवा रख कर रोटी पकाई जा सकती है, देगची रख कर चावल पका लो, तरकारी छौंक लो। न धूआँ निकलता है, न चूल्हा फूँकना पड़ता है। उस देश में घरों के भीतर मक्खियों और मच्छरों का इतना उत्पात नहीं है। एक और बात है कि हमारे घरों की मोरियाँ जिस प्रकार खुली बहा करती हैं और हौज़ों में पानी सड़ा करता है यह बात वहाँ नहीं है। इसके सिवा मकानों की खिड़कियों में जाली भी लगी रहती है। कूड़ा-करकट तक वहाँ खुला हुआ नहीं रहने पाता। सफ़ाई की तारीफ़ यहाँ तक है कि कोई मकान ऐसा नहीं जो अच्छी तरह धोया न जाता हो। गलियों के फ़र्श पक्के हैं। बाज़ार की सड़कें ख़ूब चौड़ी होती हैं, बीच में सवारियों के लिए मार्ग होता है और पटरियों पर दोनों ओर पैदल चलनेवालों के लिए रास्ता है।

जब सत्यदेवजी शहर में पहुँचे तब वे क्या देखते हैं कि वहाँ के लोग बड़ी फुर्ती से जा रहे हैं। ऐसा जान पड़ता था कि वे बड़ी जल्दी में हैं। जैसे कहीं आग बुझाने जाते हों। हमारे

देश में बाजारी लोग जैसे निकम्मे फिरते हैं ऐसा वहाँ कोई भी नजर न आता था। इसका मुख्य कारण यह है कि वहाँ के लोग वक्त की कदर जानते हैं। हर काम के लिए समय नियत है। जो कहीं को जा रहा है उसको समय पर वहाँ पहुँचना है यदि वह आलस्यवश तनिक भी विलंब करेगा तो उसका कार्य बिगड़ जायगा। उसके लिए कोई इन्तजार न करेगा। यहाँ जैसे सब लोगों को रेल के ठीक समय पर पहुँचने का विश्वास है और जब उनको केवल इतना समय रह जाता है कि शीघ्रता करने से ही वे ठीक समय पर ट्रेन पर पहुँच सकेंगे, उन्हें यह भी विश्वास है कि रेल किसी के लिए इन्तजार नहीं करेगी तब वे कैसे जल्दी-जल्दी क़दम उठाते हैं। जो आलसी हैं अथवा जिनको कुछ काम ही नहीं है वे रेल के समय से दो घन्टे पहले स्टेशन पर जा बैठते हैं। ऐसी बात अमरीका में नहीं है। वे लोग व्यर्थ समय नष्ट नहीं करते।

मथुरा के बाजार में भीख माँगनेवालों से भले मानस की तबीयत बहुत ही बिगड़ती है। स्टेशन से उतरते ही ये लोग जमदूत की तरह आ घेरते हैं। बाजार में बाबाजी, बैरागी, उनके चेले, कोढ़ी, कलकी, मडे-मुसडे, लँगड़े-लूले, अंधे, भिखमंगे फिरते रहते हैं। अमरीका में कानून है कि कोई भीख न माँगे। बाजार में कोई किसी को तङ्ग नहीं कर सकता है। जैसे यहाँ भिखमंगे दूर तक पीछा नहीं छोड़ते और इक्के तथा गाड़ियों के साथ दौड़ते चलते हैं यह बात वहाँ नहीं है। सब किसी को

काम के बदले में खाना पाने की आदत है। जो ऐसे असमर्थ हैं कि कुछ काम नहीं कर सकते उनके लिए कंगालखाने बने हुए हैं। वहाँ मेहनत से कोई नहीं घबराता। भारतवर्ष के सिवा अन्य देशों से भी विद्यार्थी अमरीका जाते हैं। ये लोग मज़दूरी करते और पढते हैं। सत्यदेवजी एक होटल में जूठे बर्तन माँजते थे। हमारे देश में भी विद्यार्थी हैं जिनके पास धन नहीं है, वे यदि पढते हैं तो भीख माँगकर अपना काम चलाते हैं, अथवा क्षेत्रों में खाते हैं। क्षेत्र का अर्थ तुम्हें मालूम न होगा। काशी, प्रयाग आदि में धनी लोगों ने कहीं-कहीं ऐसा प्रबन्ध कर रक्खा है कि वहाँ पर प्रतिदिन कुछ भूखे लोगों को खाना बटा करता है। उसे क्षेत्र कहते हैं। हमारे देश में दान तो बहुत होता है, परन्तु, उसकी प्रथा अच्छी नहीं है। अमरीका में दान का धन सभाओं के आधीन रहता है और सभा जहाँ उचित जानती है वहीं उसको ख़र्च करती है। जो लोग ऐसे हैं कि जिनको रोजगार की तलाश है; परन्तु, वे यह नहीं जानते कि किससे पूछें, उनके लिए भी ऐसी कंपनियाँ हैं जहाँ जाने से रोजगार तत्काल मिल जाता है। परिश्रमी मनुष्य कहीं भी भूखा नहीं मर सकता। स्कूल की जब छुट्टियाँ होती हैं तब भी विद्यार्थी निकम्मे नहीं बैठे रहते। वे काम-काज करके बहुत सा रुपया जमा कर लेते हैं। तुमने सरस्वती में वह लेख पढा होगा जिसमें सत्यदेवजी ने अपने पैदल-भ्रमण का वृत्तान्त लिखा था। उन्होंने अपनी यात्रा

का ख़र्च अपने भुजबल से पैदा किया था। वहाँ मजदूरी करने वाले घृणा की दृष्टि से नहीं देखे जाते और न उनका नाम वहाँ कुली रक्खा जाता है। मजदूर अपने किसान के साथ एक मेज पर भोजन कर सकता है।

उस देश की शिक्षा का वर्णन सुनकर आश्चर्य में डूबना पड़ता है। सब बच्चों को एन्ट्रेंस पास करने तक की शिक्षा मुफ़्त दी जाती है। फीस कुछ नहीं देनी पड़ती। काग़ज, स्याही कलम, किताबें सब स्कूल से ही मिलती हैं। लड़के और लड़कियाँ साथ-साथ पढ़ती हैं। छोटे बच्चों को प्रायः स्त्रियाँ ही पढ़ाती हैं। पढ़ाने का क्रम बहुत अच्छा है। वहाँ के लोग इस लिए ही नहीं पढ़ते कि वे पढ़ कर नौकरी करेंगे। उनका विश्वास है कि एन्ट्रेन्स तक की शिक्षा तो सांसारिक ज्ञान के लिए तथा मनुष्य कहलाने के लिए लाजिमी है। एन्ट्रेन्स पास करने के पीछे यह योग्यता होती है कि वह किसी प्रकार का गुण सीख सके। जितनी शिल्प कलाएं हैं उनके समझने की योग्यता आरम्भिक-शिक्षा अच्छे प्रकार प्राप्त करने से ही होता है। पुस्तकालय की आवश्यकता पर यहाँ के निवासियों का इतना ध्यान है कि छोटे से छोटे गाँव में भी पुस्तकालय मिलता है। यही हाल स्कूलों का है। बड़े-बड़े शहरों में हर मौके पर ऐसा प्रबन्ध है जहाँ से नगरनिवासी मनमानी पुस्तकें ले सकते हैं। बड़ी लाइब्रेरी से किताबों की भरी हुई गाड़ियाँ चलती हैं और वे गाड़ियाँ उन किताबों को बाँट जाती हैं और पढ़ी हुई पुस्तकों को वापिस

हो जाती हैं। समाचारपत्रों की तो वहाँ भरमार है। क़सबों से भी दैनिक अर्थात् रोज-रोज छपनेवाले अख़बार निकलते हैं। और ये अख़बार बहुत ही सस्ते होते हैं। अमरीका का हर मनुष्य अख़बार पढ़ता है। वहाँ प्रायः सभी मनुष्य पढ़े-लिखे हैं इसलिए अख़बार लाखों की तादाद में छपा करते हैं। एक अख़बार में पृष्ठों का संख्या भी बहुत होती है।

मिलकर, शान्ति-पूर्वक काम करने का ढङ्ग ये लोग जानते हैं। किसी काम मे गड़बड नहीं होती। सब में तर्तीब का ख़याल रहता है। इतवार के दिन डाक नहीं बटा करती, डाकख़ाने के चिट्ठी-रसाओं का छुट्टी रहती है। आवश्यकीय पत्र लेने वाले अपने आप डाकख़ाने चले जाते हैं और चिट्ठियाँ ले आते हैं। यहाँ भम्भड नहीं होने पाता जो सबसे पहले आता है वह सब से पहली जगह लेता है, उसके बाद जैसे-जैसे लोग आते जाते हैं, क्रमानुसार इन्तज़ार करते हैं। हमारे यहाँ के अमीर शायद् कुछ भी धन्धा नहीं जानते। उनका विश्वास है कि यदि धन मौजूद है तो उसको और कुछ सीखने की ज़रूरत नहीं है। अमरीका के लोग अवश्य कोई न कोई धन्धा जानते हैं। कोई बढ़ई का काम जानता है, कोई जूता बना लेना है, कोई चतुर दर्ज़ी है, कोई चतुर चितेरा है। बहुत दिन हुए मैंने एक अमरीकन डाक्टर से मालुम किया था कि वह जूता बनाने में बड़ा अभ्यस्त है। अमरीकन लडके शिक्षाकाल के समय में ही इन सब बातों को सीखते हैं। उनका विश्वास है कि जो मनुष्य

कोई खास हुनर नहीं जानता उसकी शिक्षा अधूरी है। उस देश के लखपतियों के लड़के मजदूरी करने में नहीं शरमाते। एक १० वर्ष का लड़का अखबार बेचा करता था। सत्यदेवजी ने समझा कि वह किसी गरीब का लड़का है और पेट की खातिर इस काम को करता है। जब बात-चीत हुई तब जान पड़ा कि लड़का स्वावलंबन की शिक्षा पाता है अर्थात् अपने हाथ-पैरों पर विश्वास रखता है। उसने अखबार बेचकर ही ५० डालर जमा कर लिए हैं। सत्यदेवजी कहते थे कि धनियों के लड़के फावड़ा लेकर सड़क पर काम करने में तनिक भी लज्जा का बोध नहीं करते।

अमरीका में पंजाबी सिक्ख बहुत जाते हैं। वे बेचारे लिखे-पढ़े नहीं होते। हाथ-पैर की मेहनत से वे रुपया तो खूब कमाते हैं। परन्तु, अविद्या के प्रभाव से कष्ट भी बहुत पाते हैं। बाज़े तो चिट्ठी-पत्री भी नहीं लिख सकते, दूसरों की खुशामद करके पत्र लिखवाते हैं। उन्हीं के भाई पंजाबियों में ऐसे भी देखे जाते हैं जो उनको ठग लेते हैं। एक मनुष्य ने मनीआर्डर से घर को कुछ रुपया भेजा। लेखक ने उसे अपने घर भेज दिया। उस देश से चिट्ठी का जवाब आने-जाने में दो-ढाई महीने लग जाते हैं। अपढ़ भारतीय मजदूरों को बहुत दुःख उठाना पड़ता है।

बाइस्कोप से तुम खूब जानकार हो, जिस तरह सम्राट् जार्ज का राज्याभिषेक तुमने अपनी आँखों से देख लिया था उसी तरह के बाइस्कोप वहां बहुतायत से हैं। चलती-

फिरती तसवीरों के द्वारा वे लोग बड़ी शिक्षा प्राप्त करते हैं। ऐसी कोई बात नहीं है जिसका दृश्य उनकी आँखों के सामने से न गुजरा हो। हम लोगों का सब दस्तूर वे जानते हैं। बनारस शहर इसी यंत्र द्वारा सत्यदेवजी ने अमरीका में हूबहू देखा था। मणिकर्णिका पर मुर्दों का फुकना देकर अमरीकन-दर्शकों ने सत्यदेवजी से इस विषय में बात-चीत की थी।

अमरीका में दूकानों पर सौदा ख़रीदने में भाव नहीं ठहराना पड़ता। चीज पसन्द कराने के लिए बड़ी कोशिश की जाती है। चीज़ पसन्द हुई तो फिर लेनी ही पड़ती है। हाँ, यदि उसमें कोई कारण नापसन्द आने का है तो वापिस लेने में उन्हें कुछ उज़र नहीं है। ग्राहक की राज़ी उनको सबसे अधिक वाञ्छित है।

वहाँ स्त्रियों का बड़ा आदर है। यदि रेल या ट्राम मे पुरुष बैठे हों और कोई स्त्री आजाय तो वह जहाँ खड़ी होगी, वहीं उसके बैठने के लिए स्थान कर दिया जायगा। पुरुष भले ही खड़ा रहे, परन्तु, स्त्रियों को कष्ट न होने दिया जायगा। शिक्षा का भी स्त्रियों के लिए लड़कों के समान ही प्रबन्ध है।

गुजरात

पत्र नं० ९—

भूगोल—वर्षा की प्रधानता—सोमनाथ-मन्दिर—प्रभासपट्टन—जूनागढ़ और नरसी भगत—गिरनार पर्वत की चढ़ाई—दर्शनीय दृश्य—गुजरात में अकाल—सहाय प्रार्थना।

तुम्हारी कक्षा में तो हिन्दुस्तान का नक्शा पढ़ाया ही जाता है। साथ ही साथ तुम नक्शा भी देखती रहती हो। तुम अवश्य जानती हो कि गुजरात किस सूबे का नाम है। दो वर्ष की बात है कि हम, तुम, सब उस प्रान्त में रह चुके हैं। जिस डीसा में हमारा निवास लगभग छः महीने रहा था वह गुजरात ही में है।

डीसा के पास वाली पालनपुर रियासत खूब प्रसिद्ध है। तुमको वहाँ की उस रेतीली धरती का स्मरण बना होगा। गुजरात में जो कुछ फसल होती है उसमें अधिकतर तो वर्षाही के कारण से होती है। यदि वर्षा खूब होती रहे तो बाजरे की फसल बहुत ही विशेष होती है। बाजरे के साथ अन्य कतकी नाज भी होता है, परन्तु, यदि वर्षा न हो तो यहाँ त्राहि-त्राहि मच जाती है। जब हम वहाँ थे तब कुछ समयके लिए वर्षा रुक गई थी, उस समय लोग कैसे घबराये थे। तब एक दिन वहाँ

के हिन्दू, मुसलमान, कृस्तान सब अपने-अपने घर छोड कर वाहर निकल गए और सव ने प्रतिज्ञा की थी कि जवतक मेह न पडेगा, तवतक हम अपने घरों को न मुडेंगे। परमात्मा ने उन पर दया की और उसी दिन खूव जोर-शोर से वर्षा हुई। दूसरे ही दिन वहाँ की धरती ने काया पलट ली। समय-समय पर और भी वर्षा हुई और खूव अच्छा सवत् हो गया। एक वार गुजरात में वर्षा न होने के कारण वडा भारी दुर्भिक्ष पड़ा था। तुमको तो डीसा, पालनपुर के सिवा गुजरात में विशेष फिरने का अवसर नहीं मिला है; परन्तु, तुम्हारी माँ उस देश में दूर तक घूम आई है। मथुरापुरी में जव महाराज श्रीकृष्णचन्द्रजी को जरासन्ध वार-वार दिक करने लगा था तव वे मथुरा छोड़कर गुजरात ही को चले गये थे और समुद्रतट पर द्वारिकापुरी में निवास किया था। इसी से गुजरात में कृष्णचन्द्र की मानता अव भी खूव है। द्वारिका जानेवाले यात्रियों को गुजरात देश की सैर करने का अच्छा मौक़ा मिल जाता है। इतिहास में तुमने पढ़ा ही है कि महमूद गज़नवी ने सोमनाथ महादेव के मन्दिर को तोडा था और मूर्ति के खण्ड-खण्ड करके स्वदेश को ले गया था। वह सोमनाथ का मन्दिर गुजरात ही में है। अव तक उस पुराने मन्दिर का खण्डहर खड़ा है। दूर देश से अँगरेज़ यात्री इस टूटे-फूटे स्थान को ही देखने आते हैं क्योंकि इतिहास में सोमनाथ महादेव का वडा वैभव वर्णन किया गया है। लिखा है कि मन्दिर

के खम्भों में जवाहिरात जड़े थे। २०० मन की भारी जंज़ीर निरी सोने की थी और उसमें कई मन सोने का ता घंटा लटकता था। दो हजार पड़े पुजारी इस मन्दिर में पलते थे। ग्रहण के समय दो-दो लाख यात्री यहाँ इकट्ठे होते थे। ३०० नाई लोगों का सिर मुण्डन करने के लिए रहते थे। मन्दिर में देवदासी होकर सैकड़ों लड़कियाँ अपना जीवन देव-सेवा ही में लगा देती थीं। दो हजार गाँवों की आमदनी से मन्दिर का खर्च चलता था। इसके सिवा और भेंट बहुत आती थी। इस मन्दिर की रक्षा के निमित्त बहुत से राजा लोग मुसलमानों से लड़ने के लिए तैयार थे, परन्तु, पुजारियों ने यह स्वीकार नहीं किया। उन्होंने सुलतान से प्रार्थना की थी कि वह मन्दिर की प्रतिष्ठा भंग न करे, इसके बदले में उसे जितना धन आवश्यक हो माँग ले। परन्तु, यवन ने उनकी प्रार्थना नहीं सुनी और हिन्दुओं की पूजनीय मूर्ति को खण्ड-खण्ड करके अपनी मुसलमानी प्रसिद्ध कर दी। आज उस मन्दिर के खण्डहर को देखकर ये सब बातें स्मरण हो आती हैं। जब मैं उस स्थान पर खड़ा हुआ वहाँ के पुराने वैभव की बातें तुम्हारी माता से कह रहा था, तब, मेरे हृदय में एक अद्भुत तरङ्ग उठ रही थी। परमात्मा ने बड़ी दया की जो आज हमको एक ऐसे राज्य के आधीन कर दिया है कि हम अपने मन्दिरों में निर्विघ्न ईश्वराराधन कर सकते हैं और हमें अब किसी प्रकार का भी भय नहीं है।

सोमनाथ जिस प्रान्त में है वह सौराष्ट्र देश में है। इसी

स्थान में प्रभासपट्टन—प्रभासक्षेत्र उस स्थान का नाम है जहाँ यादवों ने मतवाले होकर अपना नाश एक दूसरे के हाथों से कर दिया था। अन्त में जहाँ वधिक ने श्रीकृष्णचन्द्र महाराज को काला मृग समझकर तीर मारा था वह स्थान इस घटना के लिए अब तक रक्षित रक्खा गया है—प्रभासपट्टन नगर के पास एक जगह दो नदियाँ समुद्र के साथ मिलती हैं, जैसे प्रयाग में त्रिवेणी का माहात्म्य है वही माहात्म्य इस संगम में स्नान करने का है। समय-समय पर यहाँ बड़ी भीड़ हुआ करती है। इस त्रिवेणी संगम पर वह स्थान दिखाया जाता है जहाँ भगवान् श्रीकृष्ण की देह का दाह-कर्म किया गया था। प्रभास-पट्टन से हम बैल-गाड़ियों में बैठकर प्राचीक्षेत्र के दर्शन और स्नान करने गये थे। पण्डे लोग कहते थे—"सौ काशी भी एक प्राची" के समान नहीं है। यहाँ मेरे मन को तो विशेष आनन्द एक पहाड़ी नदी में स्नान करने से आया। बड़ा स्वच्छ जल था, मछलियों के गोल के गोल पानी में फिर रहे थे और साफ़ पानी होने के कारण उनकी सर्व गति दृष्टिगोचर होती थी। इस नदी में एक मूर्ति है जो सर्वदा पानी के भीतर ही रहती है। लोग कहते हैं कि जब इस मूर्ति को पानी में से निकाल कर बाहर पधराया गया तो वह दूसरे दिन अपने पुराने ही स्थान पर जल के भीतर देखी गई। तब जल के भीतर ही उनके लिए पृथक् कुण्ड बना दिया गया। नदी के तीर पर एक सूखा वृक्ष खड़ा है। स्नान करने के पीछे यात्री उस पर अनेक बार जल

चढ़ाते हैं और परिक्रमा देते हैं। ऐसा कहा जाता है कि इस पर चढाया हुआ जल उन पितरों को पहुँचता है जिनके वंश में अब कोई न रहा हो।

गुजरात ही में नरसी भगत हुआ है। सम्भव है तुमने उसका चरित्र न सुना हो। नरसी एक वैश्य था, वह रात्रि-दिन साधुओं की सेवा में रत रहता था। जो कुछ धन उसके पास था वह सब साधुओं को खिला दिया, आप निरा नंगा रह गया। इस देश में नियम है कि जब किसी लड़के अथवा लड़की का विवाह होता है तब उसके ननिहाल से भात आता है। तुम्हारी दादी कहा करती हैं कि जब उसका विवाह हुआ था तो बरातियों को कढ़ी, फुलका की पाँति दी गई थी और एक दिन उनको भात भी परोसा गया था। वे कहती हैं कि भात की पाँति उन दिनों में साधारण बात थी। एक दिन मामा की ओर से भी भात खिलाया जाता था। जब सखरी-निखरी का आचार बढ़ गया तब भात का भोजन बरात के लिए बन्द हो गया। लड़की, लड़के का मामा या नाना भात के बदले में अन्य पदार्थ देने लगे और अब तो इस भात शब्द का अर्थ विवाह के समय मामा-नाना के दिये कपड़ों का हो गया है। नरसी भगत को भी उसकी लड़की ने भात के लिए निमन्त्रण दिया। लड़की बेचारी सुन चुकी थी कि उसका बाप आज कल कोरा सन्त बना बैठा है। उसके पास खाने तक का सहारा नहीं है, परन्तु, उसके रिश्तेदारों ने नरसी को लज्जित करने के लिए जो चिट्ठी लिखी

उसमें बडी-बडी चीजे लिख दीं और आग्रह किया कि नरसी भगत अवश्य अपनी प्यारी दुहिता के लिए अच्छा भात दे। नरसी भगत के पास चिट्ठी आई। उसने उसे पढ़ा और निराश होकर अपनी दशा की ओर ध्यान किया कि घर में पीतल के वर्तन तक नहीं हैं, घवराहट हुई। इस संसार में उसे केवल एक आश्रय था और वह उसका जीवन भर का अवलम्व था। तुम जानती हो वह क्या था? वह था परमात्मा में सच्चा विश्वास। उसने उसी का आश्रय लिया और एक हुण्डी द्वारिका के 'सॉवलिया सेठ' के नाम लिख भेजी। आश्चर्य की वात है कि उस हुण्डी का रुपया एक सेठ ने चुपचाप दे दिया; किन्तु, नरसी ने इसको कुछ आश्चर्य नहीं समझा। उनकी दृढ़ धारणा थी कि भगवान् अपने भक्तों की सच्ची आवश्यकताओं को अवश्य पूरी करते हैं। जव लोगों ने देखा कि कंगले नरसी ने ऐसे ज़ोर-शोर से भात की तैयारी की है तव अचरज में डूव गये। नरसी ने उनको वहुतेरा समझाया कि यह सव साँवलिया शाह द्वारिकावाले की सहायता से हुआ है। परन्तु, विना सच्ची भक्ति के इस पर कौन विश्वास करता? लोग नरसी को छुपा धनी समझने लगे, उसका वड़ा आदर वढ़ गया। जूनागढ़ में नरसी भगत का एक छोटा मन्दिर है। इस जगह एक चवूतरे पर कवूतरों को दाना पड़ा करता है और हज़ारों कवूतर यहाँ निडर होकर दाना खाते और कलोलें करते हैं। तुम्हारी माँ का ध्यान था कि इतने वड़े भक्त का मन्दिर वहुत

बडा होगा। उसे इस छोटे से मन्दिर को देख कर खेद हुआ।

डीसा से हमने सुदामापुरी का सीधा टिकट लिया था। द्वारिका जाने के लिए सुदामापुरी से अग्निबोट मिलता है। परन्तु, जब हम जूनागढ के पास से होकर गुजरने लगे तब एक यात्री ने कहा—"जब इतनी दूर आए हो तो गिरनार पर्वत की भी यात्रा करते जाओ।" इस पर्वत के ऊपर चढना बहुत अच्छा कार्य समझा जाता है इस सम्बन्ध में एक दोहा कहा जाता है।

गगा न्हाये न गोमती, चढ़े न गिरि गिरनार।
तीनों पन यों ही गये, या ससार मंझार॥

यात्री के कथन को सुनकर तुम्हारी माता ने गिरनार-दर्शन करने का बडा आग्रह किया। इस पर्वत के दर्शन दूर-दूर से होते है। रेल ही में हमको यात्रियों ने इसे दिखाया। इस पर ऊपर जाने के लिए जूनागढ से ही मार्ग प्रारम्भ होता है। रेल से उतर रात को जूनागढ में रहे और सवेरे ही गिरनार की सडक पकड ली। लगभग तीन मील का मार्ग एक बडे सुन्दर हरियाले जगल में होकर है। एक नदी इस जगल में होकर बहती है। बड़ी दूर तक किनारे ही किनारे सडक है। एक ओर नदी का प्रवाह और पार के पहाडों का नजारा और दूसरी ओर हरियालीपूर्ण वन का दृश्य बडा ही सुहावना था। प्रातःकाल अनेक प्रकार के पक्षी अपनी मधुर भाषा में

परमात्मा का गुणगान कर रहे थे। हम लोगों ने नदी में स्नान किया और आगे के लिए चल पडे। यहाँ से एक मील चलने पर ही चढाई शुरू हो गई। समथल से ही सीढ़ियाँ शुरू हो जाती है, इस स्थान पर सैकडों डोलियाँ रहती हैं। धनी लोग, बुड्ढे और कोमलांगी स्त्रियाँ इन्हीं में बैठकर पहाडों पर जाते हैं। मैंने तुम्हारी माँ से कहा कि उसके लिए एक डोली किराये पर करली जाय। यह बात उसको बहुत बुरी लगी, बोली—"वाह ! मै क्या कोई अपाहज हूँ जो दूसरों के कन्धों पर चढकर ऊपर जाऊँ, मैं पैदल चलने को तैयार हूँ। आप जरा धीरे-धीरे चलिए और जहाँ मै चाहूँ वहीं मुझे सुस्ताने दीजिए।" ससार में हिम्मत बड़ी चीज़ है। इस समय बहुत से डोलीवाले हमारे पीछे पड गए और पहाड़ की कठिनाइयों को सुना-सुना कर तुम्हारी माँ का उत्साह भङ्ग करने लगे, परन्तु, इन सब बातों का उसके ऊपर कुछ असर न हुआ। उसकी चाल यद्यपि ख़रगोश की सी तेज न थी, परन्तु, दृढता में उस कछुए से कम न थी जिसने अपनी धीमी चाल से ख़रगोश को हरा दिया था। बहुत दूर तक डोलीवाले हमारे साथ चले, परन्तु, हममें थकावट का लक्षण न पाकर लौट आए। पर्वत के अद्भुत दृश्य देखने में हम ऐसे मस्त थे कि हमें श्रम का कुछ भी बोध नहीं होता था। डोली में बैठकर यात्रा करना कैद में पडना है। हम पूर्ण स्वतन्त्र थे, जहाँ मन चाहता था वहीं बैठ जाते थे। पहाड पर पहली बस्ती जैनियों की है जहाँ

उनके बड़े-बड़े मन्दिर बने हुए हैं। इस जगह से थोड़ा ऊपर जाने पर एक नदी के निकलने का स्थान मिलता है। पहाड़ में से सोता निकल कर, एक कुंड में होकर आगे बहता है। इस कुण्ड के पास एक बहुत अच्छा मन्दिर है। कुण्ड का जल बड़ा स्वादिष्ट और शीतल है। यहाँ बैठ कर हमने कलेवा किया और कुछ देर ठहर कर थकावट दूर की। यहां से जो चले तो फिर पहाड़ की चोटी ही पर ठहरे। चोटी पर एक देवी का मन्दिर है तथा और भी कई एक मकान हैं। इस स्थान पर खड़े होकर देखने से बड़ी दूर-दूर तक के गांव दिखाई देते हैं। खेतों की फसल के खंड मात्र जान पड़ते हैं। नदियाँ और सड़के लकीर सी दीखती हैं। जूनागढ़ शहर बहुत ही छोटा सा मालूम होता है। यह दृश्य देखकर चित्त बड़ा ही प्रसन्न हुआ। दूसरी तरफ कुछ उतार पर गुरु गोरख-नाथ और दत्तात्रय का आश्रम है। दत्तात्रय के चरण-चिन्ह पूजे जाते हैं। यहाँ की चढ़ाई-उतराई भयानक है। हमको यहाँ से लौटने में जूनागढ़ की धर्मशाला तक आते-आते रात हो गई और ऐसे सोये कि दूसरे दिन बहुत दिन चढ़े आँख खुली थकावट भी इतनी चढ़ी कि एक कदम चलना कठिन हो गया और कई दिन तक टाँगे दुखती रहीं।

घर से हम लोग द्वारिका के लिए चले थे। हमारे पास केवल १० दिन थे यदि कहीं न उतर कर सीधे सुदामापुरी उतरते तब द्वारिका होकर लौट सकते थे परन्तु गिरनार प्रभास-क्षेत्र

और प्राची तीर्थ की यात्रा मे ही हमारा बहुत समय निकल गया। इधर एक दिन मेरी तबीयत भी ख़राब हो गई। द्वारिका के लिए जहाज में बैठना होता है। मुझे जहाज की सवारी में एक बार बड़ा क्लेश उठाना पडा है, इसीसे मै समुद्र-तट पर ही रुक गया। तुम्हारी माता बडी रुष्ट हुई कि द्वारिकाजी के दर्शन नही हुए, परन्तु, जब मेरा मत विरुद्ध देखा तब मन में उदास होकर वापिस यात्रा कर दी।

गुजरात देश की बोलचाल कुछ कठिन नहीं है। गुजरातियों का पहिनावा बहुत साधारण है। केवल एक साडी से ही उनका काम चल जाता है। हिन्दू-मुसलमानों के अलावा यहाँ पर पार्सी लोग भी बहुत हैं। शायद तुम पार्सियों से जानकार न होगी। ये लोग अग्नि की पूजा करते है, अपने मुर्दों को गाडते या जलाते नहीं, यों ही एक मकान में रख देते हैं जहाँ उसे गिद्ध, चील आदि खा जाते है। ये लोग रूपवान्, धनवान् और गुणवान् हैं। अङ्गरेज़ी राज्य मे सब जातियों से पहले पार्सियों की स्त्रियों ने ही शिक्षा प्राप्त की है। आजकल बहुत सी पार्सी लडकियाँ बी० ए०, एम० ए० पास हैं, कई डाक्टरानी हैं। एक लडकी विलायत से वकालत पास करके आई है। इनके यहाँ विवाहिता स्त्रियाँ घूंघट नही निकालतीं। इनकी भाषा गुजराती है। किसी समय ये लोग पारस देश मे बसते थे। बम्बई मे इन लोगों का वैभव देखने को मिलता है।

उन दिनों गुजरात मे बड़ा भारी अकाल था प्रयाग के

अभ्युदय नामक समाचार-पत्र में छपा था कि गुजरात और काठियावाड में अकाल-पीडित स्त्रियों और अनाथ कन्याओं को बडा क्लेश है। इनको सहायता देने के लिए अनेक सज्जन चेष्टा कर रहे हैं। न तो मनुष्यों के खाने को अन्न है और न पशुओं को चारा। किसानों को अपने पशु बड़े प्यारे होते हैं, उनके लिए उन्होंने पेडों की पत्तियाँ और नर्म टहनियाँ संग्रह करके वृक्षों को ठूँठ कर दिया है। घास की तो जडें भी खोद निकाली हैं। अब बिलकुल निराधार हो गये हैं। समाचार-पत्रों में इस देशवालों को सहायता पहुँचाने की बार-बार प्रार्थना की गई थी।

बेटी! अकाल के समय भूखे मनुष्यों और पशुओं की सहायता करना बडे पुण्य का काम है, इसमें चेष्टा करना न भूलना। तुमको होश भी न होगा जब संवत् १९५६ में भारी अकाल हुआ था तब मारवाड से सैकडों स्त्री-पुरुष भाग भाग कर हमारी तरफ चले आये थे। उनमें अनेक स्त्रियाँ थीं। तुम्हारी दादी उन बेचारियों पर बड़ी दया करती थी। रोज बहुतों को रोटी दे और ठण्डा पानी पिला कर, उनके साथ सहानुभूति प्रकाशित कर उनके दुखी हृदय को शान्त करती थीं। मैं आशा करता हूँ कि तुम अपनी सखी-सहेलियों से अवश्य आग्रह करोगी और यथाशक्ति दान इकट्ठा करके भिजवाओगी।

जीवन-बीमा

पत्र नं० १०—

जीवन-बीमा की परिभाषा—विधवाओं की दुर्दशा—विलायत में बीमे का कानून—गहने से लाभ हानि—ब्याज पर रुपया लगाना—सेविङ्ग-बैंक—किसानों के बैंक—बीमा कराने वालों का लाभ—भांति भांति के बीमे।

जिस साल प्रयाग में प्रदर्शनी हुई थी उससे पिछले वर्ष लाहौर में हो चुकी थी। मैं उन दिनों पञ्जाब ही में था इसलिए मुझे उक्त प्रदर्शनी देखने का अवसर प्राप्त होगया। वहाँ की बहुत सी बातें तो मुझे भूल गई हैं, केवल एक बात याद है। वह यह कि जिन्दगी का बीमा करने वाली एक कम्पनी ने एक दफ़्तर खोला था, उसमें एक तख्ते पर नीचे लिखे आशय का नोटिस चिपका था :—

"समय आने वाला है जब कि कोई शिक्षित लड़की ऐसे पुरुष को अपना पति बनाना पसन्द न करेगी जिसके जीवन का बीमा नहीं हुआ है।"

मेरे विचार में वह समय तो भारत के लिए बहुत दूर है जब कि हिन्दू लड़कियाँ अपने विवाह के सम्बन्ध में कुछ बोलने की योग्यता प्राप्त करेंगी। परन्तु, ऊपर लिखा उपदेश कन्याओं के पिता तथा संरक्षकों के ध्यान देने योग्य अवश्य है। कन्यादान करने से पहले उन्हें यह अवश्य निश्चय कर लेना चाहिए कि

जामाता ने जीवन का वीमा लिया हुआ है कि नहीं। "जीवन का वीमा" किसे कहते है ? इसे वहुत लोग नहीं जानते। अगरेजी सभ्यता ने जहाँ इस देश में अन्य हितकारक प्रथा प्रचलित की है वहाँ उनमें से एक "जीवन का वीमा" भी है। यह तो हम सब जानते हैं कि इस जिन्दगी का कुछ ठिकाना नहीं है। आज जो शरीर अच्छा-भला है कल ही उसका रोग या दैवी दुर्घटना से प्राणान्त हो सकता है। तुमको तुलाराम का स्मरण होगा। कैसा अच्छा, भला, चतुर, नौजवान था। कलकत्ते में जाकर थोड़े ही दिनों में उसने हज़ारों रुपये कमाये, घर का सब कर्ज़ चुका दिया। उनके परिवारवाले कैसे प्रसन्न थे और क्या क्या सोच रहे थे। परन्तु, इस कुटिल काल ने कुछ भी न होने दिया, अल्पकाल ही में सब आशायें मिट्टी में मिल गई। उसकी मृत्यु से यह सिद्ध होता है कि इस जीवन का कुछ ठिकाना नहीं है। ऐसे अनेक परिवार हैं जिनमे एक कमानेवाला है और दस उसके पीछे खानेवाले हैं। ऐसे गृहस्थी की मृत्यु हो जाने से पीछे वालों को जिस विपत्ति का मुँह देखना पडता है उसका वर्णन करना व्यर्थ है। हम रात-दिन देखते हैं कि पति के मरने पर कितनी ही विधवा लडकियाँ वे ठिकाने रह जाती है तथा अपना शेष जीवन परम दु ख से काटती हैं, अनेक प्रकार की आपदाये उन्हें झेलनी पडती है। जिस परिवार की वे शरण लेती हैं वहीं उनको दुत्कार सहनी पडती है। जो लड़-कियाँ कभी घर से वाहर नहीं निकलतीं थीं और ऐसी भोली

कि १०० तक गिनना उनसे न आता था वे काम-काज की तलाश में मारी-मारी फिरती हैं। जो कहीं उनके दो-एक बच्चे हुए तब तो और भी कठिनता बढ जाती है। चक्की पीसना, चर्खा कातना, किसी के यहाँ रसोई बनाना ऐसे ही दो-एक काम हैं जिन पर उनकी गुज़र होती है। ऐसी विपत्ति के समय यदि उनको धन सम्बन्धी कुछ सहायता मिल सके तो उनकी बहुत कुछ विपत्ति हलकी हो सकती है। जो लोग नौकरी करके अपना परिवार चलाते हैं उनकी विधवा स्त्रियों को यह भय सर्वदा लगा रहता है। इसी आपदा को हलका करने का उपाय जीवन-बीमा है। ऐसी कई कम्पनी है जो महीने-महीने, छमाही, अथवा सालाना कुछ रुपया ठहरा लेती हैं और मरने पीछे एक निश्चित रकम वारिसों को दे देती हैं। जहाँ और अनेक ख़र्च हैं वहाँ एक यह भी सही। गृहस्थी बीमा-कम्पनी को रुपया देता रहता है और मरने से निर्भय हो जाता है। उसे यह चिन्ता नहीं रहती कि मैं अपने पीछे के लिए कुछ जोडूं। मैंने जबतक जीवन का बीमा नहीं कराया था तबतक अपनी मासिक आमदनी में से कुछ भी न बचा सकता था, इस कारण सर्वदा चिंता रहती थी कि पीछे क्या होगा? अब मुझे वह चिन्ता नहीं है।

जहाँ और ख़र्च हैं वहाँ एक आठ रुपये बीमा-कम्पनी के भी निकल जाते हैं। अब मन को बड़ा सन्तोष है। विवाह होने से पहले प्यारेलाल का भी जीवन-बीमा हो गया है। हर एक समझदार मनुष्य कुसमय के लिए कुछ न कुछ बचा कर रखता

है। जो ऐसा नहीं करते उन्हें सर्वदा विपत्ति का खटका लगा रहता है। अभी विलायत में एक विल पास हुआ है। उस विल के मुताविक अव सव किसी को अपने जीवन का वीमा कानून के अनुसार करना पड़ेगा। इसका कारण यह हुआ कि वहाँ वहुत से लोग ऐसे हैं कि जो कुछ कमाते हैं वह सव का सव खर्च कर डालते है। जव वे मर जाते है तव उनको स्त्री और वच्चे अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ हो जाते हैं। उनको अनाथालय की शरण लेनी पडती है। अव ऐसा कानून वना है कि सव कमाऊ लोगों को अपनी कमाई का एक अश सरकार को देना होगा और उस रुपये से सरकार उनके स्त्री-वच्चों की परवरिश करेगी। उन लोगों की चिकित्सा मुफ़्त की जाय इस वात का भी प्रवन्ध हो रहा है। हमारे देश में जो गहने का रिवाज है वह भी एक तरह का जीवन-वीमा है। पति के मरने पर यह गहना वडा सहायक होता है।

पुराने जमाने में गहना इसीलिए वनवाया जाता था और उससे कई लाभ थे। स्त्रियाँ गहना पाकर वहुत प्रसन्न रहती थीं और उसको सर्वदा अपने शरीर से लगा कर रखती थीं। कान में लटकातीं, नाक छिदाकर उसमें डालतीं, गले में धारण करतीं तथा हाथ, पैर, और कमर में रात-दिन पहिने रहती थीं। सव से भीतर वाले घर में उनको रक्खा जाता था और उनकी वड़ी ख़वरदारी की जाती थी। अव भी यही हाल है। गहना

ऐसी चीज़ है कि स्त्रियाँ उसके लिए सब कुछ शारीरिक कष्ट उठाने के लिए तैयार रहती है यहाँ तक कि वे गहने के लिए लडती-झगड़ती रहती है। जिन देशों में स्त्रियाँ शिक्षा पागई है वे अपने शरीर को गहनों के वन्धन मे इतना नहीं डालती। शिक्षित पुरुषों को, अपना धन रखने के अनेक सुभीते हैं। गहनों मे रुपया लगाना उनकी समझ मे हानिकारक है। पहली वात तो यह है कि गहने की लागत मूल धन से वहुत कम हो जाती है। गढ़ाई और वनवाई का ख़र्च व्यर्थ जाता है और ज्यों-ज्यों ज़ेवर पहनते-पहनते पुराना होता जाता है त्यों-त्यों यह घिसता, टूटता तथा छीजता रहता है। वढवारी इस धन मे कुछ भी नहीं होती। सर्वदा इसके चोरी जाने, लुटने वा ठगे जाने का भय लगा रहता है। स्त्रियाँ स्वतन्त्रता से यात्रा नहीं कर सकतीं। शारीरिक सुभीते में भी वाधा रहती है। इन सव कारणों से साधारण स्थिति की स्त्रियाँ अँगूठी आदि छोटी-छोटी चीजों के अतिरिक्त अन्य आभूषण वहुत कम पहनती हैं।

गहने के अतिरिक्त दूसरा उपाय हमारे देश में यह था कि जो कुछ रुपया फ़ालतू होता था वह जमीन के नीचे गाड दिया जाता था। वहुत जगह पुराने घरों के खोदने से रुपये, अशर्फियाँ गड़े हुए पाये गये हैं। घर का वड़ा वूढा अथवा कर्त्ता-धर्त्ता जव मरने लगता था और उसको रोग के कारण इतनी शक्ति नहीं रहती थी कि अपना दवा-ढका धन वता सके तव वहुत सा धन यों ही छिपा हुआ रह जाता था। वनिये अपना

रुपया सूद पर लोगों को दिया करते हैं और व्याज पर व्याज लगाकर धनवान् हो जाते हैं। धनी लोगों के विश्वास पर साधारण लोग अपनी बचत का रुपया धरोहर की वही में जमा कर दिया करते हैं। साहूकार लोग इस रुपये से बहुत लाभ उठाते रहते हैं। इसी विश्वास के कारण एक कहावत हुई है कि:—

"नामी साहु कमाय खाय—नामी चोर मारा जाय" इन साहूकारों के द्वारा अनेक लोगों का रुपया मारा भी गया है। जब साहूकारों को किसी व्यापार में टोटा होता है और वे अपने लेनदारों का रुपया नहीं चुका सकते तब दिवाला निकाल देते हैं। जिन गरीबों ने आडे दिन के लिए पेट काट कर रुपया जोडा था और विश्वास करते हुए रक्षा के लिए रख दिया था दिवाला निकल जाने पर वे हाथ मल-मल कर रह जाते हैं। अँगरेजी सरकार ने गरीब लोगों को ऐसी विपत्ति से बचाने के लिए सरकारी बैंक खोले हैं जिनको सेविंग-बैंक कहते हैं। जहाँ-जहाँ डाकखाना है वहीं पर सेविंग बैंक है। Saving सेविंग अंगरेजी भाषा का शब्द है। इसका अर्थ बचत है। अर्थात् मनुष्य को जो आमदनी होती है उसमें खर्च करने के उपरांत जो बचे वह इस बैंक में जमा कर दिया जाय। कम से कम ।) तक जमा हो सकते हैं। आशय तो यह है कि इस बैंक में से रुपया निकाला न जाय, परन्तु, आवश्यकता आपडे तो हफ्ते में एक बार जितना रुपया दरकार हो उतना उस हिसाब में से वापिस भी

लिया जा सकता है। जो रुपया महीने भर जमा रहता है उस पर छः रुपये पीछे एक पैन्स महीने के हिसाब से ब्याज मिलता है। महीने-महीने दो रुपया जमा करने से साल में २४) हो जाते हैं, और ३० वर्ष तक यही नियम रहे तो ७२०) होते हैं। डाकख़ाने से रुपया यदि लिया जाय और वहीं जमा रहे तो तीस वर्ष में ब्याज पर ब्याज जुड कर यह रुपया ११९४।-) हो जायगा। क्या यह आश्चर्य नहीं जान पडता? अनेक ऐसे बैंक हैं जो ६।) सैकड़ा ब्याज भी दे देते है और छठे महीने ब्याज का रुपया मूल में जोड़ देते हैं। उनके यहाँ २४) साल ३० वर्ष तक जमा होते रहें तो २०४४॥=) हो जायँगे। तुमको यह बात मालूम होगी कि किसान लोग जो रुपया उधार लाते हैं उस पर उन को बहुत ब्याज देना पडता है। सौ रुपये के सवा सौ देना तो अलग रहा, कोई-कोई किसान तो १०० के १५०) देते हैं। ज़रूरत के वक़् जब किसान लोग साहूकार के यहाँ से अन्न लाते हैं तब उनको बाज़ार-भाव से रुपये पीछे सेर कम मिलता है और जब चुकाते हैं तब बाज़ार-भाव से सेर ऊपर देते हैं। फल यह होता है कि किसान का पीछा कभी नहीं छूटता, वह कर्ज़दार ही बना रहता है तथा साहूकार लोग कुछ वर्षों ही में पक्की हवेली बना कर चैन करने लगते हैं। साहूकारों के चगुल से छुड़ाने के लिए सरकार ने किसानों को ॥) सैकड़ा सूद पर सरकारी रुपया उधार देना शुरू किया है। इसको तक़ावी कहते हैं। शोक यह है कि किसानों में शिक्षा का अभाव है, वे सरकार की मंशा को

नहीं समझते। तकावी का रुपया लाकर अपनी घरवाली को हँसली गढा देते हैं और खेतो के खर्च के लिए साहूकार के भरोसे रहते हैं।

सरकार ने एक प्रकार के बैंक किसानों के लिए खोल दिये हैं। उनमें जिन किसानों का रुपया जमा रहता है उनको सूद दिया जाता है और जिनको उधार दिया जाता है उनसे ब्याज लिया जाता है। इसमें यह लाभ है कि किसानों को अपनी बचत का रुपया जमा करने का ऐसा अच्छा प्रबन्ध है कि उनको ब्याज भी मिलता है और उन्हीं का रुपया उन्हीं के भाई-बन्धु को लाभ पहुँचाता है। सरकार से तो अनेक अच्छी-अच्छी तजवीजें निकलती हैं, परन्तु, समझने की शक्ति किसानों को नहीं है। यदि उनमें शिक्षा का विशेष प्रचार हो जाय और सरकार के सब हुकुम-अहकाम समझने की उनमें योग्यता होजाय तो वे इतने दुखी न रहें। अमरीका देश के किसान पढे-लिखे होने के कारण खूब धनी हैं।

यह तो अब तुम खूब समझती होगी कि ब्याज का नफ़ा भी एक अच्छा नफा है। जीवन-बीमा-कम्पनी अपना व्यवसाय इस ब्याज से लाभदायक बनाए हुए है। जिस मनुष्य को बीमा कराना होता है उसे वे एक डाक्टर को दिखाते हैं। डाक्टर परीक्षा करके यह बता सकते हैं कि अमुक मनुष्य कितने दिन जियेगा। जो मनुष्य जितनी थोडी उमर में बीमा कराता है उसको उतना ही कम रुपया देना पड़ता है।

कम्पनी वाले ठहरा लेते हैं कि जो उनको प्रतिवर्ष २४॥।=) और वीमा करने के समय उमर २० वर्ष की हो तो वे मृत्यु पर १०००) देदेंगे। जितना गुना अधिक रुपया लेना हो उतना ही गुना वार्षिक चन्दा देना होगा। मृत्यु चाहे कभी होजाय १०००) मिल जायगा। कई वार ऐसा भी हुआ है कि केवल एक वार चन्दा देने के पीछे ही मृत्यु होगई है, कम्पनी वालों को १०००) अथवा चन्दे के अनुसार ठहरा हुआ रुपया देना पड़ा है। कुछ वर्ष की बात है कि यहाँ एक मुन्सिफ़ थे। उनके मित्रों ने आग्रह करके उनके जीवन का वीमा ५०००) का करा दिया। वहुत काल व्यतीत नहीं हुआ कि निमोनिया की वीमारी से उनकी मौत हो गई। उनकी स्त्री को ५ हजार रुपया मिल गया। इस रुपये को पाकर विधवा अपनी सन्तान को शिक्षित करने में समर्थ होगई। पति-वियोग का दुःख तो उसे जन्म भर ही रहेगा, परन्तु, ससार चलाने मे उसको अधिक कष्ट न उठाना पड़ेगा। जव वच्चे पढ-लिख कर तैयार हो जायॅगे तव फिर उसके वे ही दिन आजायॅगे।

जीवन-वीमा ऐसा भी है कि कुछ वर्ष के लिए किस्त ठहर जाती है और जव पूरी किस्तें चुक जाती हैं तव जीते जी ही ठहरा हुआ रुपया मिल जाता है। इसके अतिरिक्त कम्पनीवालों को जो रुपया नफ़े में व्यवसाय अथवा व्याज का मिलता है उसमें से भी हिस्सा मिलता है। मै यदि ५५ वर्ष तक जीता रहा तो मेरे वीमे का रुपया मय नफ़े के मुझे मिल जायगा।

वाबू जानकी को तुम जानती हो जब हम रावलपिंडी में थे तब उन्होंने अपने जीवन का बीमा १० वर्ष के लिए कराया था। इस बीच में उनकी मृत्यु नहीं हुई तो उनका ठहरा हुआ रुपया उनको वापिस मिल गया। बहुतेरे लोग कहते हैं कि जब पराये रुपये से कम्पनीवाले लाभ उठाते हैं तब खुद ही ऐसा क्यों नहीं किया जाता। अथवा सेविङ्ग बैङ्क ही में रुपया रक्खा जाय और निकाला न जाय, यह बात उनकी ठीक है। सेविङ्ग बैंक में भी रुपया बढ़ा करता है। कसर यह है कि जब जरूरत पडती है तब सेविङ्ग बैंक से रुपया निकाल सकते हैं तथा जमा करने की कोई अंकुश नहीं है। किया किया, न किया न किया। परन्तु, जीवन-बीमा-कम्पनी से रुपया मिलना बहुत कठिन होता है और उनकी किस्त चुकानी ही पडती है। इससे मृत्यु के पीछे एक अच्छी रकम मिलने का पक्का निश्चय हो जाता है।

जीवन-बीमा की तरह और भी कई प्रकार के बीमा हैं। माल-असबाब आग से जल कर नष्ट हो जाय तो उसका दाम मिल जाता है, यदि बीमा करा लिया गया हो। जहाज डूब कर नुकसान होने का भय हो तो इस बात का भी बीमा हो सकता है।

होलिका-वर्णन

पत्र नं० ११—

प्रह्लाद की कथा—होलिका का हाल—त्यौहार मनाने के कारण—गदी होली—नये ढङ्ग की होली—अन्य देशो में उत्सव—स्कूलों में व्यायाम-शिक्षा।

होली बीत गई, इस महीने मे यहाँ ख़ूब भभ्भड रहा। तुमने पिछली चिट्ठी मे पूछा था कि होली क्या है। सो होली के सम्बन्ध में तरह-तरह की बातें है। पुराण मे एक जगह कथा है कि ढुंढा नाम की एक राक्षसी बालकों को खा जाती थी। लोग उससे तग आ गये और सब ने एकत्र होकर बहुत सा काठ-कबाड इकट्ठा किया और राक्षसी को अग्नि प्रज्वलित करके भस्म कर दिया। दुःखदायिनी राक्षसी के मारे जाने का लोगों को बडा हर्ष हुआ और प्रति वर्ष उसको भस्म करने की रस्म की जाने लगी और ख़ुशी मनाई जाने लगी। दूसरी कथा प्रह्लाद के नाम से प्रसिद्ध है। प्रह्लाद के आचरण उसके पिता को पसन्द न थे। उसने उसे अनेक ताडनाएँ दी, परन्तु, लडके ने अपनी चाल न बदली। तब पिता हिरण्यकश्यप इतना बिगड़ा कि बेटे को जान से मार डालने का सकल्प कर लिया। प्रह्लाद को सब लोग बडा प्यार करते थे। कोई भी प्रह्लाद को मारने के लिए तैयार नहीं हुआ तब उसके बाप ने अपनी बहन होलिका को राजी कर लिया।

उसने वहुत सी लकडियाँ चुनवाईं, वीच में एक ऐसी जगह रक्खी कि आग लगने पर आप आराम में वैठी रहे और अग्नि का ताप न लगे। सोच लिया था कि लडका आग में जल जायगा और आप वच रहेगी। अतः प्रह्लाद को गोद में लेकर वह काष्ठ-पुञ्ज के भीतर वैठ गई और ऊपर से आग लगा दी गई। चारों ओर खवर हुई और वस्ती के सव लोग इस भयानक दृश्य को देखने के लिए आ मौजूद हुए। जव अग्नि शान्त हुई और होलिका को जीती-जागती निकालने के लिए राख उठाई गई तव क्या देखा गया कि होलिका का तो कहीं पता नहीं, परन्तु, प्रह्लादजी रक्षित स्थान में वैठे मुस्करा रहे हैं। दर्शकों ने अपार आनन्द मनाया और तव से प्रतिवर्ष इसकी नकल की जाने लगी।

परन्तु, प्रधान कारण इस उत्सव का यह है कि होली के मौके पर जौ, गेहूँ चने आदि अन्न पक कर खाने लायक़ हो जाते हैं। किसान इस फसल के लिए वड़ा परिश्रम करते हैं। कुओं में से पानी खींच कर खेतों को सींचते हैं। जव खेत पक जाते हैं तव खेत सींचने से उनको अवकाश मिल जाता है। इस समय उनकी खुशी का ठिकाना नहीं होता है। प्राचीन काल में इस अवसर पर वडा भारी हवन किया जाता था उसको नवशस्येष्टि यज्ञ कहते थे। हवन करने के समय नया अन्न भी होमा जाता था। गाँव भर के मनुष्य एकत्र होकर सव जगह इस यज्ञ को करते थे तथा आनन्द मनाते थे।

यह भी कहा जाता है कि जैसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चार वर्ण हैं वैसे ही इनके लिए चार त्यौहार भी हैं। सलूनो ब्राह्मणों का त्यौहार है, इसको श्रावणी भी कहते हैं। विजय-दशमी अर्थात् दशहरा क्षत्रियों का उत्सव है। दिवाली वनियों को त्यौहार वनाया गया है तथा होली शूद्रों के लिए नियत है।

जितने उत्सव और त्यौहार हैं वे सब पवित्रता का प्रचार करने के उद्देश से रक्खे गये हैं। परन्तु, समय के परिवर्त्तन से सब उत्सवों का रूप वदल गया है। भली बातों के वदले में लज्जाजनक वातें वकना, घृणित स्वाँग निकालना, कीचड़, मट्टी, धूल फेंकना होली के लिए प्रधान वात हो गई है। हर्ष की वात है कि आज-कल पढे-लिखे लोगों का ध्यान इस त्यौहार के सुधार की ओर झुका है। आर्य्य-समाज में इस दिन हवन होता है, भजन गाये जाते हैं और व्याख्यान होते हैं। वम्बई नगर मे होलिका-सम्मेलन-सभा स्थापित हुई है। बड़े बड़े विद्वान् सज्जन उसके प्रवन्धकर्ता हैं। सभा ने निम्न लिखित सुधार करने सोचे हैं—

(१) होली पर वकवाद करने के विरुद्ध विचार फैलाना।

(२) छोटे वच्चों को गन्दे स्वाँग-तमाशों से अलग रखना।

(३) भोले और अनपढ लोगों को विश्वास दिलाना कि

होली के अवसर पर गन्दे गीत गाना और असभ्य आचरण करना शास्त्र में कहीं नहीं लिखा है।

(४) सच्चे आमोद-प्रमोद का प्रबन्ध करके लोगों का मन घृणित कामों की ओर से फेरना।

(५) सर्वसाधारण का उत्साह पवित्र भावों की ओर बढ़ाना और उनसे उत्सव में सहायता लेना।

पिछले वर्ष बम्बई में होलिका-सम्मेलन की ओर से मदरसे के विद्यार्थी और मजदूरों को उपदेश करनेवाली सभा हुई थी जहाँ सब धर्मों के पुजारी, पंडित और कथा बाँचनेवाले मौजूद हुए। पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ आईं और उन्होंने व्याख्यान दिये। सभा में भक्ति और देश-प्रेम के भजन गाये गये, सुन्दर कहानियाँ और शास्त्र-वचन छपवा कर बाँटे गये। उत्सव में शामिल होने के लिए हिन्दुओं की सब पाठशालाओं को निमन्त्रण दिया गया था। जगह-जगह पर जल-पानी, मेवा-मिठाई आदि का प्रबन्ध था। कीर्तन करने वाले, कथा बाँचनेवाले, भजन गानेवाले सब अपनी-अपनी टोलियाँ बना आनन्द-वर्षा कर रहे थे। कहीं पर ग्रामोफोन बज रहा था, कहीं पर जादू का तमाशा हो रहा था। खेल-कूद के तरह-तरह के अखाड़े थे, कहीं पर कुश्तियाँ होती थीं और कहीं पर दौड़ और कुदान की बाजी बदी गई थी।

उपरोक्त कार्य बम्बई के नीच मुहल्लों में हुआ। भंगी, चमार, मजदूर, गवाँर सब तरह के लोगों को शामिल होने की छुट्टी

थी। हरएक विरादरी के चौधरी, पंच और पढ़े-लिखे लोगों ने सब प्रकार की सहायता दी। पाठशाला के बड़े-बड़े, विद्यार्थियों ने सिपाहीपने का काम किया और दर्शकों को किसी प्रकार का कष्ट न हो इसका ज़िम्मा लिया। इस सब काम के लिए २०० विद्यार्थी थे। जितने खेल-तमाशेवाले और गाने-बजानेवाले थे वे सब अपने उत्साह से ही आये थे। उस दिन नाटक-मंडलियों ने अपने नाटक दिखा कर जो रुपया कमाया उसको मेले के खर्च में दान कर दिया। बहुत लोगों ने फोनोग्राफ़ बाजे और सवारी के लिए गाड़ियाँ मुफ्त भेज दीं। ढाई हजार रुपया चन्दे से इकट्ठा हुआ था। एक स्त्री ने भी १००) रु० दिया। बम्बई में फ़ामजी कावसजी का एक बड़ा मकान है, उसी में हिन्दी, मराठी और गुजराती-भाषा में व्याख्यान हुए। यहाँ पर दो स्त्रियों ने भी व्याख्यान दिये। बड़े-बड़े मन्दिरों में जो लोग सुबह, शाम गाया-बजाया करते हैं उन लोगों ने मेले में आकर कीर्त्तन किया। व्याख्यानों में २० हज़ार श्रोता एकत्रित हुए। सब किसी को होली के ऊपर होने वाली बातों की हानियाँ समझाई गईं। नशे की निन्दा की गई, सफ़ाई के लाभों की ओर सर्वसाधारण का ध्यान खींचा गया। दस-बारह जगह लड़कों का समाज था। उनको १००) रु० की मिठाई बाँटी गई। सुधार की बातें पर्चों पर छाप कर बाँटी गईं। ३० हजार पर्चे बँटे। मद्य आदि नशों से मनुष्य की जो शारीरिक दुर्दशा होती है उसके चित्र बाँटे गये और मौक़े-मौक़े

पर चिपका दिये गये। भजन और अन्य खेल-तमाशों में भी बीस-पचीस हजार मनुष्यों की भीड़ थी। कुश्ती के अखाड़ों में भी दो हजार आदमी होंगे।

सारांश यह कि सर्वसाधारण ने होली मनाने का यह नया ढङ्ग खूब ही पसन्द किया। यदि यह उत्सव नई रीति से न किया जाता तो सब लोग कीचड़, मिट्टी उछालते, भंग, शराब, पीते और गन्दे गीत गाते।

यह तो बम्बई की बात हुई, परन्तु, दूसरे शहरों में भी लोगों का ध्यान सुधार की ओर हो रहा है। अब वह समय दूर नहीं है जब कि बुरी बातें हटा कर सब जगह सच्चा आनन्द मनाया जायगा। लड़के और लड़कियों को पढ़ाने-लिखाने के साथ ही साथ अब उनके शरीर को पुष्ट बनाने का ध्यान हो रहा है। जैसे आजकल स्कूलों में जिमनास्टिक तथा अन्य खेल हुआ करते हैं वैसे ही त्यौहार के दिन भी अखाड़े और कुश्ती के खेल होंगे। शहर और कसबों में इलाके भर के लोग जमा होंगे।

यूनान देश जब खूब बढ़ा-चढ़ा था तब वहाँ के लोग खेल-तमाशों के बड़े शौकीन थे। जो मनुष्य शारीरिक-बल में सर्वोपरि निकलता था उसके सिर पर मुकुट रक्खा जाता था, बड़ी धूमधाम से उसकी सवारी निकाली जाती थी, उसका और अन्य दर्शकों का उत्साह बढ़ाने के लिए बाजार सजाया जाता था। सवारी के साथ नगर के बड़े-बड़े लोग चलते थे। वहाँ के सभी शहरों में अखाड़ों का रिवाज़ था, परन्तु, इनमें

केवल अनपढ़ लोग ही अधिक होते थे। पढे-लिखे लोग इनमें मिलना अच्छा नहीं समझते थे। अब यह मालूम हो गया है कि मनुष्य को पूरी खुशी तब ही मिल सकती है जब कि उसका बदन और दिमाग दोनों पुष्ट हों। कोई चाहे कितना ही भारी पंडित हो जाय, परन्तु, यदि शरीर से आरोग्य नहीं है तो उसकी सब विद्या व्यर्थ है।

मैं प्रसन्न हूँ कि तुम्हारे स्कूल में लडकियों को भी कसरत सिखाई जाती है। तुमने लिखा है कि इस वर्ष स्कूल के वार्षिकोत्सव में कुछ पुरुष भी निमन्त्रित किये जायँगे। यदि प्रधानाध्यापिकाजी मुझे भी दर्शकों में शामिल होने की आज्ञा देंगी तो मैं देखूँगा कि तुमने किस प्रकार का व्यायाम सीखा है।

शिक्षा-प्रचार-प्रकरण
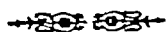
वनिता-विश्राम

पत्र नं० १२—

दान के प्रचलित मार्ग—दो गुजराती स्त्रियों का कार्य—वनिता-विश्राम की स्थापना—शूद्र और स्त्रियों को न पढ़ाने का फल—गृहस्थ स्त्रियों का पठन-पाठन—गृह-प्रबन्ध—चिकित्सा के समय स्त्रियों के विचार—बोर्डिङ्ग हौम की लड़कियाँ।

इस देश में अनेक स्त्रियाँ ऐसी हैं जिनके पास बहुत सा धन है। आगे-पीछे कोई सन्तान भी नहीं है। उनको अनेक प्रकार के दान-धर्म्म की शिक्षा दी जाती है और तदनुसार कोई साधु-वैरागियों को सीधा देने के लिए सदाव्रत लगाती हैं, कोई तीर्थ-यात्रा करके घर में लौट कर ब्राह्मण-भोजन कराती हैं, कोई व्रत रह कर उद्यापन में बहुत सा रुपया ब्राह्मणों को खिलाती हैं। बहुतेरा मन्दिर बनवातीं, धर्मशाला खोलतीं अथवा बाग लगवाती हैं। ये सब काम अच्छे हैं; परन्तु, दो गुजराती स्त्रियों ने जो कार्य किया है, वह आजकल के समयानुसार सर्वोपरि कहलाये जाने के योग्य है। बम्बई में एक जगह श्रीमती स्वर्गीय महारानी विक्टोरिया की मूर्ति बनी हुई है। किसी दुष्ट ने उस मूर्ति पर

काला रंग पोत दिया था। अनेक यत्न करने पर भी वह दाग़ नहीं मिटा। तब एक रासायनिक परिडत ने रसायन-शास्त्र के बल से उन दागों को मूर्ति पर से हटा दिया और बड़ा यश पाया। उक्त परिडत का नाम प्रोफ़ेसर टी० के० गज्जर है। इन्होंने अपनी बहिन को ख़ूब शिक्षिता बनाया है। बहिन का नाम शिवगौरी है, इनकी एक सहेली भी ऐसी ही योग्य हैं। उनका नाम वार्जीगौरी है। इन दोनों सखियों ने आपस में पक्का भायला जोड़ा और पक्का मनसूबा कर लिया कि वे अपना पूर्ण जीवन स्त्री-जाति की सुधार-चेष्टा ही में लगावेंगी। उन दोनों के पास दस हज़ार की पूंजी थी। प्रोफ़ेसर गज्जर के उद्योग से ४० हजार और हो गए। इतना धन लेकर उन्होंने "वनिता-विश्राम" नाम का एक विद्यालय खोल दिया।

यह बहुत दिन की बात नहीं है। केवल पाँच वर्ष की घटना है। सूरत के नगर पालिया गोपीपुरा में स्थान तजवीज़ हुआ। दोनों सखियों की ऐसी इच्छा थी कि इस विद्यालय में विशेष कर ऐसी स्त्रियों को शिक्षा दी जाय जो पढ़-लिख कर स्त्रियों के सुधार में ही अपने जीवन को लगा दें। उनको सब प्रकार की सहायता पहुँचाने का भार दोनों सखियों ने अपने ऊपर लिया। यह सोचा गया कि देशी भाषा के द्वारा ही स्त्रियों को शिक्षा दी जाय और उन्हें सभ्य स्त्रियों के समान आचरण सिखाये जायँ, उनके मन ऐसे हों कि वे उनकी सहायिका हों, उपदेश देने का काम भी करें और साधारण स्त्रियों को मूर्खता की निद्रा से

जगाकर उनके अन्तःकरण में उन्नति का बीज बो दें। इस विद्यालय में जो स्त्रियाँ पढ़ कर तैयार हों वे विदुषी होकर भी अभिमान-शून्य हों। ऐसी न हों जो अपनी विद्या के उसक में सब को तुच्छ-दृष्टि से देखने लगें। पढ़ने-लिखने का यह फल होना चाहिए कि अपनी अनपढ़ी भोली बहिनों के साथ सरलता और प्रेम का व्यवहार करके उनके अन्तःकरण में यह बात जमा दें कि विद्या के प्रभाव से ही स्त्रियाँ सच्ची देवी बन सकती हैं।

ऐसे विचारवाली स्त्रियाँ प्रारम्भ में मिलना कठिन था। पहले वर्ष केवल चार मिलीं। दूसरे वर्ष की चेष्टा से दो और मिलीं। सन् १९०९ में उनकी संख्या ६ हो गई। १९१० में १२ नई आईं। परन्तु, इसी बीच में कई स्त्रियाँ चली भी गईं। वे ऐसी थीं जिनका मन पठन-पाठन में नहीं लगता था, अथवा जिनको यहाँ नियम-पूर्वक रहना अखरता था। सन् १९११ में बोर्डिङ्ग-हौस में रहनेवाली स्त्रियों की संख्या २२ थी। उनमें १४ ब्राह्मणी और शेष अन्य जाति की थीं। कुछ काल से ब्राह्मणों ने यह व्यवस्था दे दी है कि शूद्र और स्त्रियाँ ही परिश्रम का काम करती हैं, यदि ये दोनों भी विद्वान् हो जायँगे तो फिर परिश्रम का काम कैसे चलेगा? यह विचार देश के लिए बड़ा हानिकारी हुआ। विद्या न होने से शूद्र लोगों की दशा बहुत बिगड़ गई और वे इतने गिर गये कि उनको मन्दिरों में घुसने तक का अधिकार न रहा। इससे वे इतने

मैले-कुचैले रहने लगे कि भले आदमियों को उनके स्पर्श से स्नान करना आवश्यक हुआ। विद्वान् लोगों ने उनसे मिलना त्याग दिया और शूद्र बेचारे पशुओं के समान आत्मोन्नति से वञ्चित हो गये, यही दशा स्त्रियों की हुई। आजकल स्त्रियों के विचार भी शूद्रों के समान पाये जाते हैं। उनमें अनेक झूठे विश्वास ऐसे ही वर्तमान हैं जैसे शूद्रों में। हमारे प्रान्त में ऐसे देवता पूजे जाते हैं जिनके पुजारी भंगी, कोली, चमार हैं। मुसलमानों के पीर और सैयद भी बडे आदर से पूजे जाते हैं। यद्यपि विद्या के अभाव से स्त्रियों के धार्मिक-विचार तो बदल गये, परन्तु, विद्वान् पुरुषों की सेवा-सत्सङ्ग में रहने के कारण वे अधःपतन से बची रहीं। जब इस देश में स्त्रियों को पढ़ने-पढ़ाने की चर्चा चली तब अनेक ब्राह्मण विधवाओं और कन्याओं ने ही विद्योपार्जन में अपना अनुराग दिखाया, क्योंकि वे अपने पढ़े-लिखे भाई बन्धुओं के सत्संग में रहकर विद्या के लाभों को सर्वदा देखती रही हैं। केवल पुरुषों की जबरदस्ती ही थी कि उनको शिक्षा प्राप्त न करने दी। "वनिताविश्राम" में सबसे अधिक संख्या ब्राह्मणियों की हुई।

जिस तरह प्रोफ़ेसर गज्जर ने अपनी बहिन को शिक्षा देकर उसके हृदय में नये भाव उत्पन्न कर दिये, अर्थात् अपनी बहिन को इस योग्य कर दिया कि वह अपने को, अपने देश की मूर्ख स्त्रियों और लड़कियों को शिक्षित करने की चेष्टा में लगा दे, इसी तरह के अब और भी सज्जन हैं जिनकी यह आन्तरिक

अभिलाषा है कि उनकी बहिन-बेटियाँ शिक्षा पाकर देश का कुछ कल्याण करें। "वनिताविश्राम" में अपने खर्च से पढ़ने-वाली १८ लड़कियाँ हैं। इनके माता-पिता अथवा भाई बहुत रुपयेवाले हैं और वे चाहते हैं कि उनकी लड़कियाँ उत्तम शिक्षा पाकर अपना जीवन उत्तम रीति से व्यतीत करें। रोज पढ़ कर अपने घर चली जानेवालियों की संख्या १२५ है। इस विद्यालय में उन स्त्रियों के पढ़ने का प्रबन्ध भी किया गया है जो गृहस्थाश्रम में हैं। उनके पढ़ने के लिए वह समय रक्खा गया है जब कि वे अपने घर के काम-काज कर चुकती हैं। प्रायः १० बजे तक घर का धन्धा रहता है, जब पुरुषगण भोजनादिक करके अपने काम पर चले जाते हैं, तब स्त्रियाँ घरों में बैठ कर केवल गप्पें हाँकती रहती हैं अथवा अपने अड़ोस-पड़ोस वालियों के साथ नाहक की तकरार किया करती हैं। यह असल में अवकाश का समय है जो विद्योपार्जन में लगाया जा सकता है।

वनिताविश्राम में पढ़नेवाली स्त्रियाँ गृहस्थ के काम-काज के लिए पूरा समय पाती हैं। वे सवेरे घर का काम निपटाकर आती हैं और शाम का काम आरम्भ होने से पहले घर पहुँच जाती हैं। गृह-प्रबन्ध की शिक्षा देने का प्रबन्ध किया जा रहा है। घर में थोड़े खर्च से अच्छा काम हो यही बड़ी भारी बात है। कोई पदार्थ नष्ट न होने पावे, सर्वदा घर भरा-पूरा रहे, जिस समय जिस चीज की जरूरत हो घर में से निकल आवे। ऐसा न हो

कि जब रसोई बनने लगे उसी समय नमक मँगाने की याद आवे। पुराने कपड़ों की मरम्मत, मैलों की धुलाई तथा आवश्यकतानुसार नये कपड़ों के बनाने का ध्यान रहे—यही सब गृहप्रबन्ध की बातें हैं। घर की सफ़ाई, लिपाई, सिलाई भी समयानुसार की जाय। जो गृहिणी बनकर इन बातों का ध्यान नहीं रखती वह अपने घर को सुचारुरूप से नहीं चला सकती। दूध, दही तथा खट्टी चीजों की सम्हाल, अचार-चटनियों का शुद्धता-पूर्वक डालना और निकालना रसायनशास्त्र की बातें हैं। इस विद्यालय में गृहिणियों को हिसाब रखने की क्रिया भी बताई जाती है। उनको यह मालूम होना चाहिए कि घर में क्या ख़र्च होता है, कब कौन चीज़ कितने में आई, नौकरों को किस दिन तलब दी गई, दूधवाले का क्या हिसाब हुआ, धोबी ने महीने में कितने कपड़े दिये, कितने फाड़े, कितने खोये, उसकी मज़दूरी क्या हुई ये सब हिसाब की बातें छोटे-मोटे सब घरों में हैं। बहुतेरी स्त्रियाँ देन-लेन करती हैं; परन्तु, पढ़ी-लिखी न होने से यह हिसाब नहीं रख सकतीं कि किस दिन, किसको, कितना रुपया दिया। सर्वदा ब्याज फैलाने में चकराया करती हैं। कभी-कभी भूल भी हो जाती है। इसी प्रकार बच्चों को तन्दुरुस्त रखने के लिए थोड़ी-बहुत दवा-दारू का जानना बुरा नहीं है। ऐसा होने से वे बच्चों की कठिन बीमारियों के लिए सर्वदा सावधान रहती हैं और मूर्ख लोगों की बहकावट में आकर झाड़-फूँक पर विश्वास नहीं करतीं।

वैद्य, हकीम या डाक्टर जो कुछ कहता है उसी पर चलती हैं। ऐसा देखा गया है कि मूर्ख स्त्रियाँ मर्दों की लाई हुई दवाई को तो फेंक देती हैं और स्याने-लोगों की बातों पर विश्वास करके उठाने उठाती हैं, मिन्नतें मानती हैं, जो करने का काम है उसको न करके बच्चों को पीरों, फकीरों के पास लिये फिरती हैं। इस विद्यालय में शिशु-पालन की रीति बताई जाती है। बच्चों को कब, कितना दूध मिलना चाहिए, उन्हें कैसे नहलाना-धुलाना तथा बहलाना चाहिए यह सब बताया जाता है। गाने-बजाने की शिक्षा भी अब आवश्यक हो गई है। हमारे यहाँ ब्याह-शादियों में गाने-बजाने का काम आजकल भी स्त्रियाँ ही करती हैं और इस काम को ऐसी बुरी तरह से करती हैं कि भले आदमियों को उससे घृणा हो गई है। इस विद्यालय में बाजा बजाने और अच्छे गीत गाने की शिक्षा दी जाती है। चित्रकारी करना भी स्त्रियों के लिए बहुत अच्छा कर्म है। अतः यहाँ चित्रकारी सिखाई जाती है। सिलाई और बेल-बूटों के बनाने का काम तो यहाँ बहुत अच्छा होता है। यहाँ पढ़नेवाली जो माल तैयार करती हैं वह सब एक ख़ास दूकान पर भेज दिया जाता है और जो कुछ बिक्री होती है उससे नया माल ख़रीद कर तैयार किया जाता है और इसका हिसाब दूकानदारी के ढङ्ग से रक्खा जाता है। यद्यपि अभी इस काम में बहुत फ़ायदा नहीं है, परन्तु, क्रमशः इसमें लाभ अवश्य होगा। जो स्त्रियाँ चाहती हैं उनको संस्कृत अथवा अङ्गरेज़ी भी

सिखाई जाती है। विद्यालय की इच्छा है कि जो स्त्रियाँ घर के धन्धे सीखती हैं वे उसी में तरक्की करें, उनको साहित्य की इतनी आवश्यकता नहीं है। सबसे भारी जरूरत इस बात की है कि उनके सिर में से झूठे वहम और विश्वास उड़ जायँ।

विद्यालय में पढ़ाई के सब सामान मौजूद हैं। किंडर-गार्टन में जिन खिलौनों की ज़रूरत होती है वे सब यहाँ हैं। नक़्शे भी हैं। एक छोटा सा पुस्तकालय है जिसमें स्त्री-शिक्षा की सब पुस्तकें हैं और भी शुद्ध विचार की अच्छी-अच्छी पुस्तकें विद्यमान हैं। पुस्तकावलोकन से मनुष्य की बुद्धि पर बड़ा असर होता है। अच्छा सत्सग और अच्छी पुस्तक पढ़ना एक सा ही समझना चाहिए। अवकाश के समय ऐसी पुस्तकें पढना जिनमें हृदय के विचार ऊँचे हों सब स्त्रियों का कर्तव्य है।

वनिताविश्राम में तन, मन, धन से काम करनेवाली जैसी ये दो सखियाँ हैं ऐसी और कोई नहीं हैं। अभी तक पूरी अध्यापिका भी नहीं मिल सकती हैं। दो बुड्ढे सज्जन शिक्षा-कार्य में सहायता देते हैं, परन्तु, चेष्टा ऐसी हो रही है कि पुरुषों का प्रवेश बिलकुल बन्द कर दिया जाय। शिक्षा का सब काम स्त्रियों के हाथ ही में रह जाय। विद्यालय स्थापन करनेवाली दोनों सखी रात-दिन यहीं रहती हैं तथा बोर्डिंगहौस में जो लड़कियाँ हैं वे अपना सब काम अपने हाथ से करती हैं। इस

बात पर बड़ा ध्यान रहता है कि सब काम नियमपूर्वक हो। सफ़ाई और तन्दुरुस्ती ठीक रखने के अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि जो काम हों उत्तम रीति से हों। अपना काम अपने हाथों करने में दो लाभ हैं, एक तो ख़र्च कम होता है, दूसरे काम का अभ्यास रहता है।

आज कल इस बात की शिकायत की जाती है कि स्कूल जानेवाली लड़कियाँ घर के काम-काज में कुछ सहायता नहीं देतीं और लड़कों की तरह घर के सब कामों से अलग रहती हैं। ऐसी लड़कियों की माँ इस चिन्ता में रहती हैं कि जबतक घर का धन्धा करने का अभ्यास न कराया जायगा तबतक केवल पुस्तकें पढ़ने से कुछ लाभ न होगा। परन्तु, जो लड़कियाँ बोर्डिङ्ग में रहती हैं उनको घर के सब काम करने का मौक़ा मिला करता है, वे अपना रसोई आप करें और अपने सब ख़र्च का हिसाब रक्खें। वनिताविश्राम में इस बात पर पूर्ण ध्यान दिया जाता है। जो धन इस विद्यालय में लगा है उसको सँभालनेवाली एक सभा है। इस सभामें वे ही लोग शामिल होते हैं जो कम से कम ५००) रुपया देकर विद्यालय की सहायता करते हैं। जो चन्दा इकट्ठा होता है वह ऐसे काम में लगा दिया जाता है जहाँ से अच्छा लाभ मिलता रहे। जो ऐसे साहूकार हैं जिनकी प्रतिष्ठित दूकान है, अथवा बैङ्क है, उनके यहाँ रुपया जमा कर देने से ब्याज मिला करता है। इस ब्याज से ही सब ख़र्च चलाया जाता है। मूल धन ज्यों का त्यों रक्षित

रहता है। दोनों सखी यह इरादा कर रही हैं कि मूल धन १० लाख हो जाय तो यह विद्यालय बहुत अच्छी तरह से चल सकेगा। जैसे मिसेज वेसेण्ट नाम की वृटिश महिला ने अपने उद्योग से हिन्दू-कालेज बना कर दिखा दिया है, उसी तरह ये दोनों स्त्रियाँ भी अपने इस विद्यालय को अटल बनाने की चिन्ता में हैं। परमात्मा उनकी अभिलाषा अवश्य पूर्ण करेगा। अङ्गरेज़ी भाषा में कहावत है कि "परमेश्वर उनकी सहायता करता है जो स्वयं अपनी सहायता करते हैं।" संस्कृत में एक वाक्य है—"सत्यश्रमाभ्यां सकलार्थ सिद्धः।"

लखनऊ की सरकारी कन्या-पाठशाला

पत्र नं० १३—

वार्षिकोत्सव की तैयारियाँ—अभिनन्दनपत्र—किंडरगार्टन का खेल और बातचीत—व्यायाम—पर्दे में लड़कियों का आना जाना—परीक्षा का फल—बोर्डिंग हौस का सुप्रबन्ध—रसोई शिक्षा—जमनास्टिक।

विगत २५ तारीख को तुम्हारे स्कूल का वार्षिकोत्सव था। प्रधानाध्यापिकाजी ने कृपा करके मुझे भी निमन्त्रण दिया था, परन्तु, मेरा आना न हो सका। आज एक अङ्गरेज़ी अख़बार में जलसे का पूरा वृत्तान्त छपा है। तुम्हें यह जानने की उत्कंठा अवश्य होगी कि पाठशाला के सम्बन्ध में क्या-क्या बातें प्रकाशित हुई हैं। अतः आज की चिट्ठी में उन सब का संग्रह करता हूँ। अख़बार लिखता है कि स्कूल से बाहर एक शामियाने के नीचे उत्सव मनाया गया था। लेडी हिवेट जो हमारे प्रान्त के लेफ़्टि-नेंट गवर्नर की धर्मपत्नी हैं इस कार्य्य की अधिष्ठात्री बनीं। यह पहला मौका है कि इस पाठशाला की हिन्दू लड़कियों ने खुले मैदान में इस उत्सव को मनाया, मुसलमान लड़कियाँ पर्दे के भीतर रहीं। उनके पारितोषिक-वितरण-काल में पुरुषों का प्रवेश न था। पर्देवाली लड़कियाँ ख़ूब सजी थीं और जेवरों से लदी थीं, मानो दिल्ली दरबार की तैयारी थी। हिन्दू लड़कियों के खेल देखने के लिए कुछ पुरुषगण भी उपस्थित हुए थे।

खेल दिखानेवाली लड़कियाँ एक ऊँचे चबूतरे पर एकत्रित हुईं। ये लडकियाँ दो पंक्तियों में थीं। एक तरफ़ बड़ी-बड़ी, दूसरी तरफ़ छोटी-छोटी। सब बहुत सुन्दर वस्त्र पहिने हुए थीं। जब लेडी हिवेट उत्सव में पधारीं तब एक छोटी लड़की ने उनको पुष्प भेंट किये, दूसरी ने एक सुन्दर कढ़े हुए वस्त्र सहित अभिनन्दन-पत्र भेंट किया। अभिनन्दन-पत्र एक लडकी ने पढ़ा जिसका आशय यह था—

"श्रीमतीजी! हम आपका धन्यवाद करती हैं और आज आप के यहाँ विद्यमान होने के लिए कृतज्ञता प्रकाश करती हैं। इस पाठशाला की अध्यापिका और कन्याएं सर्वदा इस अवसर को स्मरण रक्खेंगीं और आज की बात इस पाठशाला के इतिहास में एक प्रसिद्ध घटना रहेगी। हम हृदय से गवर्नमेंट के इस उपकार को स्मरण करती हुईं धन्यवाद देती हैं कि गवर्नमेंट ने स्त्री-शिक्षा में जो सहायता की है और उत्साह प्रदान किया है उसीका यह प्रभाव है कि आज हम पर्दे के भीतर सड़ने की कुरीति को तोड़ कर बाहरी प्रकाश में आने को समर्थ हुई हैं। हम अपने को इस उन्नति का अगुआ समझती हैं और आशा करती हैं कि हमारी पर्दानशीन बहिनें धीरे-धीरे, परन्तु, निश्चय, हमारा अनुकरण करेंगीं। किसी का वचन है कि जो जीतेगा वही भविष्य में अधिकारी बनेगा, आप यदि कृपा-पूर्वक आज्ञा देंगी तो हम आपको दिखावेंगी कि गवर्नमेंट की चेष्टा से स्त्री-शिक्षा का क्या फल हुआ है? हम विश्वास करती हैं कि इसको आप

कुछ कम सफलता न समझेंगी। कर्म करना मनुष्य का काम है और फल देना परमात्मा के हाथ है।

जब व्याख्यान पूर्ण हुआ तब कुमारी 'ली' के नीचे किंडर-गार्टन के खेल प्रारम्भ हुए जिनको छोटी लडकियों ने दिखाया। इस समय तीन लडकियों ने चन्द्रमा के सम्बन्ध में वाद-विवाद किया। एक चोथी लडकी ने वातचीत आरम्भ होने से पहले दर्शकों का बताया कि ये कन्याएं चन्द्रमा के सम्बन्ध में कुछ बात-चीत करेंगी। अन्य लडकियों ने गीत गाये और चक्की पीसने का दृश्य दिखाया। वे अपने कर्त्तव्य में ऐसी दत्तचित्त थीं कि उन्हें दर्शकों का बिल्कुल ध्यान न था, फिर भला किसीसे शर्माने की तो चर्चा ही क्या है। बडी लडकियों की कसरत बहुत बढ़िया थी। प्रधानाध्यापिका मिसेज बूचर के उद्योग का ही यह फल था कि कसरत बहुत अच्छी तरह सिखाई गई, लडकियों की गति बहुत ठीक थी। खेल दिखानेवालियों के पैरों में झाँझन थीं। खेल दिखाने में उन सब के पैर ऐसे अन्दाज म जमीन पर पडते थे कि सब का एक ही शब्द सुनाई देता था। पैरों की अलग-अलग आवाज़ न आती थी। कानों द्वारा ऐसा जान पडता था मानो एक ही लडकी झाँझन पहने हुए है। कई कसरतें बडी कठिन थीं, परन्तु, लडकियों ने उनको बडी सफाई से दिखाया। ये सब लडकियाँ पूर्ण आरोग्य और पुष्ट थीं जिससे यह सिद्ध होता था कि उन पर कसरत ने बहुत अच्छा असर किया है। उस श्रीमती की जितनी प्रशसा

की जाय थोड़ी है जिसने लड़कियों को कसरत करने का ऐसा सुन्दर अभ्यास कराया।

खेल पूर्ण होने पर स्कूल की रिपोर्ट पढ़ी गई।

बड़ी मिस साहिबा मिस हेरिस ने पाठशाला के वार्षिक-विवरण में पढ़ कर सुनाया कि इस पाठशाला में पर्दे का बहुत अच्छा प्रबन्ध है। बाहर के जलसे में केवल वही हिन्दू-लड़कियाँ शामिल हुई हैं जिनके माँ-बाप ने उन्हें बाहर आने की आज्ञा लिख भेजी है। शेष सब लड़कियों को भीतर ही पारितोषिक बटना स्थिर हुआ है। इस समय पाठशाला में पढ़नेवालियों की संख्या २१८ है, इनमें ५६ ऐसी हैं जो यहीं रहती हैं। ४५ हिन्दुओं और ११ मुसलमानों की लड़कियाँ हैं, शेष १६३ शहर से आती हैं और पढ़ कर प्रतिदिन अपने घरों को चली जाती हैं। यहाँ रहने वाली लड़कियों का चुनाव प्रधान-निरीक्षिकाजी करती हैं। वे इस बात का बड़ा ध्यान रखती हैं कि उत्तम कुल और आचरण वाली लड़कियाँ ली जाँय। बोर्डिंगहौस में रहने से सरकारी सहायता भी मिलती है। अधिकतर यहाँ संयुक्त-प्रान्त की ही लड़कियाँ हैं; परन्तु, इस वर्ष कोटा राज्य से भी ३ लड़कियाँ आई हैं, उनको राज्य ही सहायता दे रहा है। दिन में जो पढ़ने आती हैं उनमें मुसलमान बहुत हैं जो अच्छे घरों की हैं, कुछ ग़रीब कन्याएँ भी हैं। अगले वर्ष इस पाठशाला की और भी उन्नति होगी; क्योंकि, गवर्नमेंट से प्रार्थना की गई है कि स्कालरशिप बढ़ा दिये जायँ। शहर की लड़कियाँ पर्दे की गाड़ी में

आती हैं। इन गाड़ियों की संख्या विशेष कर दी जायगी। बोर्डिंग हौस में अब एक नई इमारत बन गई है जिसके कारण अब ७० लड़कियों के रहने योग्य स्थान हो गया है।

वार्षिक-परीक्षा का फल बहुत अच्छा रहा है। पिछले वर्ष ८ लड़कियों ने मिडिल की परीक्षा दी थी, उनमें से ६ पास हुईं। ६ अध्यापिका-परीक्षा में शामिल हुईं थीं, वे सब अव्वल दर्जे में पास हुईं। इस साल मिडिल की परीक्षा देने वाली १२ लड़कियाँ हैं और अध्यापिका-परीक्षा की सनद प्राप्त करनेवाली ६ लड़कियाँ हैं।

प्रधान निरीक्षिका ने इस पाठशाला को निरीक्षण करके जो व्यवस्था दी है उसको देखने से बड़ा सन्तोष होता है। उन्होंने लिखा है कि इस पाठशाला का शिक्षा-कार्य और प्रबन्ध बहुत सन्तोष-जनक है। जिनके हाथ में पाठशाला का प्रबन्ध है, उनके घोर परिश्रम और अविरत प्रयत्न के प्रभाव से ही यह महा कठिन कार्य्य ऐसी उत्तम रीति से चल रहा है। बोर्डिंगहौस में अब अच्छी-अच्छी कन्याएं आने लगी हैं। तीन कन्याएँ ऐसी हैं जिनके रक्षक सहायता न लेकर सब व्यय स्वयं करते हैं। दिन में पढ़नेवाली लड़कियों में भी अब कुछ ऐसी हैं जिनके रक्षक स्त्री-शिक्षा से बड़ा अनुराग रखते हैं, परन्तु, अभी तक ऐसे माँ-बाप बहुत हैं जो कन्याओं को पढ़ाने में पूरी चेष्टा नहीं करते। यही कारण है, कि छोटे दर्जे की लड़कियों को नियमितरूप से पाठशाला में लाना इतना कठिन हो रहा है।

जिस दर्जे में लड़कियाँ बहुत ग़ैरहाज़िर रहती हैं उसमें पढ़ाई का भी नुकसान होता है। छोटे दर्जों में इसी कारण से लड़कियों की शिक्षा शीघ्र समाप्त कर देनी होती है।

सन् १९०८ में यह पाठशाला प्रारम्भ हुई थी, यहाँ से अब तक ४० अध्यापिकाएँ पास हो कर गई हैं और कई पाठशाला इस प्रान्त में उनके द्वारा चल रही हैं। विगत जनवरी महीने में कानपुर की स्त्री-शिक्षा-प्रचारिणी सभा की ओर से कुछ सज्जन इस पाठशाला को देखने आए थे। यहाँ पर बहुत सी लड़कियाँ ऐसे सज्जनों की हैं जिनके यहाँ पर्दे का रिवाज है इस लिए पढ़ते हुए उनकी लड़कियों को दर्शकों को दिखाना ठीक न था। केवल कुछ हिन्दू लड़कियों को उन्होंने देखा था। पाठशाला का सब हाल देखकर उन्होंने जो अपनी सम्मति दी उसका कुछ अंश यह है:—

"हमने इस पाठशाला को इतना सर्वप्रिय पाकर बड़ी प्रसन्नता प्राप्त की। पाठशाला में रहनेवाली कन्याओं को यहाँ बहुत दृढ़ शासन में रहना पड़ता है, बोर्डिंगहौस का प्रबन्ध ऐसा उत्तम है जैसा लड़कियों के लिए होना चाहिए। रहने के घर साफ़ और उनमें सब चीज़ें तरतीब और सुघड़ाई से रक्खी हुई हैं। लड़कियाँ भी सुथरी, सजग और प्रसन्न जान पड़ती हैं, पर्दे का विचार रक्खा जाता है, किसी के धार्मिक विचारों में बाधा नहीं दीजाती। जहाँ पर पढ़ाई होती है वहाँ के नियम पूर्ण सन्तोष देने वाले हैं। यथा नियम और निश्चित रीति से

सब कार्यों को चलाने में पूर्ण परिश्रम करने का विचार रखना शिक्षाप्रणाली का यहाँ दृढ उद्देश्य है। प्रतिदिन सब कार्य्य यथा क्रम होते हैं। सिलाई और कढ़ाई के नमूनों को देख कर मालूम होता है कि इस विषय में यहाँ अच्छी उन्नति है।"

सिलाई सिखाने पर यहाँ यथोचित ध्यान दिया जाता है। मरम्मत और कतरब्योंत करना बताया जाता है। साधारण सिलाई के सिवाय बेल-बूटे काढने का काम भी यहाँ होता है। हाथ से मोजा बुनना और कल के द्वारा तैयार करना भी सिखाया जाता है। इस वर्ष से चित्र-विद्या भी यहाँ की शिक्षा में शामिल कर दी गई है। पाक-शिक्षा का अभी ठीक ठीक प्रबन्ध नहीं हुआ है, परन्तु, आशा की जाती है कि शीघ्र ही इसका काम खुल जायगा क्योंकि सरकार ने पाक-शिक्षा देने के लिए दो नई अध्यापिकाएँ नियत करना स्वीकार कर लिया है।

पहले बोर्डिंग की लड़कियों को कसरत करने में रुचि नहीं थी, परन्तु, अब उनके विचार बदल गये हैं। आज कल कसरत और खेल उनका प्रतिदिन का कार्य होगया है, इसका फल यह हुआ है कि अब वे बहुत तन्दुरुस्त रहती हैं, उनका स्वास्थ्य बहुत अच्छा है। उनको कभी बोर्डिंगहौस से बाहर ले जाने का भी नियम है। बाहर वे किसी प्रसिद्ध इमारत को देखती हैं, दूसरी कन्या पाठशालाओं में जाती हैं, कहीं अच्छा खेल होता है तो उसमें शामिल होती हैं। अभी जो दिल्ली दरबार की घटना चित्रों द्वारा दिखाये जाने का प्रबन्ध हुआ था उसमें

ये लड़कियाँ भी गई थीं। कभी-कभी स्कूल ही में इनके लिए व्याख्यान सुनाने का प्रबन्ध कर दिया जाता है, कभी ये लड़कियों के बड़े कालेज में भेज दी जाती हैं।

यहाँ जो पुस्तकालय है उसमें अब तक बहुत कम पुस्तकें रही हैं। हर्ष की बात है कि अब गवर्नमेंट ने इस पुस्तकालय के लिए और पुस्तकें ख़रीदने की आज्ञा दी है।

इस वर्ष पाठशाला की अध्यापिकाओं में कुछ परिवर्तन हुआ है। श्रीमती बूचर जो मेरठ-डिवीजन की निरीक्षिका थीं यहाँ के माडल स्कूल की हेडमिस्ट्रैस नियुक्त हुई हैं। श्रीमती रामेट के इस्तीफ़ा देने के बाद किंडरगार्टन की शिक्षा देने के लिए एक नई अध्यापिका आई हैं। इस समय यह बात बड़े हर्ष से प्रकाशित की जाती है कि यहाँ की अध्यापिकाएँ अपने कार्य में सच्ची सहानुभूति और प्रेम रखती हैं।

इस पाठशाला का यथार्थ उद्देश यह है कि अच्छी लड़कियाँ मिलें और उन्हें सब तरह से व्यावहारिक शिक्षा दें, जिससे वे अपने जीवन में अपने कर्तव्यकर्म को पूर्ण करने के योग्य बन जायँ।

अन्त में लेडी हिवेट तथा अन्य दर्शकों का धन्यवाद है जिन्होंने कृपापूर्वक यहाँ पधारने की कृपा की। प्रिय पुत्री! मुझे इस बात से बड़ा सन्तोष है कि तुम ऐसी अच्छी पाठशाला में पढ़ रही हो। ऊपर लिखी रिपोर्ट में मेरे लिए बड़े हर्ष की

बात यह है कि तुम्हारे यहाँ रसोई बनाने को क्रिया भी सिखाई जायगी। यह ठीक है कि तुम साधारण रसोई बनाने में सिद्ध-हस्त हो, तब भी, नियमपूर्वक किसी काम का सीखना बहुत ही अच्छा है। आज कल केवल दिल्ली की एक कन्या-पाठशाला में हिन्दू लड़कियों को रसोई बनाने का काम सिखाया जाता है। शादी के पीछे पराये घर में बहुओं की पहली चतुराई रसोई-द्वारा ही परखी जाती है। तुम्हारी माँ कहती हैं कि जब वे हमारे घर आई थीं तब एक दिन उनके हाथ से कई तरह का पकवान बनवाया था और सब गाँव में बाँटा गया था। यह मानो उनकी परीक्षा थी। इन्द्रप्रस्थ गर्ल्स स्कूल में पढ़ाई हो चुकने के पीछे लड़कियाँ सीना-पिरोना, खाना पकाना तथा घर के अन्य कार्यों को अपने हाथ से करने का अभ्यास करती हैं। कुछ वर्ष हुए स्कूल में पढ़ने वाली लड़कियों का इम्तहान खाना पकाने के काम में लिया गया। ६ लड़कियों में से पाँच-पाँच पदार्थ तैयार कराये गये अर्थात् पूरी, साग, खीर, सेमई और हलुआ। इम्तहान के दिन स्कूल के हाते में बड़ी चहल-पहल रही। लड़कियाँ बर्तन माँजने, साफ करने, चूल्हा जलाने, तरकारी तराशने, चावल बीनने आदि में लग गई। इस के बाद उनको पदार्थ बनाने के लिए समय बता दिया गया, जब वक्त पूरा हो गया तब लड़कियों ने काम बन्द कर दिया। इनके पकाये हुए पदार्थों की जाँच कई चतुर स्त्रियों ने की और हर एक को नम्बर दिये गये। यह एक नई तरह की परीक्षा थी, सम्भव है कि अगले

साल ऐसी ही परीक्षा तुम्हारे स्कूल में जारी हो जाय और तुम पारितोषिक प्राप्त करो। हरदेवी को अभी तक रसोई करने का ढंग ठीक-ठीक नहीं आता। वह भी अब सँभल जायगी।

इस सप्ताह तुम्हारी जो चिट्ठी आवेगी उसके लिए हम सब बहुत ही उत्कंठित हो रहे हैं, क्योंकि हम यह जान जायँगे कि तुमने किस-किस काम में क्या इनाम पाया और हरदेवी को क्या मिला। भाई प्यारेलाल ने अपने दर्जे में अव्वल इनाम लिया है। उसको दो पुस्तकें मिली हैं। एक शेक्सपियर का नाटक है और दूसरी इतिहास-सम्बन्धी पुस्तक है। जमनाष्टिक के खेल में भी वही अव्वल रहा और पहला इनाम पाया। पिछले वर्ष आगरे में कमिश्नरी भरके लड़के इकट्ठे हुए थे, यहाँ पर भी उसको दो तमग़े मिल चुके हैं। उसके पास सबसे बड़े गहने ये ही हैं। रामजी ने भी एक छोटा सा मेडिल जमनाष्टिक में प्राप्त कर लिया था। यहाँ की-पुलीस के बड़े साहब ने बड़ी ख़ुशी से यह तमगा उसकी छाती पर लगाया था और एक रुपया मिठाई खाने को दिया था। तुम्हारे स्कूल में जो कसरत का खेल हुआ था उसमें तुम दोनों बहिन शामिल हुई होगी और अन्य खेलों का अभ्यास भी दिखाया होगा। ये सब बातें तुम्हारे अगले पत्र द्वारा ज्ञात होंगी।

लखनऊ में लडकियों का कालेज

पत्र नं० १४--

अध्यापिका—नया मदरसा—व्याख्यान का प्रबन्ध—विलायत की लडकियाँ—धनी घर की लडकियाँ—गरीबों की सहायता—बच्चे वाली स्त्रियों की शिक्षा—आर्य समाज और स्त्री शिक्षा—स्वामी मङ्गलदेव।

दिसम्बर की छुट्टियों में आकर तुम वृन्दावन में गुरुकुल खुलने का उत्सव देख गई हो और साथ ही महिला-परिषद् के व्याख्यान भी सुन गई हो। तुमको यह जानकर आनन्द होगा कि हाथरस की एक धनवती स्त्री ने कन्या-गुरुकुल खोलने के लिए यथेष्ट धन दिया है और शीघ्र ही गुरुकुल खुल जायगा। मैं देख रहा हूँ कि अब लोगों का ध्यान लडकियों के पढाने की ओर गया है और जगह-जगह कन्या पाठशालाएँ खुलती जाती हैं। बडी मुश्किल इस बात की है कि योग्य अध्यापिकाएँ नहीं मिलतीं। जो मिलती हैं उन्हें स्कूलों का प्रबन्ध करना नहीं आता। तुम्हारे स्कूल से जो अध्यापिकाएँ अब पास होकर निकलेंगी उनकी बडी माँग होगी। यह सच है कि अभी हमारे देश में लडकियों को केवल नागरी की शिक्षा की ही दरकार है, अङ्गरेजी की इतनी जरूरत नहीं है। परन्तु, जिन्होंने अध्यापिका बन कर अपनी बहिनों को शिक्षित करने का व्रत लिया है उनके लिए अँगरेजी भी जानना परमावश्यक

है। लखनऊ के लाल बाग में जो विद्यालय है वह इसके लिए बडा उद्योग कर रहा है।

१६ फरवरी को वहाँ एक जलसा हो चुका है। इसका वृत्तान्त पढने से मुझे ज्ञात हुआ है कि यहाँ बी० ए० तक की पढाई है। पिछले वर्ष यहाँ से तीन लडकियाँ बी० ए० की परीक्षा में गई थीं और तीनों हो पास हुईं। एफ० ए० में ७ लड़कियाँ गईं और ५ पास हुईं। इन्ट्रेंस में सात की सातों पास हो गईं। जो लडकियाँ अध्यापिका बननेवाली थीं वे भी सात थीं और सब पास हो गईं। नीचे के दर्जे में २११ लड़कियाँ हैं इस विद्यालय में लीलावती के नाम से एक बोर्डिङ्ग हाउस साठ हजार रुपये की लागत से तैयार हो रहा है।

इसमें ८ डार्मिटरी बनेंगीं। एक डार्मिटरी का कमरा इतना बड़ा होगा कि २५ लडकियाँ रह सकें, साथ ही अध्यापिका के लिए भी एक कमरा लगा हुआ होगा। एक कमरा छोटी लड़कियों के खेलने के लिए और दूसरा बड़ी लडकियों के पाठ याद करने के लिए होगा। बरांडे इतने चौडे होंगे कि गर्मियों के दिनों में रात को लडकियाँ अपनी चारपाइयाँ वहाँ बिछा कर सो सकें। स्कूल की इमारत भी नई बनने लगी है।

यहाँ पर हर शुक्रवार को व्याख्यान होते हैं। हर चौथे शुक्रवार को शहर की स्त्रियाँ भी आती हैं, उनके लिए हिन्दोस्तानी भाषा में व्याख्यान का प्रबन्ध होता है। कठिन विषय चित्रों

द्वारा मेजिकलेन्टर्न से समझाये जाते हैं। तुमने वायस्कोप का तमाशा सागर में देखा था। मैजिक लैन्टर्न से भी उसी तरह से तसवीर छाया जान पडती है। लखनऊ की स्त्रियाँ यहाँ पर्दे में बैठा करती हैं। पिछले दिनों उनको जो व्याख्यान सुनाये गये थे उनके विषय ये थे—(१) ससार भर की स्त्रियाँ, (२) ऊन किस तरह प्राप्त की जाती है, (३) नार्वे देश की यात्रा, (४) मिस्र में देखने योग्य स्थान।

सरस्वती नाम की एक दक्षिणी स्त्री ने विलायत से लिखा है कि इङ्गलैण्ड की आब-हवा ठण्डी होने के कारण वहाँ की लडकियाँ वहुत फुर्तीली होती हैं। वहाँ लडकियाँ भी लडकों के समान गेंद-वल्ला आदि के खेल खेलती हैं। ग़रीब घर वालियाँ तक शाम को अच्छे कपडे पहन कर टहलने के लिए जाती हैं। पढ़ना-लिखना तो वहाँ सवको आता है। वडी उम्र होने पर भी उनका विद्याव्यसन चलता रहता है। स्थान-स्थान पर ऐसे क्लास खुले हुए हैं जहाँ सव प्रकार की शिक्षा होती है। भोजन-क्रिया और सिलाई आदि का काम थोडी फीस पर सिखाया जाता है। जो लडकियाँ धनवान् माँ-बाप की हैं वे जब अपनी शिक्षा समाप्त कर चुकती हैं तव गरीव लडकियों को मदरसों में शौकिया पढ़ाती हैं। पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ घर के काम-काज के लिए नौकरों के आसरे नहीं रहतीं। वे वहुत सा काम खुद करती हैं। घर में निकम्मी कभी नहीं बैठतीं, बहुत सा समय तो लिखने-पढ़ने ही व्यय करती हैं।

लन्दन में एक ऐसा मुहल्ला है जहाँ ग़रीब लोग रहते हैं। इनमें बहुत से मनुष्य नीच प्रकृति तथा दुराचरण वाले होते हैं। उनकी लड़कियों को अच्छे मार्ग पर स्थिर रखने के लिए एक विदुषी स्त्री ने एक धर्मशाला खोला है। अन्य कई विदुषी और धनवती स्त्रियाँ उसकी मदद करती हैं। एक बडी योग्य डाक्टरानी भी इसके प्रबन्ध करनेवालियों में है। जो सयानी लडकियाँ पुतली घरों में काम करती हैं उनके लिए यह धर्मशाला बड़े सहारे की वस्तु है। बहुत सी लडकियाँ अपने दुराचारी सम्बन्धियों के उत्पीडन से तंग आकर यहीं रहती हैं, यहाँ वे सिलाई करती हैं, पुस्तकें पढ़ती हैं, कितनी ही भजन गाती हैं, बाजा बजाती हैं, कसरत करती हैं और जो बहुत शिक्षा पाई हुई हैं वे दूसरी लड़कियों को सिखाती हैं।

एक ऐसी सभा है जहाँ बच्चोंवाली स्त्रियाँ सातवें दिन एकत्र होती हैं। यहाँ पर उनको आरोग्यशास्त्र और स्वच्छता आदि की शिक्षा दी जाती है। बहुत सी स्त्रियाँ जो अपने बच्चों को घर पर नहीं छोड़ सकतीं साथ ले आती हैं। यह सभा विशेषतः गरीब स्त्रियों को है। सरस्वती बाई से इस सभा की एक सिखानेवाली कहती थी कि जब किसी का बच्चा रोने लगता है तब मैं व्याख्यान देना बन्द कर देती हूँ, जब चुप होता जाता है तब फिर बोलना शुरू करती हूँ।

बच्चों का पालन-पोषण करना यहाँ की स्त्रियाँ खूब जानती हैं। उनके घरों में चीजें तित्तर-बित्तर कभी नहीं रहतीं। बच्चे

आरम्भ से ही आज्ञा मानने वाले होते हैं। वे नियत समय पर सोते हैं और नियत समय पर ही उठते हैं। समय को नष्ट न करना उन्हें बचपन में ही सिखाया जाता है। साधारण घरों में बच्चों के लिए 'आया' नौकर नहीं रक्खा जाता, माता स्वयं ही उनको सम्भालती है, वही उन्हें बाहर हवाखोरी के लिए ले जाती है। भोजन बनाना और घर की झाड़-बुहार भी उसी को करनी पड़ती है। जिन बच्चों की वह माँ है उनके हृदय में देशभक्ति और विद्याभिरुचि का बीज बोना माताएँ अपना पवित्र कर्तव्य समझती हैं।

हमारे देश में स्त्री-शिक्षा के प्रचार का यश स्वामी दयानन्द के नाम पर है। उन्होंने आर्यसमाज स्थापित करने की युक्ति सोची थी। मैं समझता हूँ कि आजकल स्वामी दयानन्द का नाम सब पढ़े-लिखे लोग आदर से लेते हैं और उनकी कई शिक्षाओं को देश के लिए उपकारी समझते हैं। उन्होंने अपनी विद्या के बल से यह उपदेश फैलाया है कि लड़के और लड़कियों को समान समझ कर शिक्षा देना शास्त्र की आज्ञा है। जो वेद पुरुषों को सदुपदेश देने वाला है उससे स्त्रियों को कदापि वंचित न करना चाहिए। पुरुषों की भाँति स्त्रियों को भी सन्ध्या-वन्दन करना कर्तव्य है। तुमको आश्चर्य होगा कि आर्य-समाज में ऐसे सज्जन भी वर्तमान हैं जिन्होंने लड़कों की भाँति लड़कियों को जनेऊ दिलाया है। जिस तरह जनेऊ होने के पीछे लड़के का वेदारम्भ करते हैं उसी तरह लड़कियों को भी

वेदारम्भ कराया है। कई जगह आर्य स्त्रियों की सभा है। यहाँ वे वेद-मन्त्र पढ़ कर उनकी व्याख्या करती हैं। गायत्री का अर्थ बताती हैं। हमारे इस नगर में भा एक स्त्री-समाज खुला है। मैंने तुम्हारी जीजी से जब यह चर्चा की तब उसे विश्वास हो नहीं आया। घर के काम-धन्धों से कहीं जाने का उसे अवकाश नहीं मिलता; परन्तु, अब जब तुम छुट्टी पर घर आओगी तब किसी दिन उसे अवश्य ले जाना। वहाँ सामाजिक स्त्रियों के पवित्र भजन सुन कर उसका यह विचार बदल जायगा कि गन्दे गीत गाये बिना स्त्रियों को आनन्द नहीं आता।

आगरा-आर्यसमाज में एक स्वामी मङ्गलदेव हैं जो अपने शरीर को परोपकार ही में लगाये रहते हैं। इनके उद्योग से एक अनाथालय स्थापित हुआ है जहाँ बिना माँ-बाप के बच्चे पाले जाते हैं, पढ़ाये जाते हैं और उनको ऐसा काम भी सिखाया जाता है जिससे वे अपना जीवन स्वतन्त्र प्रकार से व्यतीत कर सकें। मङ्गलदेवजी कन्याओं को शिक्षा के लिए बहुत उद्योग करते हैं। शहर आगरे में कई कन्या-पाठशालाएँ इनके उद्योग से नियत हुई हैं। एक विधवा-आश्रम भी खोला गया था। अभी तक हमारे देश में धर्म-कार्य समझनेवाली स्त्रियों की बहुत कमी है। कन्या तथा बाल विधवाओं की सहायता के लिए योग्य विदुषी जब प्राप्त हों तब यह काम पूरा हो।

अन्ध, मूक और बधिर विद्यालय

पत्र नं० १५—

मस्तिष्क का महत्त्व—सूरदास—प्रज्ञाचक्षु पं० गट्टूलालजी शताबधानी—अन्धों का व्यवसाय—अन्धों की कर्णेन्द्रिय और स्पर्श-शक्ति—कलकत्ते का विद्यालय—अन्धकवि दलपतिराय—अन्य देशों में अन्धों के साथ व्यवहार—गूँगे लड़का का काम

जिस तरह देश का शासन राजा के द्वारा होता है, गृहस्थ का प्रबन्ध घर के बड़े बूढ़े के हाथ में रहता है उसी तरह हमारी देह का परिचालक मस्तिष्क है, मस्तिष्क का स्थान खोपड़ी के भीतर है। मस्तिष्क का ही नाम दिमाग है। उसको भेजा भी कहते हैं। मनुष्य का जैसा दिमाग है वैसा ही उसका कर्म है। यदि यह बिगड़ जाय तो मनुष्य पशुओं से भी गिरी दशा में हो जाय। जिनको हम पागल कहा करते हैं उनके बाहरी सब अंग सावधान होते हैं; परन्तु, केवल दिमाग़ की ख़राबी से वे सांसारिक कार्य्यों के योग्य नहीं रहते। बुद्धि और विद्या का केन्द्र मस्तिष्क ही है। छोटे दर्जे के बालकों को किंडरगार्टन की जो शिक्षा दी जाती है सो इसी मस्तिष्क को पुष्ट करने के लिए है। लिखना-पढ़ना सीखे बिना छोटे-छोटे बच्चे खेल ही खेल में संसार की बड़ी-बड़ी बातें समझ लेते हैं। जोड़, बाकी, गुणा, भाग, इनको खेल ही में आ जाता है। हमारी जो इन्द्रियाँ हैं वे मस्तिष्क के अधीन

रह कर अपनी क्रिया करती हैं, दिमाग़ यदि सो जाय तो फिर ये कुछ भी काम की नहीं रहतीं। डाक्टर लोग क्लोरोफ़ार्म नाम की दवा सुंघा कर दिमाग को सुला देते हैं उस समय सब इन्द्रियाँ अपना काम छोड़ देती हैं। जब मनुष्य अन्धा हो जाता है और कुछ नहीं देख सकता तब भी दिमाग़ की सहायता से अपने सब जरूरी काम कर लेता है, आँखें न रहने से उसकी और इन्द्रियाँ तेज़ हो जाती हैं। दूसरे आदमी अपने मन को इतना एकाग्र नहीं कर सकते जितना अन्धा कर सकता है। आँख वाले भी जब यह चाहते हैं कि किसी गहरे विषय पर विचार करें तब उनको आँखें मूँद कर ही सोचना पड़ता है। परमात्मा का ध्यान भी खुली आँखों नहीं होता। तुमने हिन्दी भाषा के प्रसिद्ध कवि सूरदासजी का नाम सुना होगा। कहा जाता है कि अपने मन को क़ाबू में रखने के लिए इन्होंने अपनी आँखें अपने हाथ से फोड़ ली थीं। आँखों के कारण इनका मन स्थिर नहीं रहता था, इन्हें जिधर आँखें खींच ले जातीं उधर ही जाना पड़ता था। जब आँखें नहीं रहीं तब फिर वह बुराई भी नहीं रही। रात-दिन हरि-भजन और हरि-गुण-गान करने लगे। अन्धे होने के बाद इन्होंने ऐसी उत्तम और भक्तिभावमय कविता की कि इनको कवियों में सूर्य की पदवी मिली। सूरदासजी की तो बात पुरानी है। मैं अपने देखे हुए एक सूरदास की कथा कहता हूँ। मैं जब आगरे में पढ़ता था तब फ़रह वाले प्रसिद्ध शाह हरिनारायणजी की कोठी

में रहता था। लाला हरिनारायण वल्लभ सम्प्रदायी हैं, इनके परम मित्र लाला द्वारिकादासजी वकील वल्लभ कुल के शिष्य थे। इनके यहाँ बम्बई के एक अन्धे पण्डित पधारे थे। (अब वे मर चुके हैं) उनका नाम प० गट्टूलालजी प्रज्ञाचक्षु बहुत लोगों को याद है। इन्हीं अन्धे पण्डितजी ने एक दिन अपने दिमाग की ताकत दिखाई थी। दर्शकों में आगरा नगर के अनेक रईस, साहूकार, हाकिम और वकील मौजूद थे। मैं भी वहाँ मौजूद था। यह बात मशहूर की गई थी कि प० गट्टूलालजी शतावधानी हैं अर्थात् सौ आदमियों के सवालों का जवाब फ़ौरन दे सकते हैं। सभा-स्थान भर जाने पर कार्यवाही प्रारम्भ हुई। एक बडे पण्डित के साथ किसी शास्त्रीय विषय की समालोचना छेडी गई। अन्य पण्डितों ने बीच-बीच में किसी ख़ास तुक के छन्द बनवाये। एक सज्जन ने दो बडी-बडी संख्याओं का गुणनफल पूछा। एक महाशय ने अँग्रेजी भाषा के एक वाक्य का कोई शब्द कहीं से बता दिया। दूसरे ने फारसी की शेर का कोई शब्द कहा, तीसरे ने फरासीसी भाषा के एक पद का शब्द सुनाया इसी प्रकार कई भाषाओं के वाक्य (शब्द उलट-पुलट कर) उनको सुना दिये गये। उसी समय एक गिरजे के घन्टे का शब्द आ रहा था, एक आदमी उनको गिनने लगा। साथ ही अन्य हँसी-दिल्लगी भी होती रही। जब समय पूरा हुआ, तब, पंडितजी ने सब भाषाओं के शब्द मिला कर सिल-सिले वार उनके वाक्य पूरे कर दिये, गुणा का जवाब देने में

उन्हें ज़रा भी देर न लगी। छन्द बनाने में भी उन्हें कुछ नहीं सोचना पड़ा। गिरजे के घन्टों की संख्या बिल्कुल ठीक बता दी गई। मैं यह सब देख कर हैरान रह गया और सोचने लगा कि क्या ही अद्भुत करामात है जिससे एक अंधा मनुष्य इतनी ताक़त रखता है! मूल कारण वही दिमाग़ है। आँखें न रहते भी उसकी शक्ति ने पूर्ण बढ़वारी प्राप्त की है और अपने प्रभाव से आँखवालों को चकित कर दिया है।

सभ्य देशों में अन्धे लड़कों के लिए शिक्षा का प्रबन्ध है। परन्तु, हमारे यहाँ अभी तक इस बात पर लोगों का कम ध्यान है। यहाँ के अन्धे ज़्यादातर भीख पर गुजारा करते हैं। लुहार की धौंकनी धौंकते हैं अथवा सिकलीगर के पहिये को को घुमाते हैं। गाना-बजाना अन्धे लड़कों को बहुत जल्दी आता है। बहुधा करके ग़रीब अन्धे कुछ न कुछ गाना-बजाना सीख लेते हैं। चीन देश में अन्धों की कतार की क़तार बाज़ार में होकर गुजरती है, एक के पीछे एक लगा हुआ होता है। जब ये भीख माँगने निकलते हैं तब दूकानदार पहले ही से पैसा हाथ में ले रखते हैं क्योंकि देर करने से अंधों की टोली इकट्ठी होकर उनकी दूकानों को घेर खड़ी होती है और करुणा पूर्ण शब्दों से दूकानदारों को दान देने के लिए लाचार कर डालती है। मैंने तो यह भी सुना है कि चीन देश में बहुत से दुष्ट माता-पिता अपनी सन्तान की बचपन में ही आँखें फोड़ डालते हैं और उनके द्वारा भिक्षा-संग्रह करके आप बिना मेह-

नत के खाने को पाजाते हैं। विलायत में भीख माँगना कानून द्वारा वद है। वहाँ अंधों के लिए स्कूल हैं। अंधों के पढ़ने की पुस्तकों में उभरे हुए अक्षर होते हैं। पृष्ठ पर हाथ फेर कर अन्धा विद्यार्थी पढता चला जाता है। अन्धों की स्पर्श-शक्ति वड़ी तेज़ होती है। कान भी उनके चौकन्ने रहते हैं। जगदीशपुर में एक सूरदास है वह एक वार जिस हाथ को स्पर्श कर लेता है फिर उसको नहीं भूलता। मेरे सामने कई आदमियों ने उसके हाथ में हाथ दिया और उसने फौरन उनका नाम वतला दिया। पैर की आहट से भी अन्धे अपने गाँववालों को वता देते हैं। मैं वर्षों पीछे जगदीशपुर गया। मेरी आवाज सुनते ही सूरदास ने मुझे पहचान लिया। अन्धे वालक अपनी अन्य इन्द्रियों की सहायता स पढने-लिखने में ख़ूब तरक्की करते हैं। खुशी की वात है कि अब कलकत्ता, वम्बई सरीखे वड़े नगरों में अन्ध-विद्यालय खुलने लगे हैं। कलकत्ते के श्रीयुत लालविहारी साह ने निराश्रय अन्धे वालकों के लिए जो मदरसा खोला है उसको स्थापित हुए लगभग १२-१३ वर्ष हो गये हैं। प्रारम्भ में केवल उनकी स्त्री ही उनकी प्रधान सहायिका थी। दोनों ने इस परमोत्तम कार्य में घोर परिश्रम किया है और क्लेश भी वहुत उठाया है। परमात्मा को धन्यवाद है कि उनके उस छोटे से वृक्ष पर अन्य लोगों का मन भी लहराया है। अव इसको सर्व साधारण के चन्दे से सहायता मिलने लगी है। इस विद्यालय में अन्धों को लिखना-पढना तो सिखाया ही जाता है, इसके

अलावा उन्हें गाने-बजाने की भी शिक्षा दी जाती है। दस्तकारी भी सिखलाई जाती है। अन्धविद्यालय का जो वार्षिकोत्सव हुआ था उसमें कलकत्ते के बड़े-बड़े आदमी एकत्र हुए थे। जल से की कार्यवाही के प्रारम्भ में एक गीत गाया गया था। इस गीत के गाने वाले अन्धे लड़के थे और अन्धों ने ही बाजा बजाया। हारमोनियम और पखावज बजाने में लडके सिद्धहस्त निकले। कई अन्धे ऐसे हैं जो बेंत और बाँस से कई तरह की चीज़ें बनाने का अभ्यास रखते है। अन्ध-विद्यालय के सभापति ने इस प्रकार व्याख्यान दिया था :—

"कलकत्ता ऐसा शहर है जहाँ पर नगर-निवासियों को परोपकार सम्बन्धी कार्यों में समय-समय पर सहायता देनी पड़ती है। परोपकार के जितने काम हैं उन सब में कोई भी इतने महत्त्व का काम नहीं है जितना अन्धों की शिक्षा और रक्षा का है। सभापति इस काम में भरसक सहायता देने को उपस्थित है। अब ज़रूरत इस बात की है कि कलकत्ते का यह अन्धविद्यालय मज़बूती से क़ायम हो। स्वर्गवासिनी महारानी विक्टोरिया के नाम पर एक अन्ध-विद्यालय बम्बई में है। सभापतिजी को उस से बहुत प्रेम रहा है। सज्जन पुरुषों का यह आवश्यक कार्य है कि वे अन्धों की रक्षा और उनको शिक्षा देना अपना कर्तव्य कर्म समझें। हर्ष की बात है कि अब वह वक़्त नहीं रहा जब कि अन्धों को लोग अछूत जातियों के समान अपवित्र समझते थे। अब सज्जन लोग अन्धों की दशा सुधारने के लिए

अनेक यत्न कर रहे हैं। लोगों का ध्यान पिछले ५० वर्षों से इस ओर हुआ है। एक फरांसीसी सबसे पहले अगुआ बना, यह सज्जन बड़े दयालु स्वभाव का था। अपना सब स्वार्थ-त्याग कर इसने बेचारे अंधों की दशा पर फ्रांस के राज-दरबार वालों का ध्यान आकर्षित किया। फ्रांस देश के राजा की भी इस ओर कृपा हुई। फल यह हुआ कि वहाँ अन्धों के लिए एक मदरसा खुल गया। फिर तो अन्य लोग भी इस परमोत्तम कार्य के सहायक बन गये। इसके बाद इङ्गलैंड और आयरलैंड में भी अन्धों के मदरसे खुल गये। अब तो अन्धों की दशा सुधारने और उन्हें काम का आदमी बनाने के लिए नियमपूर्वक चेष्टा की जा रही है। यद्यपि यह तो नहीं कहा जा सकता कि इस देश में भी अन्धों के लिए वैसी ही चेष्टा हो रही है, परन्तु, तो भी इस देश में अन्धों की सहायता के लिए जो कुछ किया जाता है वह प्रशंसा करने के योग्य है। हिन्दोस्तान में सब से पहला अन्धों का स्कूल पंजाब देश के अमृतसर नामक नगर में ईसाइयों द्वारा स्थापित हुआ था। इसके बाद डाक्टर नीलकान्त ने एक मदरसा अहमदाबाद में खोला। डाक्टर नीलकान्त साहब खुद अन्धे थे इसलिए वे अन्धों की दशा को ख़ूब समझते थे। फिर एक मिशनरी लेडी ने एक स्कूल बम्बई में स्थापित किया। उस अकेली अबला ने अपनी सुहृदयता तथा उत्साह से जो प्रयत्न अन्धों की दशा के सुधारने में किया उसके कारण उसके तमाम जाननेवाले लोगों के हृदय में उसकी बड़ी इज़्ज़त पैदा

हो गई। कुछ काल पीछे महारानी विक्टोरिया की याद में एक स्कूल बम्बई में खुला। डाक्टर नीलकान्त राय इसके प्रधानाध्यापक हुए। एक अन्धविद्यालय मैसूर में भी खुल चुका है। कलकत्ते में अन्धों का यह स्कूल जिसका कुछ समय पहले वार्षिकोत्सव हुआ था कई साल से बड़ी ख़ूबी के साथ चल रहा है। यद्यपि प्रारम्भ में इसको किसी महाशय ने निजी तौर पर खोला था; परन्तु, अब यह स्कूल पब्लिक को सौंप दिया गया है और सरकार में इसकी रजिस्टरी होगई है। अब इसका भार जनता पर है। अन्धे लोगों का ख़याल करते ही उनकी दशा का चित्र हमारे नेत्रों के सामने आजाता है। इन अन्धों में कई एक ऐसे भी हो गये हैं जिन्होंने ईश्वर दत्त बुद्धि से संसार को चकित कर दिया। इस देश में तो कई अन्धे महात्मा हो गुजरे हैं। गुजरात के प्रसिद्ध कवि दलपतराम दया भाई अन्धे ही थे। जो हो, सब अन्धे योग्य नहीं होते। आँख मारी जाने से बहुत से अन्धे घोर कष्ट उठाते हैं। उनके लिए संसार अस्त हो जाता है। जिन बातों से आँखवाले फ़ायदा उठाते हैं वे इन बेचारों के भाग्य में नहीं रहतीं। आँखें चली जाने से संसार के अनेक सुख उनके लिए असभव हो जाते हैं। अन्धों को जो कठिनाइयाँ झेलनी पडती हैं; उनको सरल कर देने का केवल एक ही उपाय है वह यह कि इनकी बुद्धि, आचरण और शारीरिक अवस्था को मजबूत बनाया जाय। इस समय अन्धों की शिक्षा-प्रणाली बहुत पूर्णता को पहुँच गई है

इसके द्वारा अन्धों को सब प्रकार की शिक्षा दी जा सकती है। विद्या के प्रकाश से उनका हृदय जब प्रकाशित हो जाता है तब उनके आचरण आँखोंवालों के समान ही हो जाते हैं। कई ऐसे पेशे है, जिनसे अन्धे लाभ उठा सकते है और रुपया कमा सकते हैं, यथा—दर्जी का पेशा, फीता बनाने का काम, बेंत और बाँस की चीजें बनाने के धंधे। टाइप राइटिंग आदि को भी अंधे आसानी से कर सकते हैं तथा सीखने में कुछ कठिनाई नहीं जान पड़ती। इङ्गलिस्तान में तो अन्धों को गाने-बजाने की ख़ूब शिक्षा दी जाती है। इस देश में इसके लिए कहीं सुप्रबन्ध नहीं है। हर्ष की बात है कि कलकत्ते के अन्धों के स्कूल में अन्धों को गाने-बजाने की शिक्षा का प्रबन्ध होना सभव है। गाने के काम में अन्धों के हृदय को शान्ति और सुख मिलता है और वे आराम के साथ अपना जीवन भी निर्वाह कर सकते हैं। बम्बई के अन्ध-विद्यालय में एक अन्धे ने संगीत में अच्छी योग्यता कमा ली है, वह अब दूसरों को गाना-बजाना सिखाता है और तीस-चालीस रुपया महीना पैदा करता है। स्कूल होने से यह सम्भव है कि अन्धे ईश्वर दत्त योग्यता में पूर्णोन्नति कर सकें।

ऊपर लिखे व्याख्यान को सुन कर एक सज्जन ने स्कूल की सहायता के लिए पाँच हजार रुपये देने का वचन दिया और कहा—अन्धे भी शिक्षा पाने के उतने ही हकदार हैं जितने आँख वाले। सर्कार का धर्म है कि अन्धों की शिक्षा में सहायता दे। अमरीका तथा दूसरे देशों में अन्धों के पढ़ाने का ख़र्च पूरा

करने के लिए लोगों पर टैक्स लगाया जाता है। इंग्लिस्तान में भी इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए ऐसा ही किया गया है। अमरीका में अन्धे लडकों की तालीम पर ५०–६० पौंड प्रति-वर्ष ख़र्च किया जाता है। सभ्य देशों में अन्धे बच्चों को शिक्षा दिलाना क़ानून में शामिल है। आशा की जाती है कि कलकत्ते का यह विद्यालय शीघ्र ही ऐसी उन्नति करेगा जैसे अन्य देशों के अन्धविद्यालय कर रहे हैं। सर्वसाधारण इसको सच्चे पुण्य का काम समझ कर उदारता से सहायता करें। कलकत्ते के डाक्टर रासविहारी घोषने विद्यालय के मकान की ओर सर्व साधारण का ध्यान खींचा और बताया कि यह मकान विद्यालय के लिए न तो यथेष्ट है और न योग्य है। यद्यपि यह हमारी सामर्थ्य से बाहर है कि हम अन्धों को सूझता बना दें; परन्तु, हाँ, चेष्टा करने से हम उनके बहुत कुछ कष्ट दूर कर सकते हैं। इस काम को हमें अपना धर्म समझना चाहिए। कल-कत्ता जैसे बड़े शहर में अन्धविद्यालय के लिए बहुत कुछ सहायता मिल सकती है।" एक मुसलमान सज्जन बोले कि हर मज़हब में अन्धों की सहायता करना आवश्यक बताया गया है।

व्याख्यान हो चुकने के पीछे एक अन्धे लड़के ने एक अङ्ग-रेज़ी छन्द पढ़ा। इस छन्द में अन्धे लड़के की दशा का ही वर्णन था। छन्द को सुन कर लोगों के हृदय पर बड़ा असर हुआ, किसी-किसी की आँखों से तो आँसू तक टपक पड़े। इसी प्रकार

एक दूसरे लडके ने अपने दुःख का गीत बंगाली भाषा में गाया। उसको सुन कर भी लोगों का हृदय भर आया।

यह तो अन्धों की बात हुई। कलकत्ते में एक स्कूल ऐसा भी है जिसमें बहरे और गूंगे पढते हैं। ऐसा देखा गया है कि जो लोग बोल नहीं सकते वे सुनते भी नहीं। जो गूंगा होता है वह बहरा भी होता है। जब तुम बडे दिन की छुट्टी में वृन्दावन के गुरुकुल का मेला देखने आई थीं, तब कानपुर में ट्रामवे के द्वारा शहर देखने के लिए हम सब गये थे। हमारे पास ही एक गूंगा लडका बैठा था जो एक सन्दूक में किसी साहब के लिए कुछ बोतलें लिए जाता था। तुम्हें याद होगा कि वह अपने मन की बात किस तरह इशारों से समझाता था। ऐसे लडके बचपन से ही इशारों द्वारा सब काम करते हैं। इनके इशारे इनके घर वाले जल्द समझ जाते हैं। कहावत है.—"गूंगा की बातें गूंगा जाने या गूंगा के घर के" परन्तु, अब इनका स्कूल खुल जाने से इन सब को एक से इशारे समझाए जा रहे हैं। कलकत्ते में बहरे, गूंगों का जो मदरसा है उसमें इनको चित्र-अङ्कन, लकडी खोद कर चित्र बनाना, पत्थर का छापा, मट्टी के खिलौने और सिलाई करना सिखाया जाता है। इस स्कूल का काम सीख कर कितने ही लडके बड़ी सुगमता से अपना उदरपालन करते हैं। अमरीका में ऐसे स्कूल बहुत अच्छे ढंग से चलाये जाते हैं। इस वर्ष एक विद्यार्थी वहाँ की शिक्षा-प्रणाली सीखने गया है। वहाँ की बनी हुई बहुत सी चीज़ें प्रयाग की प्रदर्शिनी में

आई थीं उनमें से एक के लिए पदक और अव्वल दर्जे का सार्टीफ़िकेट मिला था। जब लड़कों को इनाम बाँटा गया तब उनसे इशारों में बात-चीत की गई। ये लड़के इशारों को तत्काल समझ जाते थे और उसी समय इशारों ही में उत्तर देते थे। सुननेवालों को बड़ा आश्चर्य और प्रसन्नता होती थी। इन लड़कों को बङ्गाल के छोटे लाट साहब की मेमसाहिबा ने इनाम बाँटा था। विद्यालय में इस समय ५६ लड़के हैं। काम-काज के सिवाय वे लड़के हिन्दी, बङ्गाली और अङ्गरेज़ी-भाषा में जो कुछ लिखा हुआ हो उसे समझते हैं और अपना आशय लिख सकते हैं। इन लड़कों को पढ़ाना सीधा काम नहीं है। शिक्षकों को बड़ा परिश्रम करना पड़ता है। प्रबन्ध करनेवालों का विचार है कि इस स्कूल की बहुत ही उन्नति हो सकती है। अभी तक लड़कों के लिए ही ये सब चेष्टाएँ हैं, समय आवेगा कि अन्धी और गूंगी बहरी लड़कियाँ भी शिक्षा पावेंगी।

पत्र नं० १६—

स्त्रीचिकित्सकों की आवश्यकता—विलायत में आन्दोलन—भारतीय कन्याओं की दशा—अध्यापिकाओं का अभाव—ईसाइयों में स्त्री-शिक्षा।

तुम्हारी यह भी एक ख़ुश-क़िस्मती है कि तुम्हारे बोर्डिङ्ग हौस से लगा हुआ ही जनाना अस्पताल है। मुझे इस बात की बड़ी तसल्ली रहती है कि (परमेश्वर न करे) यदि तुमको कुछ शारीरिक क्लेश हो तो तत्काल उसकी चिकित्सा हो सकती है। लेडी डाक्टर की प्रशंसा मैंने हरदेवी से सुनी है कि वे रोगिणी स्त्रियों के साथ बड़ी ही दया और प्रीति का वर्ताव किया करती हैं। क्या ही अच्छा हो जो सब शहरों और क़सबों में ऐसी लेडी डाक्टर मिल सकें। हिन्दू स्त्रियों के लिए हिन्दू डाक्टरानी हो तो वे अपनी चिकित्सा निस्संकोच करा सकें। शोक यही है कि जब तक इस देश से बाल-विवाह दूर नहीं होता तबतक यह संभव नहीं है कि हिन्दू लड़की डाक्टरी सीख सकें। डाक्टरी सीखने के लिए कम से कम एन्ट्रेंस तक की अङ्गरेज़ी-शिक्षा होनी चाहिए। यह तब ही संभव है जब लड़की बहुत योग्य हो और कम से कम १६ वर्ष की अवस्था तक इतनी अङ्गरेज़ी पढ़ सके और फिर ४ वर्ष डाक्टरी पढ़े। २० वर्ष तक लड़की को क्वारी

रखनेवाले पिता को बिरादारी में जो लांछना उठानी पडेगी, उसको सहने के लिए बहुत कम लोग तैयार है ।

आज कल विलायतवालों का ध्यान इस बात की ओर गया है कि इस देश में स्त्रियों की अधिक मृत्यु का होना अङ्गरेज़ी राज्य के लिए शर्म की बात है। इस समय कोई ऐसा ढङ्ग होना चाहिए जिससे पुरुषों की तरह स्त्रियाँ भी हकीमी कर सकें। मेरी समझ में तो सबसे पहले हिन्दुओं का कर्तव्य यह है कि वे अपनी लडकियों का साधारण शिक्षा दिलाने में सुभीता करें और जिन्हें योग्यता हो वे वैद्यक सीखें। यह तभी सभव होगा जबकि लड़कियों को शिक्षा मिलने के दिनों में विवाह की हडबड़ी न की जाय। मैं देख रहा हूँ कि जहाँ लडकी दस-ग्यारह बरस की हुई, अडोसी-पडोसियों ने कान खाना शुरू किया, "लड़की बड़ी होती जाती है इसकी अभी तक सगाई क्यों नहीं की है?" लडकी की मा को अड़ोसिन-पडोसिन कहने लगती हैं "तू अपने घर वाले स कहती नहीं कि लडकी का शीघ्र विवाह करें।" लड़की का बाप जब सांसारिक झगड़ों से फुरसत पाकर दो घडी के लिए घर आता है और रसोई खाने लगता है उसी समय घरवाली लड़की की चर्चा छेडती है और इतना लाचार कर देती है कि उसको कहीं न कहीं लड़की की सगाई कर ही देनी पड़ती है। उसे इतना समय नहीं मिलता कि यह भी देख सके कि लडकी अपना जन्म किस तरह काटेगी। कभी-कभी तो बच्चे अथवा बूढे वर के हाथ लड़की

देनी पडती है। हिन्दुओं के शास्त्र में साफ-साफ लिखा है "चाहे मरण पर्यन्त कन्या पिता के घर में बिना विवाह के बैठी रहे; परन्तु, गुणहीन और बेमेल, दुष्ट पुरुष के साथ कन्या का विवाह कभी न करे।"

जब कन्या का विवाह हो जाता है तब उसको शिक्षा प्राप्त करना कठिन है, फिर तो उसको शीघ्र ही गृहलक्ष्मी बनने की चिन्ता पड जाती है। यद्यपि बहुत सी लडकियाँ छोटी उम्र में ही विधवा होकर जन्म भर को ब्रह्मचर्य-व्रत धारण करती है। ऐसे उदाहरण नहीं मिलते कि कोई लडकी विवाह न करवा कर जन्मभर के लिए ब्रह्मचर्य-व्रत धारण करे और पूर्ण शिक्षा पाकर दीन-हीन स्त्रियों की चिकित्सा तथा नारी-सुधार में लगे। इस समय केवल ईसाई लोग अपनी लडकियों को मनमाना पढ़ने देते हैं, इसीसे इस देश में जो देशी स्त्रियाँ डाक्टर हैं अथवा लडकियों को पढ़ानेवाली अच्छी अध्यापिका हैं वे सब ईसाइयों की ही लडकियाँ हैं। उन्होंने बचपन से शिक्षा-प्रणाली के अनुसार शिक्षा पाई है, वे जिस काम को चाहें कर सकती हैं। तुम अपने स्कूल को ही देखो कि यदि बडी मिस साहिबा ने इतनी शिक्षा न पाई होती तो किस तरह इतनी लडकियों का प्रबन्ध कर सकतीं।

आजकल जगह-जगह पर कन्या-पाठशालाएँ खुल रही हैं; परन्तु, सबसे पहली दिक्कत अध्यापिकाओं के सम्बन्ध में होती है। पढ़ानेवाली जो मिलती हैं वे लिखना-पढ़ना जानती
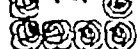
तो हैं, परन्तु, उनको प्रवन्ध करना नहीं आता। अभी कल की बात है मैं पुस्तकालय में वैठा हुआ यह शिकायत सुन रहा था—"एक ऐसी हेड मिस्ट्रेस की जरूरत है जो नाचें के दर्जों को पढ़ाने वाली उस्तादिनियों के काम पर ध्यान रक्खा करे। उनको समय-समय पर उपदेश दिया करे, शिक्षा देने के ढङ्ग बताया करे। ऐसी अध्यापिका उनको ४०), ५०) मासिक देने पर भी नहीं मिलती। ईसाई अध्यापिका मिल सकती हैं; परन्तु, उनको डर है कि वे लडकियों को वहका देंगी। वे इस बात के उदाहरण भी देते थे कि अमुक सज्जन की लडकी को एक मिशन की लेडी ले गई और इसाई वना लिया। माँ-वाप बहुत चेष्टा करने से भी लडकी को वापिस न ले सके। शायद ये बातें सच हों, परन्तु, मेरे जाननेवाली मिशन की लेडियों में ऐसी धोखेबाज़ कोई भी नहीं मालूम हुई। तुमने भी मिशन स्कूल में बहुत दिन पढ़ा है। बाइविल की सारी कहानियाँ याद की हैं, उनके गीत अपनी दादी को घर पर आकर गाये और सुनाये हैं और परीक्षा दे कर इनाम लिया है, परन्तु, यह समाचार कभी नहीं लाईं कि स्कूल की कोई भी लड़की इसाइन कर ली गई है। फिर आजकल तो शहर-शहर में आर्य समाजें हो गई हैं जिनकी शिक्षा अब ईसाइयों को मात कर रही है।

मुसलमानों में स्त्री-शिक्षा

पत्र न० १७—

अलीगढ में जनाना स्कूल—वार्षिक प्रदर्शिनी—शिक्षित पति की अशिक्षिता स्त्री—बच्चों पर असर—शिक्षा का ठीक फल—लड़कियों को पढ़ाने से नुक़सान—उच्चकुल की कन्याओं का कर्तव्य—मुसलमान स्त्रियों द्वारा टर्की युद्ध के लिए चन्दा।

जिस प्रकार प्रतिवर्ष गुरुकुल वृन्दावन में शिक्षा-प्रचार का विचार आर्य्य समाज के विद्वान् करते हैं, उसी प्रकार मुसलमानों की भी एक महासभा ऐसे ही उद्देश्य से भारतवर्ष के किसी बड़े शहर में हुआ करती है। इस वर्ष यह सभा ख़ास लखनऊ में ही हुई थी। स्त्री-शिक्षा पर भी विचार हुआ। तुमको यह बात अवश्य मालूम होगी कि अलीगढ़ में मुसलमानों का एक बड़ा भारी मदरसा है। अब वहाँ लड़कियों के लिए भी एक स्कूल खुल गया है। इस स्कूल में पर्दे का तो ख़ास प्रबन्ध है ही, परन्तु, सफ़ाई पर भी बड़ा ध्यान रक्खा जाता है। मुसलमान लड़कियों को धर्म-शिक्षा मिलने का यहाँ पर उत्तम प्रबन्ध है। एक शिक्षित बेगम है जो तन, मन, धन से इसको सहायता करती है। महासभा के साथ इस वर्ष एक प्रदर्शनी भी हुई थी, जिसमें स्त्रियों के हाथ के बने हुए पदार्थ दिखाये गये थे। इस प्रदर्शनी को हमारे सूबे के लेफ्टिनेंट गवर्नर की सहधर्मिणी ने भी पधार कर

सुशोभित किया था। ५०० के लगभग चीज़ें दिखाई गई थीं। इसमें सब जाति की स्त्रियों के बनाये हुए पदार्थ थे। हिन्दू स्त्रियों के ५३, पारसिनों के १६, ईसाइनों के १०, अन्य जातियों के ८०, देहली की बेगमों के ५३ और शेष ३४३ चीज़ें मुसलमान स्त्रियों के हाथ की थीं। लेडी मैट्सन साहिबा को जो अभिनन्दन पत्र दिया गया था उसका भाषान्तर इस प्रकार है :—

श्रीमती जी! प्रदर्शनी की प्रबन्ध-कारिणी सभा की ओर से हम प्रार्थना करती हैं कि अँगरेजी राज्य में प्रजा को जो सुख-चैन है उसका वर्णन नहीं हो सकता। सरकार की ओर से शिक्षा-विस्तार के लिए जितनी चेष्टा की जाती है उसको जिह्वा द्वारा प्रकाशित करने में हम असमर्थ हैं। मुसलमानों की जो शिक्षा सभा प्रति वर्ष होती है उसका यह उद्देश्य है कि स्त्रियों में शिल्प-शिक्षा का उत्साह बढे। इस प्रदर्शनी में हिन्दू-मुसल्मान का विचार नहीं है। सब जाति की स्त्रियों के बनाये हुए पदार्थ यहाँ वर्तमान हैं। अब कृपा कर अपने करकमलों से इस प्रदर्शनी को दर्शनीय कर दीजिए।

स्त्री-शिक्षा की उपयोगिता पर भी वहाँ एक व्याख्यान हुआ था। वक्ता ने कहा कि मुसलमानों की इस शुभ कामना पर धन्यवाद है और उनको बधाई है कि उन्होंने अपनी शिक्षा-सभा में स्त्री-शिक्षा पर ध्यान दिया है। इस बात को तो अब सब ही मानते हैं कि लड़कियों को अवश्य शिक्षा देनी

चाहिए। इसके तीन बडे कारण हैं। पहला उनमें से यह है कि किसी जाति की उन्नति उस समय तक सम्भव नहीं है जब तक जाति का केवल अर्द्ध भाग शिक्षित है। जापान जो आज कल सब बडी जातियों में गिना जाता है इस पदवी को कदापि नहीं पहुँचता यदि वह अपने देश की स्त्रियों को अशिक्षित रखता। आजकल नई यूनिवर्सिटी बनने की जोर-शोर से तैयारी हो रही है, परन्तु, यदि साथ ही लडकियों को पूर्ण शिक्षा देने का उपाय नहीं किया जायगा तो उस यूनीवर्सिटी से कुछ भी उपकार न होगा। दूसरी बात यह है कि ऐसे घर में पूर्ण सुख कदापि नहीं हो सकता जिसमें एक ज्ञानी और दूसरा अज्ञानी है। एक अनपढ़ लडकी जब किसी शिक्षित पुरुष के सिर मढ दी जाती है तब उस बेचारी को बडी उदासी से जीवन काटना पडता है। घर में निरानन्द बरता करता है। शिक्षा प्राप्त युवक को घर का कुछ आकर्षण नहीं होता। उसके दिमाग में जो विचार उठा करते हैं उनको वह अज्ञानी, अशिक्षित स्त्री के सामने कह कर उससे सहानुभूति नहीं ले सकता। जबतक दोनों के विचार एक श्रेणी के न हों तबतक दोनों की ही बुरी दशा रहती है।

तीसरी बडी बात यह है कि माँ की योग्यता का बच्चों पर बडा प्रभाव पडता है। एक बडे विद्वान् ने जब शिक्षा-काल को स्कूल और कालेज के समय में विभाजित किया तब उसने बच्चे का पढ़ना प्राइमरी शिक्षा से नहीं, वरन्, माँ की गोद से

ही सीखने का आरम्भ किया। हममें ऐसे बहुत से मनुष्य हैं जिनको कालिजों में पढ़ने का सौभाग्य नहीं मिलता; परन्तु, ऐसी कोई स्त्री अथवा पुरुष नहीं है जिसने अपनी माँ की गोद में शिक्षा न पाई हो। माँ अपना गोद के बच्चे को पुस्तक की शिक्षा नहीं देती; परन्तु, अच्छे-बुरे स्वभाव और आदत का बीज बोती है। यह आरम्भ की शिक्षा ही भविष्य में सुफल अथवा कुफल प्रदान करती है। अस्तु, यह परमावश्यक है कि गोद में ही शिक्षा देने वाली स्वयं भली प्रकार सुशिक्षित हो। उसको एक बड़ा आवश्यक कार्य सौंपा गया है जिसको उत्तम प्रकार से निबाहने के लिए सच्ची योग्यता की आवश्यकता है। अस्तु, जाति, समुदाय तथा कुटुम्ब सब को अपने बच्चों की भलाई के लिए स्त्री-शिक्षा की सबसे अधिक आवश्यकता समझनी चाहिए।

यह सोचना भी व्यर्थ नहीं है कि शिक्षा देने का मूल कारण क्या है? शिक्षा का ठीक फल फलना यह समझा जाता है कि मनुष्य अपने सांसारिक जीवन-सम्बन्धी सब कार्यों को ठीक-ठीक कर सके। यद्यपि प्रत्येक मनुष्य में कर्म करने की रुचि परमात्मा की दी हुई है, परन्तु, उस रुचि को सुकर्मों की ओर फेरना यह शिक्षा का ही फल है। शिक्षा का विचार भी हम तीन पदों में करते हैं। प्रथम विचार-शक्ति बढ़ाना—पढ़ानेवाले का केवल यही काम नहीं है कि पुस्तक पर पुस्तक रटा दे। बच्चे के मस्तिष्क में पुस्तक के पढ़े हुए पाठ

पर विचारने की शक्ति उत्पन्न करनी चाहिए। दूसरी बात यह है कि पढे-लिखे मनुष्य को अपने मन को दृढ़ बनाना चाहिए। उस स्त्री या पुरुष की शिक्षा सफल है जो अपने मन को दृढ रख सकता है। संसार में वही मनुष्य शिक्षित है जो अपने सद्विचारों को कार्य में परिणत कर सकता है। केवल लड्डुओं का ध्यान करने से भूख नहीं बुझती। पढने-लिखने का फल यही है कि जो सत्कर्म करना उसने विचारा है उस पर दृढता के साथ लग जाय। दृढ़ विचारवाला मनुष्य जो सोचता है उसे पूरा ही कर डालता है। शिक्षा का तीसरा फल सच्चरित्रता है। मनुष्य हर तरह की बुराई-भलाई का फल अपने मस्तिष्क में सोचता है और सोच-विचार के पीछे उसके लिए आचरण करता है, आचरण की भलाई-बुराई का अभ्यास पड जाता है। यदि आचरण का अभ्यास पड़ा तो मनुष्य सदाचारी कहलाया और जो उसने बुरे आचरणों की टेव डाली तो वह दुराचारी प्रसिद्ध हुआ। सदाचारी मनुष्य के विचार सर्वदा सत्य, पवित्र और उच्चकोटि के हुआ करते हैं। आचरण की शिक्षा माँ की गोद में ही आरम्भ हो जाती है। बचपन की बिगडी हुई आदत का बडी उमर में सुधारना बड़ा कठिन होता है। इससे फिर वही बात आती है कि माँ का शिक्षित होना बहुत ही आवश्यक है। जब शिक्षा का ऐसा अच्छा फल होता है तब लड़कियों को उससे क्यों वञ्चित रखा जाय? लडकियों को भी सोचने-समझने की शक्ति, मन को

रोकने का वल और सदाचारिणी होने की टेव प्राप्त करना आवश्यक है। यह आवश्यक नहीं है कि लडकियों की पढ़ाई ठीक वैसी ही हो जैसी लडकों की। लडकियों को जो कुछ शिक्षा दी जाय उसका फल उनके आचरण और स्वभाव मे आ जाना चाहिए। उनका व्यवहार ऐसा हो जाना चाहिए जिससे यह प्रत्यक्ष हो जाय कि लड़की यथार्थ में शिक्षिता है। इंगलिस्तान में अव शिक्षा का झुकाव इसी वात के प्राप्त करने की ओर हो रहा है। वे लोग लड़कियों को देवियाँ वनाने की चेष्टा कर रहे हैं। परिवार का तन्दुरुस्त रखना लड-कियों के ही हाथ में है। लडकियों को स्वास्थ्य-रक्षा के नियमों के जानने की शिक्षा अवश्य मिलनी चाहिए। सवसे वड़ी वात की शिक्षा घर सम्भालने की है। घर में जो कुछ पदार्थ संग्रह किये जाते हैं उनकी सम्भाल रखना और प्रत्येक वस्तु का सदुपयोग करना और नष्ट होने से वचाने की क्रिया जानना उनकी शिक्षा का प्रधान अंग है। वहुत लोगों को भय है कि पढी-लिखी लडकी गृहस्थी चलाने के उपयुक्त न रहेगी। आजकल की उन्नति इस भय को दूर करने की ओर है। जिस तरह अन्य प्रकार की नई-नई वातों की ओर विद्वानों का ध्यान है उसी तरह स्त्रियों को सच्ची सहधर्मिणी वनाने के लिए भी विद्वान् उपाय कर रहे हैं। समय की गति-मति के अनुसार ये उपाय नये-नये होते जाते हैं। प्रत्येक कर्म का फल समय-समय पर ही मिलता है। स्त्रियों को किस तरह, कैसी शिक्षा देने से परम लाभ

हुआ है, यह बात आजकल बड़े ध्यान से विचारी जा रही है। आगामी ५ वर्षों में स्त्री-शिक्षा के लिए एक निश्चित पथ खुल जायगा; जिससे हमारी लड़कियाँ धार्मिक विचारवाली, सुगृहिणी, सच्ची माता और अच्छी स्त्रियाँ हुआ करेंगी। अच्छी स्त्रियाँ प्रजा और राजा दोनों के लिए आवश्यक हैं, क्योंकि स्त्रियों का प्रभाव राज्य पर बहुत पड़ता है। जो पुरुष-समुदाय आज उनकी गोद में है उसको अच्छा-भला बनाना स्त्रियों की योग्यता पर ही निर्भर है। स्त्रियों का प्रभाव जानने के लिए इतिहास में उदाहरण की कमी नहीं है। जापान का उत्थान हमारे सामने प्रत्यक्ष प्रमाण विद्यमान है।

लोगों का यह बड़ा भारी विरोध है कि पढ़ने-लिखने से स्त्रियाँ उद्दण्ड हो जाती हैं। इस बात का सीधा उत्तर यह है कि शिक्षा का जो गुण है वह स्त्री को देवी बनाने का है, यदि वह बात प्राप्त नहीं होती तो यह दोष शिक्षा-प्रणाली का है, सुशिक्षा से कभी अपकार नहीं हो सकता। लड़कियों को पढ़ाना लोगों के लिए एक नई बात जान पड़ती है, परन्तु, समय आने वाला है कि जब यह कार्य एक साधारण बात हो जायगी। आजकल ऐसे बहुत से लोग मिलते हैं जो इस बात को जानते हैं कि स्त्री-शिक्षा बहुत अच्छी बात है, परन्तु, अपने कार्य से इस सिद्धान्त की पुष्टि नहीं करते। कोई अच्छा काम जबतक कार्यरूप से ग्रहण नहीं किया जाता तबतक उससे कुछ भी लाभ नहीं।

जबतक इस देश से अज्ञान और मिथ्या हठ नहीं हटेगा तबतक उन्नति की कोई आशा नहीं रखनी चाहिए। स्त्री-शिक्षा के सच्चे सहायकों को चाहिए कि वे दो प्रतिज्ञा करें। पहली प्रतिज्ञा तो यह होनी चाहिए कि वे तबतक अपनी लड़की की शादी न करें जबतक कि वह अपनी शिक्षा समाप्त न करले। दूसरी प्रतिज्ञा यह होनी चाहिए कि अपने लड़कों का विवाह अनपढ़ लड़कियों के साथ न करे। जब यह बात चल पड़ेगी तब इस देश में स्त्री-शिक्षा का प्रवाह चल उठेगा। तीसरी एक और बड़ी ज़रूरी बात है वह यह है कि जबतक अच्छी अध्यापिका नहीं-मिलतीं तबतक स्त्री-शिक्षा का कार्य वेग से नहीं चल सकता, अध्यापिकाओं के बिना इस उन्नति में बड़ी रुकावट पड़ रही है। अध्यापिका का काम केवल उन्हीं स्त्रियों के करने का काम नहीं है जो पेट की ख़ातिर लाचारी से इस काम को करती हैं। उच्च कुल के लोगों को उचित है कि वे अपनी लडकियों को पूर्ण शिक्षा दें और उन्हें अध्यापिका बना कर इस पुण्य-कार्य के करने में लगावें। इस पुण्य-कार्य से परमात्मा भी प्रसन्न होगा और देश का भी अज्ञानान्धकार हटेगा।

मुसलमानों की ख़ुश किस्मती से आजकल भूपाल की बेगम एक ऐसी शिक्षिता विद्यमान हैं जो स्त्री-शिक्षा के लिए पूर्ण चेष्टा कर रही हैं। उनकी इच्छा है कि दिल्ली में एक बहुत अच्छा विद्यालय लड़कियों के पढ़ाने के लिए खोला जाय।

वहुत सा धन उन्होंने इसके लिए दिया है, और भी चन्दा हो रहा है।

मुसलमानों में स्त्री का प्रभाव जानने के लिए यह लिखना पर्याप्त होगा कि टर्की और वलगेरिया के बीच में जो भारी लडाई हुई थी उसका समाचार स्त्रियों को भी उत्तेजित कर रहा था। अलीगढ की महमूद वेगम ने अपने घर पर पढी-लिखी स्त्रियों को एकत्र करके एक व्याख्यान दिया था। जिसमें वेगम साहिवा ने कहा था—

ऐ मेरी वहिनो! मैंने जिस कार्य के लिए आपको यहाँ आने का कष्ट दिया है वह यह है कि मै आपका ध्यान तुर्कों की विपत्ति की ओर ले जाऊँ। क़ुरान में आज्ञा दी गई है कि मुसलमानों को अपने ख़ुदा के लिए तन, मन और धन सव कुछ दे देना चाहिए। कुरान में पैगम्बर ने शरीर की अपेक्षा धन का दान अच्छा ठहराया है। लाभ इसमें यह है कि प्राण-दान देना सव किसी से नहीं वन सकता। प्राण-दान की अपेक्षा धन-दान करना सुगम है। धन-दान के द्वारा हर कोई ख़ुदा की ख़िदमत कर सकता है। अतः हम स्त्रियाँ भी आज इस सत्-कार्य को करने में समर्थ हो सकती हैं। हमारी वहुत सी वहने ऐसी है जो जान और माल दोनों को ख़ुदा के रास्ते में लगा रही हैं और अनेक प्रकार के कष्ट अपने धर्म के लिए सहन कर रही हैं।

यदि हममें इतनी हिम्मत नहीं है कि अपने प्राण इस धर्म

युद्ध के लिए दे दें अथवा युद्ध मे घायल हुए, बीमार हुए तुर्कों की सेवा-शुश्रूषा अपने शरीर से कर सकें, तो क्या हमसे इतना भी नहीं बन सकता कि हम अपने माल से जो कि हाथ का मैल कहलाता है इसको देकर इस पुण्य-कार्य में शामिल हो सकें। यदि हमने ऐसी विपत्ति के समय में भी अपने मुसलमान भाइयों की सहायता धन से न की तो मैं विश्वास करके कहती हूँ कि हमसे अधिक मंदभागी इस संसार में और कोई न होगा। जब कोई मनुष्य अपनी जुड़ी हुई पूंजी में से दान करने का विचार करता है तब शैतान उसी समय उसके कान में आकर कहता है "दान मत कर,, नहीं तो तू निर्धन हो जायगा" अस्तु मुसलमानों को ऐसे वक़्त में शैतान का कहना कदापि न मानना चाहिए। ऐसे समय पर दान के लिए हाथ बढा कर सहायता करनी चाहिए। ऐसा करने से ही ख़ुदा और उसके पैग़म्बर की खुशी हासिल हो सकेगी, ऐसा दान ही मनुष्य के अन्तिम समय में काम आता है और मुक्ति का कारण बनता है।

मुसलमानों के ऊपर बड़ी विपत्ति छा रही है। टर्की वालों के आजकल हज़ारों मनुष्य बलि हो रहे हैं। हज़ारों हमारी बहिनें विधवा हो गई हैं। सहस्रों बच्चे अनाथ हो गये हैं। हज़ारों ही युद्ध के घायल घावों के दुःख से तड़फड़ा रहे हैं। इन सब बेचारों की दशा हमें सोचनी चाहिए। यही समय है कि हम अपने धार्मिक भाइयों के घावों की मरहम पट्टी करें

और अपनी विधवा बहिनों को धीरज बँधावे । अनाथ बच्चों को अपना समझ कर उनकी रक्षा करे, परन्तु, हम इस योग्य कहाँ हैं कि ऐसे पुण्य की भागी हों। सेवा करने के लिए मन चलता है, पर, हम बेबस हैं। ऐसी दशा में हमसे सिवाय इसके और कुछ नहीं बन सकता कि धन से ही सहायता करें ।

इस व्याख्यान का फल यह हुआ कि उसी समय कई हजार रुपये का चन्दा होगया। यह रुपया टर्की को भेजा गया और वहाँ के रोगियों की शुश्रूषा और विधवा तथा अनाथ बच्चों की सहायता में व्यय किया गया।

सेवा-सदन

पत्र नं० १८—

स्त्रियों में पौरुष—सेवा सदन की स्थापना—साहित्य-शिक्षा—साप्ताहिक शिक्षा—शिल्प-विस्तार—परिचर्य्या-पाठ—हारमोनियम-क्लास—स्वास्थ्य-ज्ञान—सहानुभूति-प्रदर्शन—प्रेम-सम्मेलन—देशोपकारी शिक्षा—पुस्तकावलोकन।

यह समझना भूल की बात है कि स्त्रियाँ मिल कर पुरुषों की तरह लाभदायक कामों को नहीं कर सकती हैं। विद्या से जिस तरह पुरुष अनेक चमत्कारिक काम कर सकते हैं उसी तरह स्त्रियाँ भी उनको कर सकती हैं। शिक्षा ऐसी चीज़ है कि मनुष्य तो मनुष्य पशुओं पर भी इसका असर हुए विना नहीं रहता। तुमको सरकस के खेलों की याद वनी होगी। सोचो तो सही सिंह सरीखा जंगली जीव किस प्रकार अपने रक्षक की इच्छा को पहचानने लगता है। घोड़े, वन्दर, रीछ, तोते, तीतर, कबूतर सब पर शिक्षा का असर होता है। कुत्ते का तो कहना ही क्या है? जब पशु-पक्षियों में कर्तव्य का ज्ञान उत्पन्न हो सकता है तब यदि स्त्रियाँ आश्चर्यजनक उन्नति कर सकें तो इसमें सन्देह करने का क्या कारण हो सकता है। दक्षिण की पढ़ी-लिखी नारियों ने जिस कार्य को उठाया था आज के पत्र में

उसी का कुछ वर्णन लिखा जायगा। यह तो निश्चित वात है कि स्त्रियाँ जितना उपकार अपनी शिक्षा से नारी जाति का कर सकती हैं उतना पुरुषों से कभी नहीं वन सकेगा। यही समझ कर दक्षिणी वनिताओं ने "सेवा-सदन" खोला है। मुख्य सदन तो वम्बई में है और शाखा पूना में है। पूना के सेवा-सदन की जो वार्षिक-रिपोर्ट प्रकाशित हुई थी उसी आधार पर यह लेख लिखा गया है। कई कुलीन और सुशिक्षित नारियों ने अपने जीवन को परोपकार के लिए सङ्कल्प कर दिया है, उन्हीं की चेष्टा का फल "सेवा-सदन" है। इस सदन में नीचे लिखे काम होते हैं—(१) साहित्य-शिक्षा, (२) साप्ताहिक व्याख्यान, (३) शिल्प-विस्तार, (४) परिचर्या-पाठ, (५) हारमोनियम-क्लास, (६) स्वास्थ्य-ज्ञान, (७) सहानुभूति-प्रदर्शन, (८) प्रेम सम्मेलन, (९) देशोपकार-शिक्षा और (१०) पुस्तकावलोकन।

सेवा-सदन द्वारा ज्ञान प्राप्त करनेवाली विशेष कर ब्राह्मण कन्या ही हैं क्योंकि पूने में ब्राह्मणों की प्रतिष्ठा पेशवाओं के समय से ही चली आती है। अन्य जाति की वालिका तथा स्त्रियाँ भी शिक्षा में शामिल हुआ करती हैं। सेवा-सदन में होनेवाली वातों का संक्षिप्त सार इस प्रकार है—

१—साहित्य-शिक्षा ७ वीं कक्षा तक पढाई है। सप्ताह में ५ दिन पढ़ाई और छठे दिन सिलाई होती है।

२—साप्ताहिक व्याख्यान—प्रति सप्ताह शनिवार के दिन होते हैं। इस दिन किसी न किसी लाभदायक वात को

व्याख्यान द्वारा समझाया जाता है। जो जिस विषय में अच्छा ज्ञान रखता है उस विषय में वह व्याख्यान के लिए निमन्त्रित किया जाता है। शहर की भी शिक्षित अथवा समझदार स्त्रियाँ यहाँ एकत्र होती हैं। जिन दिनों यह बात प्रकाशित हुई थी कि पूने में छोटे बच्चों की मृत्यु बुरे दूध के कारण होती है उन दिनों, 'सेवा-सदन' में 'पशु-पालन', दूध का बच्चों पर असर, इन विषयों पर व्याख्यान हुए थे। "माताएँ घरों में बच्चों को भली बातें किस प्रकार सिखा सकती हैं" यह विषय भी एक व्याख्यान द्वारा समझाया गया। "भारतवर्ष में जो बड़े-बड़े धर्म प्रचलित हैं उनका सार भी समय-समय पर स्त्रियों को समझाया गया। इस बात की चेष्टा हो रही है कि लाभदायक व्याख्यान पुस्तकाकार छपवा कर प्रकाशित किये जायँ"।

३—शिल्प-विस्तार—शिल्प शब्द तो बहुत बड़ा है, परन्तु, यहाँ पर इसका सम्बन्ध केवल उन कामों से है जो स्त्रियों के द्वारा सम्पादन होते हैं अथवा हो सकते हैं। यथा—सिलाई, मोज़े बुनना, कसीदा काढ़ना, रेशमी और ज़री का काम बनाना इत्यादि। इन सब कामों का शिक्षा का यहाँ प्रबन्ध है, कई सिलाई की कलें तथा मोजे, बनियान तैयार करने की मैशीनें यहाँ मौज़ूद हैं। शहर की कितनी ही चतुर औरतें इस शिक्षा में अनुराग रखतीं और बहुत सी अच्छी-अच्छी चीज़ें तैयार करती हैं। विचार हो रहा है कि एक ऐसी प्रदर्शनी की जाय जिसका सब प्रबन्ध स्त्रियाँ करें, वे ही चीज़ें बेचें और इस तरह

से जो धन इकट्ठा हो वह सेवा-सदन की इमारत बनाने में लगाया जाय। बम्बई हाते के गवर्नर की धर्मपत्नी ने इस कार्य में सहायता देने की इच्छा प्रकट की है।

४—परिचर्या-प्रणाली—सेवा-सदन की इच्छा है कि उच्च कुल की युवतियाँ रोगियों को शुश्रूषा करना सीखें जिससे कि वे अपने परिवार, पड़ोसी तथा चिकित्सालय में कुछ काम कर सकें। गह कार्य कर सकना तभी सम्भव है जब परिचर्या करने का काम नियमपूर्वक सीखा जाय। यूरोप की धनी स्त्रियाँ ग़रीबों के घर जाकर रोग-शोक में उनकी ख़बर लेती हैं और इस कार्य को बड़े पुण्य का काम समझती हैं। हमारे देश में पुण्य और परोपकार का अर्थ ही दूसरा है। हृष्ट-पुष्ट लोगों को खिलाना पुण्य का कार्य समझा जाता है। अस्पताल में जो गरीब लोग रहते हैं उनको सिवाय सरकारी नौकरों के और कोई देखने नहीं जाता। स्त्रियाँ तो अस्पतालों से बहुत ही डरती हैं। उनमें इतनी हिम्मत नहीं कि वहाँ जाकर दीन-दुखियों की सुधि लें, उनसे बात-चीत करें, तसल्ली दें, धर्म-कथा सुनाकर उनके उद्विग्न मन को शान्त करें। परोपकार की इच्छा से परिचर्या का काम सीखनेवाली अभी तक ५ लड़कियाँ आई हैं। आशा की जाती है कि इनकी देखादेखी अन्य बहुत सी युवतियाँ भी इस कार्य में अग्रणी बनेंगी।

५—हारमोनियम-क्लास—हमारे देश के बड़े घरों की लड़-

कियों में हारमोनियम बजाना सीखने का विशेष शौक़ पाया जाता है। परन्तु, कोई ऐसा प्रबन्ध नहीं है जहाँ उनकी यह इच्छा पूरी हो सके। यूरोप में सब भले घरों की बहू-बेटियाँ "पियानो" बाजे का अभ्यास रखती हैं। जब से सेवा-सदन में हारमोनियम सिखाने का प्रबन्ध हुआ है तब से सीखने वालियों की संख्या बहुत हो गई है। इस कार्य के लिए हार-मोनियम मँगाये जा चुके हैं तथा एक सज्जन ने सहायता की भाँति १५०) दिये हैं। शोक है कि प्लेग के कारण इस कार्य में बाधा पड गई।

६—स्वास्थ्य-ज्ञान—अर्थात् जिन नियमों पर चलने से तन्दुरुस्ती ठीक बनी रहती है उनका ज्ञान और विचार करना सेवा-सदन का एक आवश्यक कर्म है।

७—सेवा-व्रत—सेवा-सदन का मुख्य व्रत सेवा करना है। दीन-दुखियों की जितनी सेवा स्त्रियाँ कर सकती हैं उतनी पुरुषों से सम्भव नहीं है। इस व्रत को नियमपूर्वक करने के लिए सेवा-सदन तैयार है। यहाँ सेवा-व्रत-धारिणी अस्पतालों में जाकर रोगियों को फल और मिठाई बाँटती हैं। सहानुभूति सूचक वार्तालाप करके रोगियों का हृदय हलका करती हैं। उन्हें जब कभी किसी दीन, धनहीन व्यक्ति के रोगी होने का समाचार मिलता है तब उसके घर पर जाकर उसे औषधि प्रदान करती हैं, भोजनादि के लिए धन की सहायता करती हैं।

वे हिन्दू, मुसलमान का अन्तर नहीं देखतीं उनको मनुष्य मात्र पर दया करना आवश्यक होता है। अस्पताल में सब प्रकार के रोगी होते हैं। उस जगह जाति-पाँति का ख़याल छोड़ कर वे सब के साथ सहानुभूति दिखाती हैं।

अपने शहर के सिवाय बाहर गाँवों में भी इनकी यात्रा होती है। पूने के पास वाले गाँवों में आग लग जाने के कारण गरीब किसानों को बड़ा नुक़सान पहुँचा था। इस समाचार को पाकर सेवा-सदन वाली नारियाँ वहाँ पहुँचीं और बड़ा काम किया। जले हुए मनुष्यों की चिकित्सा की, जिनका सर्वस्व जल गया था उनको धनादिक से सहायता पहुँचाई और इस कार्य के लिए १००) चन्दे से एकत्र किये।

जब गुजरात प्रान्त में एक भारी अकाल पड़ गया था, उसका वर्णन तुमने एक पिछले पत्र में पढ़ा होगा, तब सेवा सदन की कई स्त्रियों ने दुर्भिक्ष-पीड़ित लोगों की सेवा करने में घोर परिश्रम किया। पंजाब के नामी सज्जन लाला लाजपतराय के पास अकाल फंड के ५०००) जमा थे। उन्होंने वे रुपये गुजरात के दीन-दुखियों की सहायता के लिए भेजे थे और शर्त यह लगाई थी कि यह रुपया स्त्री और बच्चों की सहायता के लिए स्त्रियों के द्वारा ही ख़र्च किया जाय। यह समाचार सेवा-सदन तक पहुँचाया गया। श्रीमती रानाडे ने उत्तर में लिख भेजा कि वे सेवा-सदन की अन्य तीन लेडियों के साथ

इस कार्य को करने के लिए तैयार हैं। तदनुसार रामाबाई रानाडे, अन्नपूर्णा बाई, यमुनाबाई और सीताबाई इस परोपकारी कार्य के करने के लिए पालनपुर पहुँचीं। पालनपुर रियासत के सरदारों और अन्य अँगरेज हाकिमों ने उनको सब प्रकार की सहायता पहुँचाई। इन श्रीमतियों ने गाँव-गाँव में भ्रमण किया और जहाँ-जहाँ आवश्यकता देखी वहाँ-वहाँ अन्न, वस्त्र, धन बाँट कर दुर्भिक्ष-पीडितों को आश्रय दिया। इन्होंने दुर्भिक्ष के धन में से अपने खर्च के लिए कुछ भी सहायता नहीं ली। रामाबाई ने तो अपना सब ख़र्च अपनी गाँठ से किया और शेष श्रीमतियों का ख़र्च एक परोपकारी सज्जन ने अपनी जेब से दिया।

इसी सेवा सदन से श्रीमती बन्नूबाई पंचमहाल जिले में पहुँचीं। इनके साथ एक पारसिन, दो गुजरातिन और एक दक्षिणी लेडी और थीं। इन्होंने भी अकाल से मारे हुओं के प्राण बचाये। सेवा सदन की यह भी इच्छा है कि कुछ ऐसी स्त्रियाँ तैयार करें जो लोगों के घर पर जाकर सफाई का उपदेश दिया करें क्योंकि मैल-कुचैल से रोग फैलने का भय है, उसको एकत्र न होने दिया करें। हर्ष की बात है कि सेवा सदन से शीघ्र ही एक बहन इस कार्य को आरम्भ करेगी। उसने इस विषय में अच्छी शिक्षा पाई है, वह बडी मिलनसार और समझदार है।

८—प्रेम-सम्मेलन—सेवा सदन का वार्षिकोत्सव बड़ी

धूमधाम से किया जाता है, नामी-नामी लोगों को निमन्त्रण दिया जाता है। बड़े-बड़े घरों की महिलाएँ निमन्त्रित होती हैं। पिछले वर्ष ५०० दर्शिका इकट्ठा हुई थीं। लाभ इसमें यह सोचा गया है कि यदि अन्य स्त्रियाँ यहाँ प्रेमपूर्वक बुलाई जायँगी और 'सेवा सदन' का काम सुनाया जायगा तो उनको अवश्य इस परोपकार-व्रत के धारण करने की इच्छा उत्पन्न होगी। काम करने वालियों को जो इतने विशाल सम्मेलन के सामने सराहा जाता है और उपहार दिया जाता है इससे उनका उत्साह और भी बढ़ता है। पूने के डाक्टर स्मिथ साहिब ने सेवा सदन की लड़कियों को धाय और परिचर्या का काम सीखने में बड़ी सहायता दी थी। उन लड़कियों ने जब सुना कि डाक्टर साहिब विलायत को जा रहे हैं तब सेवा सदन की ओर से एक प्रेम-सम्मेलन किया गया और उपकारी डाक्टर साहब को एक चाँदी की डिबिया भेंट की गई। इसी प्रकार जब समस्त भारतवर्ष में सम्राट् जार्ज पंचम के भारत पधारने का उत्सव मनाया गया था तब "सेवा सदन" ने भी ख़ुशी मनाई थी, नगरवासियों को एकत्र किया गया था। पढ़नेवाली लड़कियों को फल-फूल और मिठाई बाँटी, तथा अस्पताल में रोगियों के लिए फल और मिष्टान्न पहुँचाया गया था। लेडी एण्डर्सन पूना में बड़ी प्रिय रही हैं, उनका आदर और प्रेम इस देश की स्त्रियों में बहुत ही रहा है। जब वे विदा होने लगीं तब सेवा सदन ने उनका सत्कार किया। उन्होंने अपने उपदेश और शिक्षा से सेवा सदन

के कार्य में सहायता दी, इसके लिए उन्हें धन्यवाद दिया गया। इस अवसर लगभग ४०० स्त्रियाँ इकट्ठी हुई थीं। सेवा सदन द्वारा जो सम्मेलन होते हैं उनसे एक बडा लाभ यह है कि अच्छे विचारवाली स्त्रियों का उत्साह वढता रहता है तथा उनको अपने से विचार वाली अन्य सखियाँ मिल जाती हैं।

(९) देशोपकारी शिक्षा—अपने इस भारत देश के उन्नत करने के लिए पुरुषगण जो चेष्टा कर रहे हैं उनकी चर्चा स्त्रियों के कानों तक बहुत कम पहुँचती है। सेवा सदन का यह भी ध्यान है कि भारतवर्ष की स्त्रियों के हृदय में स्वदेशो-न्नति के विचार का अंकुर पैदा हो। श्रीमती रामाबाई रानाडे जब दुर्भिक्ष-निवारण के काम पर गुजरात गई थीं तब उन्होंने स्त्रियों के सामने उनकी ज़िम्मेदारी के प्रश्न को समझाया था। इसके अतिरिक्त इन्हीं श्रीमती ने बरार नाम के सूबे में भ्रमण करके बड़े-बड़े शहरों की स्त्रियों के सामने जातीय संगठन के व्याख्यान दिये थे तथा समझाया था कि इस कार्य में उनकी सहायता कितनी आवश्यक है।

(१०) पुस्तकावलोकन—सेवा सदन में जो पुस्तकालय है उससे विशेष लाभ बोर्डिंग हौस में रहनेवाली लडकियों तथा उस्तादनियों को ही है। बाहर की स्त्रियाँ इससे कुछ अनुराग नहीं दिखातीं। बहुत अच्छी-अच्छी पुस्तकें मराठी और अँगरेज़ी भाषा की सेवा सदन के पुस्तकालय में विद्यमान हैं।

विश्वास किया जाता है कि भविष्य में पुस्तकावलोकन का काम अवश्य बढ़ेगा।

सेवा सदन का सब काम चन्दे से चलता है। बम्बई और पूने में अनेक धनवती स्त्रियाँ हैं। वे सर्वदा परोपकारी कामों में बहुत सा द्रव्य खर्च करती रहती हैं। हमारे इस मथुरा शहर में आकर अनेक गुजरातिन और दक्षिणी स्त्रियाँ हज़ारों-लाखों रुपया खर्च कर जाती हैं। उनका वह रुपया ऐसे लाभदायक कामों में नहीं जाता जैसा सेवा सदन में लगाने से सम्भव है। परमात्मा करे इनका मन सेवा सदन की ओर जाय और दान का रुपया सत्कर्म में व्यय हो।

महारानी विक्टोरिया का समय

पत्र नं० १९—

पहले विलायत में शिक्षा की दशा—शिक्षा-विभाग की स्थापना—शिल्प-शिक्षा—मुफ़्त तालीम—विज्ञान-शिक्षा—धर्म्म-शिक्षा—विद्या-प्रचार से लाभ—महाराज पञ्चम जार्ज की इच्छानुसार भारतवर्ष में शिक्षा-विस्तार

संसार के इतिहास में अच्छे शासन की प्रशंसा के लिए जो उच्चासन स्वर्गीया महारानी विक्टोरिया के लिए दिया गया है वह और किसी के भाग्य में नहीं हुआ। महारानी विक्टोरिया का उदाहरण दिखाकर स्त्री-जाति अपनी उच्चता का अभिमान कर सकती है। इंग्लेंड के इतिहास में महारानी से बढ़कर और कोई भी बादशाह नहीं हुआ। नामी-नामी बादशाहों की तलवार में इतना बल न निकला जितना महारानी विक्टोरिया के दयापूर्ण स्वभाव में। यह बात सच है कि विलायत वालों को विद्या का अनुराग पहले भी बहुत था, परन्तु, नियम-पूर्वक शिक्षा का विस्तार महारानी के समय में ही हुआ। पहले प्रजा की ही चेष्टा से प्रायः सब विद्यालय चलते थे, सरकारी ख़ज़ाने से उनको कुछ नियमित सहायता नहीं मिलती थी और न राज-कर्मचारियों के द्वारा। शिक्षा का कोई प्रबन्ध

था। महारानी जिस वर्ष गद्दी पर वैठीं उसी साल पार्लमेंट ने ३० हजार रुपये शिक्षा की सहायता के लिए स्वीकार किये। इगलिस्तान की जन संख्या के अनुसार उन दिनों ऐसे वच्चों की संख्या तीस लाख गिनी गई थी जो स्कूल में जाने योग्य थे। परन्तु, अच्छा प्रवन्ध न होने से केवल आधे लड़के पढते थे। शेप आधे सर्वथा निरक्षर अथवा आध कचरे रहते थे। क्रमशः पार्लमेंट का ध्यान इस ओर आकर्पित हुआ और सरकारी सहायता प्रतिवर्ष ८० लाख तक पहुँचा दी गई तथा कानून वन गया कि ५ वर्ष से ऊपर की अवस्था का कोई भी लडका स्कूल में जाये विना न रहे। इसका फल यह हुआ कि अव वहाँ कोई वच्चा ऐसा नहीं है जो प्राइमरी शिक्षा न पाता हो।

शिक्षा-विभाग का एक अलग महकमा महारानी के समय में ही खुला जिसके निरीक्षक राज्य के उच्च कर्मचारी रहे। विद्वानों की एक सभा सङ्गठित हुई और शिक्षा-विस्तार के लिए जो रुपया मजूर होता था वह इस सभा के परामर्शानुसार ख़र्च होता था। इस समय इस वात की आवश्यकता प्रतीत हुई कि शिक्षा देने के लिए पहले उस्ताद तैयार किये जायँ। अस्तु, नार्मल स्कूल खोले गये। जिन दर्जों मे अध्यापिका अथवा अध्यापक तैयार किये जाते हैं उनको अँगरेज़ी भाषा में नार्मल स्कूल कहते हैं। इन स्कूलों का सारा खर्च सरकार ने अपने ऊपर लिया। पढानेवालों की तनख्वाहें पहले वहुत कम थीं। शिक्षा पाने के वाद लोग और-और धन्धों को करते थे जिनसे आमदनी

बहुत हो। पढ़ाने के काम को लोग बहुत कम पसन्द करते थे। जब तनख़्वाहें बढ़ाई गईं तब शिक्षा-विभाग में भी अच्छे-अच्छे लोग आने लगे। स्कूलों के लिए खुली जगह में अच्छे-अच्छे हवादार मकान बनाये गये। प्रजा की ओर से जितने स्कूल थे उनको भी राज्य से सहायता मिलने लगी। सहायता का नियम पहले विद्यार्थियों की संख्या पर था, जिस स्कूल में जितने अधिक विद्यार्थी पढ़ने आते थे उतनी ही अधिक सहायता मिलती थी। परन्तु, जब यह देखा गया कि केवल संख्या अधिक करने से लाभ नहीं है, पढ़ाई अच्छी होनी चाहिए तब यह नियम हुआ कि जिस स्कूल से जितने फ़ी सदी अधिक विद्यार्थी पास हों उसे उतनी ही अधिक सहायता मिले। ऐसा करने से शिक्षण-कार्य में अधिक उन्नति हुई। देश में शिक्षा की ऐसी हवा फैली कि प्रजा की ओर से अनेक स्कूल खुल गये। स्कूलों का बहुत सा ख़र्च तो फ़ीस से चलता था, कुछ चन्दा हो जाता था और सरकारी सहायता अलग रही। जहाँ प्रजा इतनी ग़रीब होती थी कि अपने बच्चों की फ़ीस देना उससे नहीं बन पड़ता था वहाँ सब खर्च सरकार अपने ऊपर लेती थी। कानून यह था कि ५ वर्ष से ऊपर की अवस्था के सब बच्चे स्कूल जायँ; परन्तु, यह क़ैद नहीं थी कि वे सब सरकारी स्कूलों ही में पढ़ें। यह उनके मा-बाप की इच्छा और सुभीते की बात थी कि चाहे निज के स्कूल खुलवा कर उनमें अपने बच्चों को पढ़ावें अथवा सरकारी स्कूलों में भेजें। राज्य से भी

सब तरह के स्कूल सहायता पाते थे। ईसाइयों में मुख्य बड़े दो फ़िर्क़े हैं। एक प्रोटेस्टेंट कहलाते हैं और दूसरे रोमन कैथोलिक कहे जाते हैं। इनमें लगभग इतना ही अन्तर है जितना आज कल आर्य और हिन्दू समाज के बीच है। राज्य-परिवार प्रोटेस्टेंट धर्म को मानता है, परन्तु, पढ़ने के लिए राज्य से रोमन-कैथोलिक लोगों के स्कूलों को भी उतनी ही सहायता मिलती थी जितनी कि प्रोटेस्टेण्टों को। सम्प्रदाय के भेद का विचार शिक्षा-विस्तार करने में न था। उन दिनों जितने सरकारी स्कूल थे लगभग उतने ही प्रजा की ओर से स्थापित किये हुए थे। इंग्लैंड के सिवाय स्काटलैंड और आयलैंड में भी शिक्षा-विस्तार करने की ओर महाराना के कर्मचारियों का ध्यान था।

सन् १८९१ में यह निश्चय हुआ कि आरम्भिक शिक्षा सब प्रजा के लिए फ़्री अर्थात् मुफ़्त कर दी जावे, किसी विद्यार्थी से कोई भी फ़ीस न ली जावे। विद्यार्थियों का उत्साह बढ़ाने के लिए इनाम भी दिया जाने लगा। जो विद्यार्थी सबसे कम ग़ैर-हाज़िर रहता था वह इनाम पाता था। इन सब चेष्टा का फल यह हुआ कि उस देश में प्राचीन काल के इक्का-दुक्का बूढ़े लोगों को छोड़ कर ऐसा मनुष्य कोई भी नहीं मिलेगा जो पढ़ना-लिखना न जानता हो।

यह तो हुई साधारण शिक्षा की बात-चीत, शिल्प अर्थात् कारीगरी सिखाने का प्रबन्ध इससे पृथक् है। इस कार्य के लिए बड़े-बड़े विद्यालय बन गये हैं। इनके सिवाय जितने कल-कार-

ख़ाने हैं उन सब में लडके और लड़कियाँ तरह-तरह के काम सीखते हैं। विलायत ऐसा देश है जहाँ इतना अन्न नहीं पैदा होता जितना हिन्दोस्तान में अथवा अन्य देशों में। रूस और अमरीका से भी बहुत सा अन्न इंगलिस्तान में पहुँचता है। भारतवर्ष से भी जहाज के जहाज लदे चले जाते हैं। इस अन्न के बदले में वहाँ से रुपया नहीं आता वरन् ऐसी चीज़ें आती हैं जो हमारे देश के कारीगर नही बना सकते। इस पर बड़ा ध्यान दिया जाता है कि कौन सी ऐसी चीजें हैं जिन्हें हम अन्न के बदले में खरीद सकते हैं। इन सब चीजों के बनाने के लिए वहाँ सैकडों कल-कारख़ाने हैं जहाँ हजारों स्त्री और पुरुष काम करते हैं।

साधारण शिक्षा की पढाई तो मनुष्य मात्र के लिए उपयोगी है। राजा का धर्म है कि यदि प्रजा का सच्चा कल्याण चाहे तो उनकी शिक्षा का पूर्ण प्रबन्ध करे। हमारे देश के राजाओं के राजा भोजने इस बात पर खूब ध्यान दिया था जिसका फल यह हुआ था कि साधारण मजदूर लोग भी संस्कृत बोलते थे और शुद्धाशुद्धियों को समझते थे। महारानी के मन्त्रियों ने यह कानून तो पास कर दिया था कि सब बच्चे स्कूल जायँ, परन्तु, स्कूलों में फीस का नियम था। जो मा-बाप ऐसे थे कि फीस देने की सामर्थ तो रखते न थे; परन्तु, वे यह भी अच्छा नहीं समझते थे कि अपनी ग़रीबी को जाहिर करके वे अपने बच्चों की फीस मुआफ़ करालें, उनकी इस आन्तरिक

इच्छा का चतुर मंत्रियों ने स्वयं ही विचार कर लिया और सब स्कूलों से फीस मुआफ़ कर दी। यह परिवर्त्तन १८९१ में हुआ था।

एन्ट्रेंस तक जिन मदरसों में शिक्षा दी जाती है वे स्कूल कहलाते हैं, इसके ऊपर की शिक्षा का स्थान कालेज होता है। यूनीवर्सिटी अथवा विश्व-विद्यालय के आधीन उच्च शिक्षा का प्रबन्ध रहता है। सब प्रकार की विद्या सीखने के लिए प्रथम साधारण शिक्षा की आवश्यकता होती है। जब लडका एन्ट्रेंस पास कर चुकता है तब वह हर तरह के हुनर सीख सकता है। इञ्जीनियरी, डाक्टरी, खेती आदि की जो शिक्षा है वह तब ही आरम्भ होती है जब कि लडके साधारण शिक्षा पा चुके हों। संसार में जो कारीगर साइन्स अर्थात् विज्ञान नहीं जानता वह अपने कार्य में कदापि उन्नति नहीं कर सकता। हमारे देश के बढ़ई, लुहार अपने पुश्तैनी पेशे को उसी प्रकार करते चले आते हैं जिस प्रकार कि उनके पुरखे कर गये थे। जिन पदार्थों को वे उपयोग में लाते हैं उनका पूर्ण विवरण वे नहीं जानते। यह सब ज्ञान साइन्स के पढ़ने से आता है। सन् १८५६ में महारानी की सरकार ने ६५००० पौंड का वार्षिक व्यय साइन्स के लिए मुकर्रर किया था। आजकल इस शिक्षा पर कुछ कम दस लाख रुपया वार्षिक खर्च किया जाता है।

हमारे देश के स्कूलों में बच्चों को धर्म-शिक्षा देने का नियम नहीं है। कारण यह है कि भारतवर्ष में प्रजा का एक धर्म

नहीं है। यहाँ हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध, पारसी आदि तरह-तरह के धर्म माननेवाले लोग हैं। परन्तु, विलायत में प्रायः सभी बाइबिल के उपदेशों को मान्य करते हैं इसलिए वहाँ प्रतिदिन लड़कों को धर्म-शिक्षा दिये जाने का प्रबन्ध है। इतवार के दिन "सन्डे स्कूल" लगता है। इस दिन केवल धर्म-शिक्षा ही होती है। फल इसका यह होता है कि बचपन से ही बच्चों को धार्मिक ज्ञान हो जाता है और वे दुष्कर्मों से घृणा करने लग जाते है। हमारे देश में भी अब धर्म्म-शिक्षा पर लोगों का ध्यान गया है। हिन्दू और मुसलमान दोनों ने अपनी-अपनी ऐसी यूनिवर्सिटियाँ स्थापित की हैं जिनमें वे अपने धर्म का उपदेश दे सके ।

विलायत में जितने कारख़ाने हैं, उनमें विशेष कर लड़के और लडकियाँ काम करती है। महारानी के राज्य में इनके सुधार पर भी ध्यान हुआ। सरकार की ओर से ऐसे कर्मचारी नियत हुए जो उन स्थानों को देखते थे कि जहाँ पर लड़के लड़कियाँ काम करते थे। वे स्थान ख़ूब खुले हुए और हवादार थे। काम करने के लिए भी समय स्थिर होगया। इसके सिवाय जो मज़दूर कोयले की खानों के भीतर काम करते थे उनकी तन्दुरुस्ती पर ध्यान दिया गया। प्रसन्नता की बात है कि ऐसा क़ानून भारतवर्ष मे भी ज़ारी हो गया है।

पिछले राज्यों में ऐसा होता था कि धनी लोग ही सब प्रकार के ऐश्वर्य भोगते थे और साधारण ग़रीब लोग उनकी

सेवा ही में अपना जीवन काट देते थे। महारानी के राज्य में साधारण मजदूरों की स्थिति बहुत सुधर गई। उनकी मजदूरी पहले से ड्योढ़ी होगई। उनके रहने के लिए मकान और खाने का सामान अच्छा और सस्ता होगया। गरीब और सर्व साधारण लोगों के लिए बगीचे लगाये गए जहाँ बैठकर वे शुद्ध वायु का सेवन कर सकें। इन सब चेष्टाओं का फल यह हुआ कि विद्या के प्रकाश से देश में से चोर, ठग और उचक्कों की संख्या बहुत कम होगई अर्थात् जेलखानों में पहले की अपेक्षा आधे कैदी रह गये, गरीबी सिर्फ एक तिहाई रह गई। पहले बहुत से लड़के स्कूल न जाकर कुसङ्ग में पड जाते थे और बुरे-बुरे काम सीख कर पूरे दुष्ट बन जाते थे। जब उनको स्कूलों में जाना पड़ा और धार्मिक-शिक्षा मिलने लगी तब वे सब सदाचारी होने लगे। महारानी के राज्य में स्त्रियों की दशा बहुत सुधरी। उनको अपना निजका धन रखने की शक्ति होगई। महारानी के राज्य में पहले विलायत के लोग जो कुछ पाते थे खर्च कर डालते थे। साधारण मजदूर तो अपना बहुत सा पैसा शराब पीने में नष्ट कर डालते थे। महारानी का ध्यान इस तरफ भी हुआ और डाकखानों में सेविङ्ग बेंक खुल गये। इनमें मजदूर अपनी बचत का रुपया जमा करने लगे। गरीब लोगों का सेविङ्ग बेंक में ९ करोड रुपया इकट्ठा हो गया। भारतवर्ष में भी सेविङ्ग बेंक खुल गये है जहाँ कम से कम ।) तक जमा हो जाते हैं और ६) हो जाने पर सरकार ब्याज देती है।

अँगरेज़ों का जब इस देश में राज्य स्थापित हुआ था तब उसका सारा प्रबन्ध ईस्ट इंडिया कम्पनी के हाथ में था। सन् १८५७ में एक बड़ा भारी गदर हो गया। उस समय से इस देश का शासन महारानी विक्टोरिया ने अपने हाथ में लिया। वे ख़ुद तो इस देश में नहीं आ सकीं, परन्तु, उनके बड़े बेटे जो उनके पीछे गद्दी पर बैठनेवाले थे यहाँ की प्रजा की दशा अपनी आँखों से देख गये और भारत की प्रजा पर भी वैसा ही व्यवहार आरम्भ होगया जैसा विलायत में था। ग़दर के पीछे हमारे देश में बहुत कुछ परिवर्त्तन होगया है और जब से महारानी के पोते हमारे वर्तमान सम्राट् जार्ज पंचम यहाँ आकर दिल्ली में राज्य-मुकुट धारण कर गये हैं तब से तो भारतवर्ष में एक नया युग उपस्थित होगया है। सम्राट् पञ्चम जार्ज ने इस देश के कल्याण के लिए सबसे अच्छा काम शिक्षा-विस्तार का समझा है और उसके लिए ५० लाख साल वार्षिक ख़र्च करने की आज्ञा दी है। जिससे आशा होती है कि क्रमशः यह देश भी वैसा ही सुखी हो जायगा जैसा कि आजकल इंग्लैंड है। कुछ दिन हुए इस देश की बड़ी कौंसिल में इस बात की चर्चा उठी थी कि यहाँ भी सब बच्चों को ज़बर्दस्ती स्कूल भेजने का कानून हो जाय, परन्तु, कई कारणों से यह क़ानून प्रचलित न हो सका।
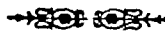
दिल्ली की प्रसिद्ध रानियाँ

पत्र नं० २०—

दिल्ली का प्राचीनत्व—महाराणी द्रौपदी—रानी संयोगिता—रजिया बेगम—नूरजहाँ—मुमताज महल—महारानी मेरी।

इस समय संसार में जितने प्रसिद्ध नगर हैं उनमें अब दिल्ली की समानता करनेवाला कोई दूसरा नगर नहीं है। जो कुछ ठाठ-बाट इस शहर ने देखे हैं उनका उदाहरण अन्य कहीं नहीं मिलता। जिस नगर में सम्राट् जार्ज पंचम के साथ महाराणी मेरी सिंहासन पर बैठी थीं उसी नगर में अनेक महारानियाँ और बेगमें अपने-अपने समय में आदरणीय हो चुकी हैं। आज इस पत्र में कुछ प्रसिद्ध सम्राज्ञियों का सूक्ष्म वृत्तान्त लिखा जाता है। तुम अन्य ग्रन्थों में इनकी विशेष चर्चाएँ पाओगी।

सबसे पहला राजसूय यज्ञ महाराज युधिष्ठिर के समय में हुआ था। जिस तरह सम्राट् जार्ज के दरबार में अनेक राजा आये थे उसी प्रकार उन दिनों में भी जमघट हुआ था।

महाराणी द्रौपदी महाराज युधिष्ठिर की प्रिय पत्नी थीं। द्रौपदी ने अपने पति के साथ अनेक कष्ट और आपदाएँ सहीं। महाराज युधिष्ठिर को जूआ खेलने का बड़ा शौक़ था और एक बार ऐसा हुआ कि वे अपना सब कुछ जूए में हार गये और तो क्या अपने भाई और रानी द्रौपदी तक को दे बैठे। जूए में जीती हुई द्रौपदी को दुर्योधन के एक भाई ने भरी सभा में नगी करना चाहा। जब इसका समाचार महाराजा धृतराष्ट्र को मालूम हुआ तब उन्हें बड़ी लज्जा-बोध हुई और द्रौपदी को अपने पास बुला कर अपने हृदय का शोक प्रकाशित किया और कहा—"जो इच्छा हो सो माँग, मैं तेरी इच्छा पूर्ण करने को तैयार हूँ।" द्रौपदी बोली—"यदि आप सचमुच कृपा करना चाहते हैं तो राजा युधिष्ठिर को स्वतन्त्र कर दीजिए।" धृतराष्ट्र ने स्वीकार किया तथा कुछ और माँगने के लिए कहा। द्रौपदी ने भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव को भी छोड देने की प्रार्थना की। बुड्ढे ने यह बात भी मान ली और साथ ही और कुछ भी माँगने के लिए आग्रह किया। द्रौपदी ने बडी नम्रता से उत्तर दिया—"मैं क्षत्री-कन्या हूँ। शास्त्र की आज्ञा है कि क्षत्री केवल दो वरदान माँगने का अधिकारी है। मुझे अब और कुछ न चाहिए।" इसके पीछे द्रौपदी पाण्डवों के साथ बारह वर्ष वन में रही और राजा की बेटी होकर भी उसने बियाबान जगल में दिन काटे, अनेक कष्ट सहे। वह ऐसी दृढ थी कि सर्वदा पाण्डवों को हिम्मत देती रहती थी। महाभारत-युद्ध में द्रौपदी

भी अपने में सैन्य-दल के साथ ही थी। युद्ध में पाण्डव जीते, युधिष्ठिर मालिक हुए, परन्तु, उनको अपने भाई-बन्धु और कुटुम्ब-परिवार के नष्ट होने का इतना शोक हुआ कि पाँचों भाई हिमालय को चले गये। द्रौपदी यहाँ भी साथ थी। वे सब यहीं से स्वर्ग सिधारे।

महारानी द्रौपदी के पीछे इतिहास में रानी संयोगिता का नाम आता है। यह कन्नौज के राजा जयचन्द की लड़की थी। राजा पृथ्वीराज उन दिनों दिल्ली में थे। पिता ने जब लड़की का स्वयम्वर रचा तब पृथ्वीराज को नहीं बुलाया तथा उसकी मूर्ति बना कर दरवाजे पर रख दी। स्वयंवर में दूर-दूर के राजा आये थे। जब सभा भर गई तब राजा जयचन्द ने संयोगिता से कहा कि सभा में जितने राजा मौजूद हैं उनमें से वह जिसको चाहे उसके गले में वर माला डाल दे। संयोगिता सभा में आई। उसने सब राजाओं को देखा, सब जगह फिरती-फिरती वह वहाँ पहुँची जहाँ राजा पृथ्वीराज की मूर्ति थी। उसने उसी मूर्ति के गले में वर माला डाल दी। पिता को यह बात अच्छी न लगी, लड़की को उसी समय कैद में डलवा दिया। जितने राजा आये थे सब निराश होकर अपने-अपने देश को चले गये। संयोगिता ने जो अपने मन का वर चुनने में वीरता दिखाई थी उसकी चर्चा चारों दिशा में फैल गई। राजा पृथ्वीराज ने भी यह सब सुना और फौज लेकर संयोगिता का कैदखाने से उद्धार किया और उसे दिल्ली ले जाकर अपनी

पटरानी बनाया। पिता जयचन्द को पृथ्वीराज से बदला लेने की बड़ी चिन्ता हुई। इस देश में तो उसको पृथ्वीराज की टक्कर झेलनेवाला कोई नहीं मिला। वह अफ़गानिस्तान के शाहबुद्दीन मुहम्मद ग़ोरी को पृथ्वीराज के मुकाबिले में चढा लाया। यह सन् ११९१ की घटना है। थानेसर के मैदान में पृथ्वीराज फ़ौज लेकर पहुँचा और ऐसा लडा कि शाहबुद्दीन के छक्के छुड़ा दिये। उसे भागते ही बना। इस लडाई में पृथ्वीराज के भी बहुत से सामन्त मारे गये। गज़नी लौट कर शाहबुद्दीन फिर युद्ध की तैयारी करने लगा और दो वर्ष पीछे थानेश्वर के पास दूसरा युद्ध हुआ। इस बार पृथ्वीराज ने बड़ी बहादुरी से मुक़ाबिला किया। वह ख़ुद सबसे आगे लडता था। किसी दाव में पड़कर वह मुसलमानों के हाथ पड़ गया और मारा गया। यह समाचार जब दिल्ली में पहुँचा तब संयोगिता सब रानियों समेत चिता में जल मरी। सन् ११९४ में जयचन्द को भी शाहबुद्दीन के हाथों प्राण देने पड़े। फूट का यही फल है कि दोनों बरबाद हों। पृथ्वीराज और जयचन्द दोनों नष्ट होगये। दिल्ली में एक लम्बी बुर्जी बनी हुई है आजकल इसका नाम "कुतुब मीनार" है। परन्तु, कुछ लोगों का यह ख़याल है कि यह मीनार पृथ्वीराज के समय की है और इस पर चढ़ कर संयोगिता प्रति दिन जमुना के दर्शन करती थी और दिल्ली शहर की शोभा देखती थी। कुतुबुद्दीन ने इसको उलट-पुलट कर अपने नाम की मीनार कर दिया।

सयोगिता के वाद भारतवर्ष की गद्दीपर जो मुसलमान लड़की वैठी उसका नाम रज़िया वेगम इतिहास में अकेला ही है। यह वादशाह शमसुद्दीन अल्तमश की प्यारी वेटी थी। यह सन् १२३६ की १९ नवम्बर को अपने भाई के मारे जाने के पीछे गद्दी पर वैठी थी।

इतिहासकारों ने इस लड़की की बुद्धिमत्ता की वड़ी प्रशंसा की है। पिता अल्तमश ने इसको ख़ूब लिखाया-पढाया था और व्यायाम द्वारा इसको वडा शक्तिशाली वना दिया था। पिता के सामने से ही वह राजकाज देखती थी, वाप के साथ यात्रा भी करती थी। जिन दिनों ग्वालियर से लड़ने के लिए वादशाह चला उन दिनों वेटी रज़िया को ही राज्य-प्रवन्ध के लिए छोड़ गया था। इस वात पर दरवारियों में कानाफूसी हुई कि यह कैसी वात है जो लड़की लड़के से अच्छी समझी जाती है। इस पर वादशाह ने कहाः—"मैं देखता हूँ कि मेरे तमाम लड़के शराव के आदी और ऐश-इशरत के शौक़ीन हैं। उनको राज-काज का ध्यान नहीं है। रज़िया वेगम यद्यपि लड़की है; परन्तु, उसके हृदय में पौरुष और मस्तिष्क में समझ है, यही कारण है कि मैं उसे शाहजादों से वेहतर समझता हूँ।

शमसुद्दीन अल्तमश का लड़का विल्कुल नालायक़ था और अपनी वदचलनी के कारण मारा गया। जव रज़िया गद्दी पर वैठी तव वहुत से सरदार स्त्री के आधीन रहने से अप्रसन्न हुए और एका करके वाग़ी होगये। सुलताना

रज़िया ने अपने बुद्धि-बल से उन सब को नीचा दिखाया और उनके इख़्तियारात कम कर दिये। एक अस्तबल के दारोगा को बडा ओहदा दिया गया। दारोग़ा हबशी था उसकी पदोन्नति से लोग फिर नाक-भौं चढाने लगे। लाहौर का एक सूबेदार बिगड खड़ा हुआ। रज़िया उसके मुक़ाबिले में पहुँची। सूबेदार ने नीचा देखा और क्षमा-प्रार्थना की। उच्च हृदयवाली रज़िया ने उसे मुआफ़ कर दिया। इस पर भी फिर बलवा हुआ। दारोग़ा मार दिया गया। रजिया ने एक सरदार के साथ निकाह कर लिया। इस सरदार के साथ रज़िया ने बहुत सी फ़ौज लेकर फिर तख़्त लेना चाहा, लडाई की और इसी चेष्टा में वह मारी भी गई। रजिया ने केवल ३॥ वर्ष राज्य किया, यदि ये आपस के फ़साद न होते तो उसका राज बहुत दिन ठहरता। उसने प्रजा के आराम का बहुत ध्यान रक्खा था, प्रजा उससे बहुत ही प्रसन्न थी।

रज़िया बेगम के पीछे इतिहास में नूरजहाँ का नाम मिलता है। इसने अपनी बुद्धि से जहाँगीर बादशाह को ऐसा ख़ुश किया था कि बादशाह के नाम के साथ इसका नाम भी सिक्के पर ख़ुदता था। यह फ़ारस देश के एक अमीर की लड़की थी। ग़रीबी के कारण जब इसका बाप अपने भाग्य की परीक्षा के लिए भारतवर्ष को आरहा था तब मार्ग में यह पैदा हुई थी। बादशाह अकबर ने इसके बाप को अच्छा आदर दिया। जब यह सयानी हुई तब राजपुत्र सलीम ने इसके साथ विवाह करना

चाहा, परन्तु, अकबर ने अपनी सम्मति न दी। इसका विवाह एक और सरदार से करा दिया। समय पाकर यह विधवा हो गई और दो वर्ष तक शोक में रही। उपरान्त जहाँगीर बादशाह के बड़े आग्रह से इसने उसको पति रूप में स्वीकार किया। इससे बादशाह को बड़ी प्रसन्नता हुई। सन् १६११ में बादशाही ठाठ से विवाह हुआ। पहले यह नूर महल (महल की शोभा) कहला कर फिर नूरजहाँ अर्थात् जगत् की शोभा कहाई।

नूरजहाँ को नये-नये पदार्थों का बड़ा शौक था। कई तरह के जेवर और जनाने कपड़े इसने ख़ास तौर से तैयार कराये। अन्य आराम की चीजें भी इसने प्रचलित कीं। जितना इसको जेवर-कपड़े का शौक था उतना ही मर्दानगी दिखाने का भी हियाव था। इसने एक बार चार शेरों को मार डाला था। जिस वक्त बादशाह को महावतखाँ ने क़ैद कर लिया था उस वक्त यही काम आई और ऐसा उपाय रचा कि अपने पति को सही सलामत निकाल लाई। इसका हृदय बहुत अच्छा था, यह उदार भी खूब थी। अपने पास से सर्वदा निर्धन और अनाथों की सहायता करती थी। मक्का-मदीने के यात्रियों को यात्रा का व्यय दिया करती थी। जिन लड़कियों के माँ-बाप मर जाते थे और कोई रक्षक नहीं होता था उनके विवाह का ख़र्च अपने पास से करती थी। कविता करने का इसको ऐसा अच्छा अभ्यास था कि किसी छन्द का एक पद कह देने से उसे तत्काल पूरा कर देती थी।

सन् १६२७ में शाहशाह जहाँगीर के मर जाने पर यह फिर विधवा होगई। विधवा होते ही इसने अपने सब शौक़ छोड दिये। शाही ठाठ के कपडे और जेवर दूर कर दिये। मरने तक इसने फिर कोई रंगीन कपडा नहीं पहिना। यह सर्वदा सफ़ेद कपडों में रहती थी। सन् १६६४ में इसका देहान्त हुआ।

नूरजहाँ बेगम की एक भतीजी थी जिसका नाम अर्जमन्दबानू बेग़म था। वह भी रूप और गुण में अपनी फूफी के ही सदृश थी। पढ-लिख जाने से वह सोने में सुगन्ध का उदाहरण थी। शाहशाह जहाँगीर ने उसकी योग्यता देखकर उसकी शादी अपने बेटे शाहजहाँ से करादी। विवाह के समय उसकी उमर २० वर्ष के लगभग थी। बडी धूम-धाम से शादी हुई। ख़ुद बादशाह बेटीवाले के घर गया था। विवाह के बाद अर्जमन्द बानू का नाम "मुम्ताज़ महल" प्रसिद्ध हुआ। इस स्त्री ने अपनी सेवा से अपने पति को बहुत प्रसन्न रक्खा। शाहंशाह बादशाह यात्रा के समय भी उसको अपने साथ रखता था। वह समझदार इतनी थी कि बादशाह सब कामों में उससे सलाह लिया करता था। जितने पत्र बादशाह के पास आते थे उन सब को मुम्ताज महल पढती और अपनी सम्मति देती थी। वह स्वभाव से बडी दयावाली और दीन-प्रतिपालक थी। जिनको कहीं से सहायता न मिलती थी उनको वह सहायता देती थी। अपनी एक बाँदी को उसने इसी कार्य पर नियत कर रक्खा था। २० वर्ष तक सौभाग्यवती रहकर ३८ वर्ष की

अवस्था में उसका देहान्त होगया। वादशाह को अपनी प्यारी बेगम के मरने का बडा ही शोक हुआ। उसने फिर विवाह नहीं किया और रज के मारे थोडे ही दिन में उसके वाल सफ़ेद हो गये और बुढापा आगया। वादशाह मुम्ताजमहल का कितना प्रेमी था, वह आगरे के रौजे को देखने से जान पडता है। इसको ताज वीवी का रौजा तथा मुम्ताज महल का मकवरा भी कहते हैं। इस स्थान को देखने के लिए दूर-दूर से यात्री आते हैं। और इसे देखकर अपनी यात्रा का कष्ट भूल जाते हैं।

'मुम्ताज महल' के मरने के वाद और कोई रानी या वेगम दिल्ली में प्रसिद्ध नहीं हुई। भारतवर्ष की राजरानी महारानी विक्टोरिया तथा महारानी अलेक्जेंड्रा दिल्ली की सिरताज तो हुई, परन्तु, भारतवासियों को उनके दर्शन नहीं हुए। जब से अँगरेजों का राज्य इस देश में आया तभी से यहाँ की प्रजा के हृदय में इस वात की उत्कठा थी कि अपने नये महाराजा और महारानियों के दर्शन करें और देखे कि जिनके राज्य में भारत-वासियों ने ऐसा आनन्दानुभव किया है वे कैसे हैं। महाराज पंचम जार्ज ने हम लोगों की वह इच्छा पूर्ण की। जिस दिल्ली में ऊपर लिखी हुई रानियाँ और वेगमें अपने समय में प्रजा की पूजनीया हुई थीं उसी दिल्ली में श्रीमती महारानी मेरी भी सिंहासनासीन हुईं। महारानी मेरी का पवित्र चरित्र मैं एक अन्य पत्र में लिख चुका हूँ।

पितृभक्त पुत्रियाँ

पत्र नं० २१—

लड़कियों का लालन-पालन और स्नेह—कृष्णा कुमारी का विष भक्षण—शाहजहाँ-सुता जहाँनारा का पिता के साथ कैद में रहना।

जब हम ध्यान देकर देखते है तब माता-पिता और उनकी सन्तान का सम्बन्ध भी स्वार्थमय पाते हैं। घर में जब लडका होता है तब लोग फूले नही समाते. वडी ख़ुशी मनाते हैं, इनाम बाँटते हैं, वन्दूक चलाते हैं, जच्चा की भी खूब खातिर करते हैं। उसके लिए तरह-तरह के खाने मेवे, मिठाई इकट्ठे करते हैं। रोज रात को गाना होता है, ढोलक खडकती है। भाई-वन्धुओं को दावत दी जाती है। दुर्भाग्य से जब लडकी होती है तब घर में मुर्दनी सी छा जाती है। लडकी की माँ की कोई वात भी नहीं पूछता। कारण इसका केवल स्वार्थ है। लडके से आशा की जाती है कि वह वडा होकर खूब धन कमावेगा, पिता का नाम करेगा, विद्वान् होकर यश फ़ैलावेगा, वुढापे में सुख देगा—यही कारण है कि उसका लालन-पालन वडे उत्साह और अनुराग से होता है। भूत-प्रेत, दई-देवताओं की ख़ुशामद की जाती है। वैद्य-हकीम और डाक्टरों की शरण ली जाती है। टोने-टोटके किये जाते हैं। ज़रा होश सभाँलते ही पढ़ाना लिखाना सिखाने

की चिन्ता की जाती है। परन्तु, ये सब बातें लडकी के लिए आवश्यक नहीं समझी जातीं। हाँ, माता अवश्य अपनी लडकी पर सच्चा हित रखती है और लड-झगड कर बेचारी कन्या की जान बचा लेती है। पिता अपनी उदासीनता दिखाने में ज़रा भी नहीं शरमाता क्योंकि लडकी से उसका कुछ स्वार्थ नहीं सधता। वे घर का कूडा समझी जाती हैं और यही लौ लगी रहती है कि शीघ्र ही यह घर का कूडा बाहर हो और घर साफ हो। लडकियों की शारीरिक और मानसिक उन्नति हो या न हो, परन्तु, पिताजी इसके लिए विशेष चेष्टा करना उचित नहीं समझते। आश्चर्य तो यह है कि ऐसा निरादर पाकर भी लडकियाँ लडकों की अपेक्षा अच्छी निकलती हैं। सब तरह के कष्टों को हँसी-खुशी से सहती हैं और अपने माता-पिता को कभी नहीं भूलतीं। विवाह होने के उपरान्त ग़रीब घर की लडकी राज-घर में जा कर अपने निर्धन माँ-बाप की कुटी के लिए आँसू बहाती रहती है। जब कभी पिता के यहाँ आती है तब मिस्सी-कुस्सी रोटी को बडे स्वाद से खाती है। ससुराल में पलँग से नीचे पैर न रखनेवाली भी मायके में घर का काम करने को उद्यत रहती है। जो स्वच्छन्दता और प्रसन्नता वह यहाँ अनुभव करती है वह ससुराल में नहीं प्राप्त होती, जो हार्दिक-प्रेम अपने मा-बाप, भाई-बहिन, अडोसी-पडोसी से होता है वह और कहीं नहीं होता है। ससुराल की प्रीति भय की प्रीति है, परन्तु, मायके का भाव स्वाभाविक है। हमने

कई लोगों से सुना है कि ग़रीब पिता का लड़का जब किसी बड़े ओहदे पर जाता है तब अपने गाँववालों तक को भूल जाता है और उनसे मिलने में अपनी इज़्ज़त हतक समझता है। परन्तु, लड़की अपने गाँव की चमारिन, कोलिन तक को पाकर उसका सगी बहिन की तरह आदर करने को तैयार रहती है। विधवा होने पर विशेष करके लड़कियाँ अपना शेष जीवन पिता के घर ही व्यतीत करती हैं। यहाँ आकर वे अपना दुख-सुख भूल जाती हैं। अपने बूढ़े माँ-बाप की सेवा अपने ऊपर ले लेती हैं। जिन लड़कों को उन्होंने ऐसे अनुराग से पाला था वे जवान होने पर उनका कुछ एहसान नहीं मानते अथवा उन्हें सांसारिक कार्यों से अवकाश ही नहीं मिलता। बहुएँ अपने बच्चों से फ़ुर्सत नहीं पातीं। बूढ़ों की ख़बर लेनेवाली विधवा लड़की ही हुआ करती हैं। पुरुषों में नामी, माता-पिता का भक्त श्रवण हुआ है। उसके लिए एक ख़ास त्यौहार सलूनो मनाया जाता है। उस दिन श्रवण का स्मरण किया जाता है। परन्तु, लड़कियों की ऐसी एक भी कथा नहीं मिलती जिसमें उनकी इस सेवा का कुछ उल्लेख हो। हाँ, चीन देश में ऐसी लड़कियों की छत्री बनी हुई है जिन्होंने अपने सांसारिक सुखों को छोड़ कर अपने मा-बाप ही की सेवा में अपना जीवन व्यतीत कर दिया है। यह सम्भव नहीं है कि इस देश में ऐसी घटना न हुई हो। मेरा ख़याल है कि ऐसा कोई घर न होगा जिसमें लड़कियों ने अपने मा-बाप के लिए अपना सब सुख न छोड़

दिया हो। दूर जाने की आवश्यकता नहीं है तुम्हारी बूआ बीबी कौशल्या ने विधवा होने पर अपना प्रधान कर्तव्य मुझे शिक्षा देना निश्चय किया। आजकल तो बोर्डिंगहौस ऐसे बन गये हैं कि उनमें घर का सा सुख है, परन्तु, पहले ऐसा न था। बीबी कौशल्या ने मेरे लिए अनेक कष्ट उठाये। उन्हें केवल मुझे पढ़ाने से काम था। थोड़े से ख़र्च में शहर का निवास सुख-पूर्वक करना वेही जानती थीं। उनको मेरा जितना अभिमान था, मेरी आरोग्यता और सदाचार का जितना ध्यान था वह मैं कभी नहीं भूल सकता।

कृष्णाकुमारी ने अपने पिता की मान-रक्षा के लिए अपने प्राण दे दिये यह बात अभी बहुत पुरानी नहीं हुई है। वह समय अब दूर हो गया है जब लड़कियों के कारण माता-पिता को बहुत लज्जित होना पड़ता था, इसी कारण राजपूत लोग अपनी लड़कियों को होते ही मार डालते थे। लड़कियों के मारने की प्रथा बहुत कठिनता से अब बन्द हुई है। राजपूतों में जहाँ किसी की लड़की सयानी हुई कि आस-पास के राजपूत दाव-घात लगा कर उसे ले भागते थे। अनेक झगड़े होते थे, खून-खराब होता था। इन सब आपदाओं से बचने के लिए लोग लड़कियों को जन्मते ही मार डालते थे। किसी का ससुर और साला बनना बाज़ राजपूतों को प्रिय न था। बेचारी कृष्णाकुमारी को भी इसी दुराचार के प्रवाह में प्राण देने पड़े। जब वह सयानी हुई तब उसके रूप, शील और चातुर्य की

चर्चा सब राजपूताने में फैल गई । वह मेवाड के राणा की लड़की थी, उसका सम्बन्ध केवल राजा लोगों से ही होना था। पहले जयपुर के राजा ने अपनी इच्छा प्रकट की और चढ़ावे की भाँति बहुत सी सौगात की चीज़ें राणा के पास भेजीं। राणा ने विवाह करना स्वीकार कर लिया। यह सब हो ही रहा था कि जोधपुर-नरेश ने भी अपने मनुष्य भेज दिये। जयपुर से जो आदमी आये हुए थे उनके साथ इनकी मुठभेड हुई और जयपुरवाले खदेड़ दिये गये।

जब यह समाचार जयपुर में पहुँचा तब उनको अपना बड़ा अपमान बोध हुआ। शीघ्र फौज तैयार हुई और जोधपुर पर चढ़ गई, दोनों ओर ख़ूब शस्त्र चले। अन्त में जोधपुर का पक्ष प्रबल रहा। फिर क्या कहना था। जोधपुरवालों की चढ़ बनी। जोधपुरवाले राजा कृष्णा का विवाह केवल नामवरी की इच्छा से करना चाहते थे, असल में उन्हें कृष्णा की कोई आवश्यकता न थी। ज़िद केवल इस बात की थी कि जयपुर नरेश कहीं इस माँग को न ले जावें। बेचारी कृष्णा का उन्हें तनिक भी मोह न था। किसी दुष्ट की सलाह से लडकी के पिता को यह कहला भेजा कि जो अपनी कुशल चाहते हो तो अपनी लडकी को मार डालो। उन दिनों लडकियों के प्राणों पर दया दिखानेवाले सलाहगीरों का अभाव न था; पर, कायर पिता ने वही बात मान ली। शोक है कि यह राणा उसी मेवाड़ की गद्दी पर था जिसमें अपनी बात पर प्राण देनेवाले अनेक नरेश

हो गये हैं। युद्ध में मरना क्षत्रिय लोग अपना परम सौभाग्य समझते हैं। परन्तु, कायर राणा का इतना हियाव न था।

अहा! बाप होकर जीते जी अपनी कन्या इस तरह मरवाना कितना भयानक काम है! यह चर्चा जब दर्बारियों में पहुँची तब कई दर्बारी बहुत ही उत्तेजित हुए। राणा का आग्रह होने पर भी राजवंश का कोई वीर अपने हाथ से कृष्णा को मारने के लिए तैयार नहीं हुआ। बड़ी कठिनता से एक रिश्तेदार छुरी सँभाल कर भोली-भाली कृष्णा के प्राण लेने के लिए चला। जब वह वहाँ पहुँचा जहाँ लड़की बैठी हुई थी तब उस निरप-राधिनी बाला को देखते ही दया के कारण उसका हृदय उमड़ आया और वह वहाँ ठहर न सका। छुरी को वहीं छोड़, आँसू सँभालते-सँभालते बाहर भाग गया।

उसी समय कृष्णा और उसकी माता को सब भेद मालूम हुआ। माता बेचारी बहुत रोई-पीटी, डकराई, गिड़गिड़ाई और राजा से उसके प्राणों की भिक्षा माँगती रही। इस संकट-काल में कृष्णाकुमारी ने जैसा धैर्य्य, साहस और आत्मिक बल दिखाया उसके कारण उसकी कीर्ति अमर हो गई। संसार में एक दिन सब ही को मरना है, पर, मरने में अन्तर है। यथार्थ में कृष्णा के एक प्राण ने सहस्रों प्राण बचाये। वह यदि जीती रहती तो तीन राज्यों की सेनाओं का युद्ध होता और न जाने कितने प्राणी मारे जाते। इस मार-काट के पीछे विवाह होने पर भी कृष्णा को सांसारिक सुखों की कुछ सम्भावना

नहीं थी। इसीसे सयानी कृष्णा ने अपने पिता की मान-मर्य्यादा के लिए निश्शंक होकर अपने प्राण दे दिये। उसे यह मंजूर नहीं हुआ कि कोई मनुष्य उसे भीरु कहे। मरते-मरते भी वह अपने पिता की मंगल-कामना करती रही। कृष्णा को विष के तीन प्याले दिये गये और तीनों उसने शान्तिपूर्वक पी डाले। अपने पितृकुल की रक्षा के लिए कृष्णा का शरीर अब नहीं है; परन्तु, उसके नाम और काम का स्मरण करते हुए मेरी आखों से आँसू निकल रहे हैं।

हम रात-दिन देखते हैं कि लोभी वाप अपनी आत्मजा कन्या को पशुओं की तरह वेच देते हैं। आठ-दस वर्ष की लडकी ७०-७० वर्ष तक के वुड्ढे को दी जाती है; पर, वह कुछ नहीं करती। अथवा स्यानी लडकी के फेरे एक बालक के साथ डाल दिये जाते हैं। उसे अपनी सहेलियों से अनेक ताने सहने पडते हैं। परन्तु, इतने पर भी वह किसी को अपने पिता के विरुद्ध नहीं वोलने देती।

तुमने एक मासिक पत्र में जो कविता पढ़ी थी वह याद होगी कि एक माता ने ज्योतिषी के वहकावे में आकर अपना सुहाग अमर रखने के लिए अपनी पेट की वच्ची को "गर्भरंडा" कह कर जन्म दिया था। दक्षिण में वहुत से लोग अपनी लड-कियों को मन्दिरों में देव-दासी वना देते हैं। सौभाग्य की वात है कि अब समय वदल रहा है। इस अन्याय की ओर राजा और प्रजा दोनों ही का ध्यान आकर्षित हुआ है।

कृष्णाकुमारी की चर्चा करते समय मुझे एक और पुत्री का स्मरण आता है। तुम्हारे क्लास की रीडर अथवा इतिहास में उसका वर्णन नहीं है। परन्तु कई अन्य ग्रन्थकारों ने बादशाह शाहजहाँ की पुत्री जहाँनारा की बड़ी कीर्ति गाई है और दिखाया है कि लडकियाँ अपने पिता को कितना चाहती हैं।

शाहजहाँ कौनसा बादशाह था? यह तुम्हें याद दिलाने की आवश्यकता नहीं है। आगरे का ताजबीबी का मकबरा जबतक इस संसार में है तबतक शाहजहाँ बादशाह की याद रखने के लिए और किसी चीज़ की आवश्यकता नहीं है। क्या तुम्हें "ताज" देख कर कुछ आश्चर्य्य नहीं हुआ कि जिस इमारत को यद्यपि ढाई सौ वर्ष के लगभग आँधी-तूफान, ओला-बारिस सहते हो गये तब भी वह ऐसी जान पड़ती है मानो अभी तैयार हुई है। मैं जिस घटना का उल्लेखन करने लगा हूँ वह शाहजहाँ बादशाह के बुढ़ापे के दिनों की है। बादशाह होकर और चार जबरदस्त बेटों का बाप होने पर भी बेचारे के अन्तिम दिन बहुत ही दुःख में कटे। यदि साथ में बेटी जहाँनारा न होती तो न जाने और क्या बुरा हाल होता! बुड्ढे बाप की बीमारी सुन कर चारों बेटे तख़्त के लिए लडने लगे। पाँच वर्ष तक लड़े, अन्त में औरङ्गज़ेब सब का फ़ैसला करके तख-ताऊस लेने के लिए क़िले में दाख़िल हुआ। बुड्ढे बाप की यह इच्छा थी कि उसके जीते जी उसके प्यारे तख़्त-ताऊस पर कोई न बैठे। तख़्त-ताऊस बादशाही गद्दी का नाम था। उसको शाहजहाँ ने लाखों रुपये

ख़र्च करके बनवाया था। उसमें जो जवाहिर जड़े थे उनको देख कर चकाचौंध आती थी। जब शाहजहाँ ने सुना कि औरंगज़ेब आता है तब डर के मारे तख़्त पर बैठे बैठे ही मूर्छित हो गया। एक तो बुढापा, दूसरे रोगी शरीर, उसके ऊपर निर्दय औरंगजेब का आगमन इत्यादि कारणों से उसको मूर्छा आ गई। जहाँनारा उस समय मौजूद थी। उसने अपने भाई को बहुत धमकाया, लज्जित किया, परन्तु, औरगज़ेब किसको सुनता था? बादशाह को पलंग पर लिटा कर एक दूसरे घर में भिजवा दिया गया और तख़्त पर पहिरे का प्रबन्ध कर दिया गया। जहाँनारा से पूछा गया कि तू क्या चाहती है? उसने अपने प्यारे पिता ही के साथ शेष जीवन व्यतीत करना स्वीकार किया।

जहाँनारा ने राजकुमारी का वेश छोड कर साधारण दासी के से कपड़े पहन लिये। जो कुछ उसके पास ज़र-जवाहरात तथा पोशाक-परिच्छेद था सब को ग़रीबों के लिए संकल्प कर दिया। जिस घर में वह रहती थी उसमें कोई चीज़ शान-शौक़त की न रक्खी गई। केवल वे ही चीज़ें रहने पाईं जो प्रतिदिन बहुत ज़रूरी हुआ करती थीं। वह यह समझ गई थी कि यह संसार उसी तरह है जिस तरह चार दिन की चटक चाँदनी।

"आज मेरे पिता जो किसी काल में शाहजहाँ थे ताज़ी हवा के लिए तरसते हैं। केवल मैं उनको खाना-दाना पहुँचाने वाली हूँ। ससार में वे ही सब धूमधाम और काम सरजाम हो रहे हैं; परन्तु, बेचारे शाहजहाँ के लिए अँधेरा है।" क़ैद होने

के पीछे बादशाह ७ वर्ष तक जिया। जिया क्या अपनी ज़िन्दगी के दिन पूरे किये। जहानआरा बड़े प्रेम और भक्ति से सेवा में लगी रहती थी। अब वह अपने को शाहजादी नहीं समझती थी वरन् एक बुड्ढे क़ैदी की अनाथ कन्या। उसे दीन और निस्सहाय लोगों से बड़ा प्रेम था। कुछ काल तक औरंगजेब ने अपनी इस बहन की खूब चौकसी रक्खी। सब तरफ़ जासूस लगा दिये। उसे भय था कि बाप-बेटी मिल कर कुछ उपद्रव न प्रारम्भ कर दें। जो जैसा होता है उसे संसार भी वैसा ही नज़र आता है। कितना ही समय इस चौकसी में कट गया। अन्त में औरंगजेब को निश्चय हो गया कि न तो बुड्ढे और रोगी बादशाह में इतना दम है कि कुछ कर सके और न जहाँनारा का ऐसा विचार है कि सांसारिक शान-शौक़त प्राप्त करने के लिए कुछ चेष्टा करे। यह देख उसने अपनी बहन को स्वतंत्र कर दिया।

जहाँनारा को दीन-दुखियों पर बड़ी दया हो गई थी। पिता की दुर्बलता के साथ ही उसका वैराग्य भी बढ़ चला था बादशाह के स्वर्गवास होने के पीछे वह बहुत दिन तक नहीं जी। जब उठना-बैठना तक बन्द हो गया तब औरंगज़ेब को समाचार मिला और वह महलों में आया। देखा कि उसकी बहन शाहन्शाह शाहजहाँ की लड़की जिसकी आज्ञा उठाने के लिए सैकड़ों दासियाँ रहती थीं एक साधारण पलँग पर पड़ी है। एक वह समय था कि शाहज़ादी के सिर में ज़रा सा दर्द होते

ही हकीमों का झुंड इकट्ठा हो जाता था। आज वही शाहजादी चुपचाप आँख मीचे पिता के पास जाने की घडियाँ गिन रही है। उसे देखकर औरगज़ेब जैसे कठोर व्यक्ति की आँखों में भी आँसू आ गये। पास बैठ कर उसने बहन को करुणाभरे शब्दों से सचेत किया। बहन ने आँखे खोलीं और प्रेम भरी आँखों से भाई को देखा तथा एक पुर्ज़ा दिया जिसे औरंगज़ेब ने बड़े आदर से लिया और अपने अपराधों की क्षमा-प्रार्थना की। जहाँनारा ने आकाश की ओर आँखें कीं अर्थात् यह बताया कि परमात्मा सब को क्षमा करते हैं। परमात्मा के ध्यान ही में उसके प्राण पखेरू उड़ गये। जहाँनारा ने जो पत्र दिया था उसमें फ़ारसी भाषा में यह लिखा था :—

ब.गैर सबज़. न पोशब्द कसे मजार मरा।
कि क़ब्र पोस गरीबाँ हमी गयाह बसस्त॥

अर्थात् सिवाय घास के मेरी समाधि (क़ब्र) को कोई न छिपाये क्योंकि ग़रीबों की क़ब्र के लिए यही ढक्कन काफ़ी है।

मतलब यह है कि जहाँनारा ने यह नही चाहा कि उसकी माँ के लिए जितना बडा रौज़ा बनाया गया अथवा और शाह-जादियों के लिए जैसे बड़े-बड़े मक़बरे बनाये जाते हैं वैसा ही उसके लिए भी बनाया जाय। उसके अन्त के दिन ग़रीबी में कटे और उसने यही इच्छा की कि मरने के पीछे भी उसके शरीर को ग़रीबों की सी क़ब्र में रक्खा जावे और उसके ऊपर केवल घास जमा दी जाय।

———

पत्र न० २२--

जन्म-समय—बाल्यकाल—दीन-दयालुता का उदाहरण—रोगी और बच्चों पर कृपा—दानपात्र का विचार—परोपकार में सहायता—भारतवर्ष की ग्रामीण स्त्रियों से भेंट—दरबार के दिनों में भारत की स्त्रियों द्वारा दिये हुए अभिनन्दन पत्र का उत्तर।

तुम्हारे लिए इस चिट्ठी में भारत-सम्राज्ञी मेरी की जीवनी लिखने की इच्छा है। इनका जन्म सन् १८६७ की २७ मई को हुआ था। पिता का नाम ड्यूक आफ टेक और माता का डचैज आफ टेक था। माता-पिता ने लडकी की शिक्षा पर पूरा ध्यान दिया। वे आपस में ऐसी चर्चा कभी न करते थे जिसका सुनना लडकी के लिए हितकर न हो। मा-बाप का व्यवहार आपस में बडे आदर, शान्ति तथा प्रेम का था। मन के साथ ही साथ तन के सुदृढ़ बनाने की ओर भी उनका पूरा ध्यान था। माता पुत्री को ग़रीब गृहस्थियों की दशा समझने के लिए पादरी के साथ उनके घर भेजा करती थी। अनाथ और लँगडे-लूलों की सहायता करने में इन्हें बडा आनन्द आता था। राजकुमारी मेरी सयानी होने पर सामाजिक कर्त्तव्य सीखने लगीं। इन्हें वे ही पुस्तकें पढ़ने को दी जाती थीं जिनसे इनके विचार उच्च हों।

ये प्रातःकाल उठते ही धर्मपुस्तक का एक अध्याय अवश्य पढ़ती थीं। चाहे कितने ही काम हों; परन्तु, दैनिक धर्म-कार्य को ये समय पर करती थीं। घर में सब चीज़ें ठिकाने से हों और सुन्दर जान पड़ें इस बात का राजकुमारी मेरी को बड़ा ध्यान रहता था। जिन सभाओं में सर्वसाधारण के सुख बढ़ाने की प्रस्तावना होती थी उनमें ये अवश्य उपस्थित होती थीं, जब ये सभा में पहुँचतीं तब ग़रीब लोग बड़े प्रसन्न होते थे। मार्ग में जिन लोगों से भेंट होती उन सब से ये कुशल-मङ्गल पूछतीं।

एक दिन की बात है ये अपनी माँ के साथ बाहर जा रही थीं, बड़ा ठंडा दिन था, बर्फ़ पड़ रही थी। एक ग़रीब बुढ़िया एक पेड़ से सूखी लकडी तोड़ने की चिन्ता में खड़ी थी। माँ-बेटियों को उस पर बड़ी दया आई। एक ने छाते के दस्ते से सूखी लकड़ियाँ तोड़ीं, दूसरी ने गड्डी बना कर उसके सिर पर रख दी। बुढिया ने दोनों को हृदय से आशीर्वाद दिया। राज-कुमारी मेरी को जेबख़र्च के लिए जो धन मिलता था, उसमें से ग़रीब बच्चों की सहायता करने के लिए ये कुछ रक़म अलग कर लेती थीं।

रिश्तेदारों में जाना-आना, मेहमानों की ख़ातिर करना, दान-धर्म के काम और पत्र-व्यवहार में अपनी माँ की सहायता करना इनका रोज का काम था। माता डचैज़ आफ़ टेक जब कभी चिकित्सालय में रोगियों को देखने के लिए जातीं तो राजकुमारी मेरी को साथ ले जातीं। इनका नियम था कि

अस्पताल जाने से पहले ये बाज़ार से गुलदस्ते मोल ले लेतीं थीं और रोगियों से मिष्ट भाषण कर के उन्हें फूल देती थीं। ग़रीब बच्चों के प्रमोद के जितने खेल-तमाशे होते थे उन में सहायता देती थीं। सर्व-साधारण में होकर जब राजकुमारी मेरी निकलती थीं तब इन्हें देख कर लोग बड़ा ही हर्ष प्रकट करते थे। ग़रीबों की दशा सुधारने के प्रश्न का इन्होंने .खूब मनन किया है और जहाँ कहीं इस प्रकार के व्याख्यान होते थे वहाँ ये माँ-बेटी अवश्य जाती थीं। सर्व साधारण प्रजा जो इनको बड़े प्रेम से देखती है इसका यही कारण है।

राजकुमारी मेरी का ऐसा उदार चरित्र देख कर महारानी विक्टोरिया ने राजकुमार जार्ज के साथ इनका विवाह कराया। विवाह होने के पीछे ये ड्यूक और डचैज़ आफ़ यार्क कहलाये और जिन-जिन देशों में अँग्रेज़ी राज्य है वहाँ की सैर की। जिन देशों में ये पहुँचतीं वहीं पर अस्पताल में रोगियों को देखतीं। प्रजा इनका व्यवहार देख कर बड़ी प्रसन्न होती थी। महारानी विक्टोरिया के मरने पर जब एडवर्ड सप्तम राजा हुए तब ये ड्यूक और डचैज़ के बदले प्रिन्स और प्रिन्सेज़ वेल्स कहलाने लगे।

महारानी मेरी का स्वभाव बड़ा उदार है। सत्पात्र को दान देने के लिए ये सर्वदा तैयार रहती हैं। दान देने से पहले ये इस बात का .खूब निश्चय कर लेती हैं कि दिया हुआ धन कैसे हाथों में जाता है। जबतक तसल्ली नहीं हो जाती तबतक दान नहीं दिया जाता।

परोपकार के लिए जो सभाएँ हैं उनकी ये खूब जाँच-पड-ताल करती हैं और इस बात का पता लगाती हैं कि कैसे लोगों के हाथों मे सभा का संचालन है और कौन से भलाई के काम सभा द्वारा होते हैं। यह सब विना जाने किसी सभा को सहा-यता नहीं दी जाती। अनाथ बच्चे, अन्धे, लँगडे, लूले, निर्धन, वृद्ध, स्त्री-पुरुषों को दान देना इन्हें बडा प्रिय है। महाराज सप्तम एडवर्ड जब गद्दी पर बैठे थे, तब भी बड़ी धूम-धाम हुई थी। उस समय महारानी मेरी युवराज्ञी कहलाती थीं। कंगालों को भोजन देने का भार इन्होंने अपने ऊपर लिया था। कई सहस्र लड़के-लडकियों को भोजन कराया था। उस समय इन्होंने घोर परिश्रम किया। ग़रीब लोग इनके सद्व्यवहार से मुग्ध होकर इन्हें बार-बार आशीर्वाद देते थे।

जार्ज पंचम जब बड़े शाहजादे की हैसियत से भारतवर्ष की सैर करने के लिए आये थे तब महारानी मेरी भी साथ में थीं। इस देश में आने से पहले इन्होंने ऐसी पुस्तकों को—जिनमें इस देश का पूर्ण वृत्तान्त था—पढ़ कर यहाँ की चाल-ढाल, रीति-रिवाज का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। जार्ज पंचम के पिता एडवर्ड सप्तम भी भारतवर्ष की सैर करने आये थे। परन्तु वे महाराणी एलेक्ज़ेंड्रा को साथ नहीं ला सके थे। उनके हृदय में भारतवर्ष के देखने की लालसा मरते समय तक बनी रही।

जब ये युवराज्ञी रूप से आई थीं तब इन्हें इस बात के जानने की बड़ी इच्छा थी कि भारतवर्ष के लोगों के घरेलू

चरित्र कैसे हैं। वे साधारणतः अपने घरों में किस तरह से रहते-सहते हैं। इसीलिए एक अवसर पर ये साथ में एक दुभाषिया लेकर एक गाँव में गई और बड़े ध्यान से गाँव वालों के घर-द्वार देखे। एक घर में अखबार से काट कर महाराज एडवर्ड सप्तम का चित्र एक दीवार में चिपकाया हुआ था। युवराज्ञी ने पूछा—यह किसका चित्र है? उत्तर में कहा गया—"बादशाह सलामत का"। यह सुन कर इन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई।

एक स्त्री ने जब यह सुना कि ये बादशाह की पुत्र-वधू हैं तब वह इनके सामने आकर रोने लगी और कहा—"मेरा घरवाला खून के अपराध में कालेपानी भेज दिया गया है, कृपा करके उसे छुड़वा दीजिए"। जब उसको यह समझाया गया कि राज के कामों में युवराज्ञी नहीं बोला करतीं तब उसको बड़ा आश्चर्य हुआ और कहने लगी—"इतनी बड़ी राजरानी होकर मेरे घर वाले को नहीं छुड़ा सकतीं?" युवराज्ञी ने उसके साथ बड़ी सहानुभूति दिखाई और धन से भी सहायता दी। दुःखी स्त्री को रानी के सद्व्यवहार से बहुत ही आश्वासन हुआ।

सम्राज्ञी मेरी को अपने देश की बनी चीजों पर बड़ा प्रेम है। स्वदेशी धंदे बिगड़ने न पावें इसके लिए ये सदा प्रयत्न करती रहती हैं। रेशम के काम, मट्टी के बर्तन और खिलौने बनानेवाले कारीगरों की तथा ऐसे ही अन्य व्यवसाइयों की ये सहायता

करती रहती हैं। चीन देश के बढ़िया बर्तन न लेकर स्वदेशी बर्तन ख़रीदना ही इन्हे विशेष प्रिय है।

महारानी मेरी को संगीत, चित्र, लेखन इत्यादि का मार्मिक ज्ञान है। इतिहास से भी इन्हें बड़ा प्रेम है। ये अपने देश का वृत्तान्त ख़ूब जानती हैं। इन्हें यह भी ज्ञान है कि अन्य राज्यों की वर्तमान दशा किन कारणों से हुई है। महारानी की स्मरण-शक्ति बहुत अच्छी है। एक बार जो बात इन्होंने पढ़ ली उसे ये कभी नहीं भूलतीं। प्रतिदिन जो कुछ काम करना होता है उसके लिए समय नियत कर लिया जाता है, तदनुसार करने से इनके सब काम पूर्ण हो जाते हैं।

दुःखियों का दुःख दूर करना, अनाथों की सुध लेना, अनाश्रितों को आश्रय देना, अपंगों और अपाहजों की सहायता करना—ये काम सम्राज्ञी को बड़े प्रिय हैं। इन बातों में ये कभी उदासीन नहीं होतीं। धर्म करने के लिए ये हमेशा सत्पात्र ढूँढ़ती हैं। निकम्मे, आलसी, भीख के लिए फेरी देनेवालों को ये सर्वदा घृणित दृष्टि से देखती हैं। एक ऐसी सभा है जो क़ैदियों के बच्चों को काम की शिक्षा देकर भले आदमियों के से आचरण करनेवाले मनुष्य बनाती है, इस सभा को महारानी ख़ूब सहायता करती हैं। क़ैदियों के बच्चों को ये देखने जाती हैं, उनके लिए सौगात भेजती हैं, किताबें पहुँचाती हैं। विलायत के के कारख़ानों में स्त्रियाँ काम करती हैं, थकने पर उनके सुस्ताने के लिए पास ही अच्छे स्थान नहीं हैं। इसी विचार से वहाँ

की उदार स्त्रियों ने उचित स्थानों पर धर्मशाला बनाने का विचार किया है और कई एक ऐसे स्थान बन भी गये हैं। महारानी मेरी भी इस कार्य में सम्मिलित हुई हैं।

दिल्ली में इस देश की स्त्रियों ने महारानी मेरी को जो अभिनन्दन पत्र दिया था उसका उत्तर देते हुए महारानी ने कहा था—"भारत की महिलाओं को सुख और आनन्द मिले, इस बात की मेरी बड़ी इच्छा है। पर्दे में रहनेवाली स्त्रियाँ धीरे-धीरे उन्नति कर रही हैं इसका मुझे हर्ष है। भारतीय माताएँ अपनी लड़कियों को सुशिक्षित करके योग्य बना रही हैं यह जान कर मुझे बड़ी प्रसन्नता है।"

मैं आशा करता हूँ कि सम्राज्ञी मेरी के चरित्र में ऐसी बहुत सी बाते मिलेंगी जिनका गरीब लड़कियाँ भी अनुकरण कर सकती हैं।

सती होने की रीति का बन्द होना

पत्र नं० २३--

मती क्या होती है? सती होने का कारण—ज़बर्दस्ती स्त्रियों को जलाना—शास्त्राज्ञा—लार्ड विलियम वेंटिक के समय में सरकारी कार्य-वाही—रामायण में मती की कहानी—चीन देश में सती का रिवाज—विधवाओं का कर्तव्य।

मथुरा में जमुना किनारे एक सतो वुर्ज है। अन्य शहरों में भो सती की कीर्ति प्रकाश करनेवाले चिह्न मिलते है। सती क्या होतो है? इस वात को विस्तार से लिखने की आवश्यकता नहीं है। सव हिन्दू इस वात को जानते है कि जो स्त्री अपने पति के मरने पर उसकी मृत-देह के साथ जल जाय वही सती कहलाती है। यह वड़ा भयानक काम है। प्राण देना हॅसी नही है। सती होनेवाली स्त्रियाँ अपने इस शरीर को केवल प्रेमवश छोडती हैं। वे किसी से कुछ कहती-सुनती नहीं। प्राण देने का उपाय भी उन्हें आप ही सूझ जाता है। जव-तव समाचार-पत्रों में ऐसी घटना छपती रहती है। परन्तु कुछ काल हुआ सती होना एक फ़ैशन हो गया था। वड़े ठाट-वाट से सतो होने के लिए स्त्रियाँ तैयार होती थीं। ये सच्ची सती न थीं, केवल अपनो प्रतिष्ठा के लिए जल मरती थीं। चिता में प्रवेश होने के समय वड़ा रोमाञ्चकारी दृश्य होता था। वहुतेरी तो भय के मारे चिता को देखते ही

बेहोश होजाती थीं, तब उनके कुटुम्बी उनको पकड़ कर चिता में डाल देते थे। अनेक अग्नि का स्पर्श होते ही चिता से भागती थीं। उनको भी ज़बर्दस्ती आग में ढकेल दिया जाता था। कितने ही कुल ऐसे थे जिनके किसी पूर्व पुरुष के साथ कोई सती हुई थी फिर तो उनके यहाँ सती होने की रीति चल गई और इच्छा न होने पर भी स्त्रियों को विवश किया जाने लगा। जब वे स्वयं राज़ी न हुईं तब उनको नशे वाले पदार्थ खिलाकर बेहोश किया गया और उसी बेहोशी की अवस्था में जला दिया गया। क्रमशः यह प्रथा ऐसी बलवती हुई कि स्त्री की इच्छा-अनिच्छा कुछ न रही, केवल पुरुषों का स्वार्थ साधन रह गया। बड़े आदमी और राजा लोगों की चिता पर तो अवश्य ही कुछ स्त्रियाँ जलाई जाती थीं। बहुतेरे रिश्तेदार जायदाद के लोभ से पुरुष के मरने पर उसकी स्त्री को भी जला देते थे। यदि वह ख़ुद राज़ी न होती थी तो उसके साथ ज़बर्दस्ती की जाती थी। मुसलमानों के राज्य में यह निन्दित कर्म बराबर होता रहा। उन्होंने इसको धार्मिक कृत्य समझ कर कुछ न कहा अथवा उनके हृदय में बेचारी अबलाओं पर कुछ दया नहीं आई। उनमें केवल अक़बर का मन इस अत्याचार पर पसीजा, परन्तु, वह इसको पूरी तरह से रोक नहीं सका। जब अँगरेज़ों का दबदबा इस देश में फैला तब इसकी जाँच हुई और यह निश्चय हुआ कि हिन्दुओं के शास्त्रों में कहीं भी ऐसी आज्ञा नहीं है। प्रसिद्ध राजा राममोहन राय ने इस कुरीति के दूर करने में अँगरेज़ों को बड़ी सहायता

दी। पहले पहल इस वात की चेष्टा हुई कि जव तक ज़िले का हाकिम इस वात का निश्चय न करले कि स्त्री स्वतः अपनी इच्छा से सती होना चाहती है तवतक सती न होने दिया जाय। इससे कुछ विशेप लाभ नही हुआ क्योंकि अँगरेज हाकिम स्त्री के पास तक नही पहुँच सकता था, उन्हें सव समाचार पुरुषों द्वारा ही ज्ञात होता था। यह तो तुम जानती हो कि ग़दर से पहले इस देश के शासन का प्रवन्ध उन सौदागरों के हाथ में था जो मिलकर ईस्ट इण्डिया कम्पनी के नाम से यहाँ व्यापार करते थे। उनकी ओर से जो वडा हाकिम यहाँ आता था वह गवर्नर जनरल कहलाता था, जिसको आजकल वड़े लाट साहव के नाम से पुकारते है। सर विलियम वेंटिक उनमें से एक थे जिन्होंने सती होने की रसम एकदम वन्द कर दी। यद्यपि सव ही अँगरेज़ सती की रीति को महानृशंस व्यवहार समझते थे; परन्तु, इसे हिन्दुओं का धार्मिक व्यवहार समझ कर वन्द करने से डरते थे। पहले हाकिमों ने यह नियम कर रक्खा था कि १६ वर्प से कम उम्र की वधू को इच्छा होते हुए भी सती न होने दिया जाय, गर्भवती स्त्री को सती होना निषिद्ध था। चिता में प्रवेश करते समय यदि स्त्री होश में न हो तो भी उसको सती नहीं होने दिया जाता था। स्त्री का अधिकार था कि चाहे जव अपना मन वदल ले। इन सव वातों पर भी सती होना कम नहीं हुआ। अकेले वगाल में एक वर्प के भीतर ८०० स्त्रियाँ सती हुईं। लाट साहव को यह अच्छा नहीं लगा। उन्होंने हृदय

में दृढ निश्चय कर लिया कि वे इस कुरीति को अवश्य वन्द कर देंगे, उन्होंने उस समय के राज-कर्मचारियों की सम्मति ली तो प्राय: सभी को अपने मत का पाया। तव यह विषय कौंसिल में पेश किया गया और ७ दिसम्वर सन् १८२६ को कलकत्ता-गजट में प्रकाशित हो गया कि हिन्दू विधवाओं को जीता जलाना अथवा समाधिस्थ करना आईन के विरुद्ध है। गवर्नमेंट का निश्चय है कि हिन्दुओं के शास्त्र में कहीं भी ऐसी आज्ञा नहीं है। सती कराने में जो कोई सहायता करेगा वह कत्ल का मुजरिम समझा जायगा, उनको कैद, जुर्माना तथा फाँसी तक की सजा देना उचित हो गया। पहले यह क़ानून केवल वङ्गाल के लिए वना, परन्तु, फिर पूरे भारतवर्ष के लिए प्रचलित कर दिया गया। इस कानून के वनने के पीछे वंगालियों ने वादशाह तक अर्जी पहुँचाई कि सती की रीति सनातनधर्म का एक अग है और इसको रोकना प्रजा के धर्म-कार्यों में वाधा देना है, परन्तु, इसके साथ ही एक और अर्जी पहुँची जिसमें गवर्मेन्ट के कार्य की सराहना की गई और साथ ही यह भी कहा गया कि आर्य-धर्म में सती होने की कहीं आज्ञा नहीं है। श्रीयुत द्वारिकानाथ टागोर और राजा राममोहनराय सरकार के पक्ष में थे।

सती शब्द का क्या अर्थ है? अमरकोष में लिखा है "सुचरित्रातु सती साध्वी पतिव्रता" अर्थात् सच्चा स्त्री का नाम सती है। आग में जल मरने पर सती कहाना उस सती के नाम के

पीछे चला है जो अपने पति की निन्दा पर यज्ञ-कुंड में जल मरी थी। यह कथा तुलसीकृत रामायण के वालकॉड में है। यहॉ पर संक्षेप से वह घटना लिखी जाती है जो इस प्रकार है—

पिता दशरथ की आज्ञा मान कर सीता और लक्ष्मण सहित राम वनवास करने लगे। वहॉ एक वन में सूर्पणखा नाम की राक्षसी की उन्होंने नाक कटवा दी। वह जाकर रावण पर पुकारी। रावण ने प्रत्यक्ष मे तो युद्ध नही किया; परन्तु, धोखा देकर सीता को हर लाया। जव मढ़ी में सीता न मिली तव राम को वड़ा शोक हुआ। वे घवराए हुए वन में सीता को ढूॅढ़ने लगे। उस मसय महादेव अपनी स्त्री सती सहित वन में विचर रहे थे। महादेव ने राम को वड़े आदर से प्रणाम किया और उनके दर्शन पाकर अपने को कृतार्थ समझा। सती यह सव देखकर वड़ी विस्मित हुई। तव महादेव ने सती को राम का सव चरित्र सुनाया। परन्तु, सती को यह आश्चर्य हुआ कि जो मनुष्य अपनी स्त्री के विरह में इस प्रकार उदास हो रोता फिरता है वह किस प्रकार पुरुषोत्तम हो सकता है? महादेव वोले—यदि तुम्हें कुछ सन्देह है तो परीक्षा कर देखो। आज्ञा पाकर सती चली और सीता जैसा वेश वनाकर राम के सामने जा निकलीं। राम ने उन्हें पहिचान लिया और हाथ जोड़, अपने वाप का नाम लेकर प्रणाम किया तथा महादेव की कुशल पूछी। सती वडी लज्जित हुईं, जव लौटकर अपने पति के पास आईं तव सच्चा वृत्तान्त उनसे न कह कर यह कहा—

"कछु न परीक्षा लीन्ह गुसाईं, कीन प्रणाम तुमारी हि नाँई"। महादेव सब कुछ जान चुके थे। सती का मिथ्या-भाषण और कपटाचरण उन्हें अच्छा नहीं लगा। उन्हें सती से बडी विरक्ति होगई। तुलसीदास ने कहा है—

जल पय सरिस विकाय, देखो प्रीति की रीति भल।
विलग होय रस जाय, कपट खटाई परत ही॥

महादेव की नजर बदली देखकर सती को बडा सोच हुआ। वे अपने हृदय में अपना दोष समझती थीं, इसीसे कुछ कह न सकती थीं। जिस तरह कुम्हार का आवा भीतर ही भीतर धुधका करता है यही हाल सती के हृदय का था।

कुछ दिन बाद सती ने देखा कि एक दिशा को झुण्ड के झुण्ड यात्री जा रहे हैं। पूछने पर महादेव ने बतलाया कि "तुम्हारे पिता ने बडा भारी यज्ञ किया है और अपने सब इष्ट-मित्रों को बुलाया है। केवल हमीं को निमत्रण नहीं दिया।" निमंत्रण न देने का कारण यह है कि एक सभा में महादेव के साथ दक्ष का कुछ मनमुटाव हो गया था। दक्ष के और भी कन्याएँ थीं, उन सब को निमंत्रण पहुँचा। पिता के घर यज्ञ होने की ख़बर पाकर सती बडी प्रसन्न हुई। जबसे महादेव ने उन्हें मन से परित्याग कर दिया था तब से उनका समय बुरी तरह से कटता था। मन में सोचा कि यदि आज्ञा मिल जाय तो इस कुछ दिन अपने बाप के यहाँ ही काट आऊँ। इसीसे

बाप के घर जाने को आज्ञा चाही। महादेव बोले—"मुझे तुम्हें भेजना तो अच्छा लगता है, परन्तु, बात यह है कि तुम्हारे पिता ने तुमको बुलाया नहीं है, जो तुम बिना बुलाये वहाँ जाओगी तो तुम्हारा कुछ आदर नहीं होगा। यह ठीक है कि पिता के घर बिना बुलाये जाने में भी कुछ बुराई नहीं है, परन्तु, यदि पिता से विरोध होजाय तो जाने में कल्याण नहीं है।" इस भाँति महादेव ने सती को बहुत समझाया, पर, उन्हें कुछ भी न भाया। उन्हें प्रेमशून्य पति के पास रहना अच्छा न लगता था। महादेव को लाचार होकर आज्ञा देनी पड़ी और साथ में कुछ सेवक रक्षा के निमित्त भेज दिये।

सती जब बाप के यहाँ पहुँची तब किसी ने उसका आदर नहीं किया। केवल माता सादर मिली। बिना बुलाये आने पर अन्य बहनें बहुत मुसकराती हुई मिलीं। दक्ष ने तो उसकी कुशल भी न पूछी तथा उसको देखकर वह मन ही मन बहुत ही कुढ़ा। जितने मेहमान आये थे सब के लिए आदर-सत्कार था; परन्तु, महादेव के लिए सिवाय निन्दा के और कुछ भी न था। सती को यह सब देखकर बड़ा ही कष्ट था। यद्यपि महादेव आजकल उनसे विरक्त थे और वे उनके व्यवहार से स्वयं दुखी थीं तो भी वे उनका अपमान नहीं सह सकती थीं। कभी-कभी स्त्रियों को बड़ी कठिनता पड़ जाती है। एक ओर तो उन्हें अपने पति का ध्यान होता है और दूसरी ओर पिता का। पति-निन्दा से सती को जो क्रोध उपजा उसका उन्होंने

अपने ऊपर ही प्रयोग किया अर्थात् भरी सभा के सम्मुख अग्निकुंड में कूद कर भस्म हो गई ।

यह उस सती की बात है जिसका अनुकरण करने के लिए बहुत दिनों तक अनेक स्त्रियाँ अपने पति की मृत देह के साथ जल जाती रहीं । सिवाय भारतवर्ष के अन्य किसी देश में सती का रिवाज नहीं हुआ। अँगरेजों को यह प्रथा बहुत ही बुरी लगी थी, इसीसे इन्होंने उसे बन्द कर दिया। यदि सोचा जाय तो स्त्री जाति के ऊपर होता हुआ एक भारी अत्याचार सभ्य सरकार द्वारा रुक गया। न जाने उन दिनों कितनी अबलाएँ अनिच्छा होते हुए भी जबर्दस्ती जला दी जाती थीं। चीन देश में भी एक समय ऐसा था जब राजा मरता था तब उसकी रानियाँ और उसके प्यारे सेवक उसके साथ ही गाड दिये जाते थे। अब ऐसा नहीं होता। अब केवल नकल की जाती है। जब कोई मरता है तब उसकी लाश के साथ बहुत से खिलौने जाते हैं। उनमें अनेक दासी और सेवक होते हैं। उनके हाथ में ख़िदमत करने की सब चीजें होती हैं। किसी के हाथ में तौलिया, किसी के हाथ में चिलचमची, कोई लोटा लिए होती है। बहुत से सेवक खाने के पदार्थ लिए रहते हैं, ये सब मुर्दे के साथ परलोक में जाने वाला सामान है। मुर्दे के साथ काग़ज के बने हुए बहुत से रुपये भी रख दिये जाते हैं जो परलोक में खर्च करने के लिए हैं।

पति के मरने पर आत्म-घात करके स्त्री समझती होंगी कि

वे अपने धर्म से छुट्टी पागईं। परन्तु, यदि वे सच्ची रहें तो पति के मर जाने के वाद भी वे देश का वड़ा उपकार कर सकती है। जिनको परमात्मा ने सन्तान दी है उनके लिए तो कुछ कहना ही नहीं है। अपने मृत पति की वंश-रक्षा करना उनका प्रधान कर्तव्य होता है और वे सर्वदा इसमें कृतकार्य होती हैं। ऐसे अनेक उदाहरण हैं कि घोर परिश्रम करके निर्धन माता अपनी सन्तान को योग्य वनाने में समर्थ हुई हैं। जिनके कोई सन्तान नहीं है वे अपने जीवन को परोपकार में लगा सकती हैं। शिक्षा-प्रचार, रोगी सेवा-और दाई के काम में जीवन विताने वाली अनेक युरोपियन कुमारियाँ हमारे देश में वर्तमान हैं। चेष्टा करने से हमारी विधवा वहनें भी ऐसा कर सकती हैं। हर्ष है कि इस ओर कुछ-कुछ सर्वसाधारण का ध्यान आकर्षित हुआ है।

ठगों का अत्याचार और नाश

पत्र नं० २४—

ठगों का काम—ठगों का धार्मिक विचार—भवानी की शक्ति—ठगों के रूप—ठगों की शिक्षा—फाँसी लगाने की क्रिया—ठगों का प्रजा पर प्रभाव—लार्ड विलियम बेंटिक की चेष्टा—हाकिमों का परिश्रम—ठगों के अत्याचार का प्रकाश—ठगों का नाश—देश में शान्ति का विकाश।

पिछली एक चिट्ठी में मैंने तुम्हें लिखा था कि किस तरह लार्ड विलियम बेंटिक (गवर्नर जनरल) ने सती की रीति को बन्द किया। उन्हीं लाट साहिब ने एक और बड़ा काम किया था जिसकी चर्चा तुमने भारतवर्ष के इतिहास में पढ़ी होगी। जिस तरह सती होने की रस्म अब एक पुरानी बात हो गई है उसी तरह इस देश में ठगों का उपद्रव भी अब एक कहानी मात्र रह गई है। यह मत समझना कि इस समय ठगने वालों का अभाव है। नहीं, धन हरण करने वालों की कमी इस समय भी नहीं है। परन्तु, लार्ड विलियम बेंटिक ने जिन ठगों की जड़ काटी उनका दल बड़ा भयानक था, उनकी करतूत सुनकर अब भी रोंगटे खड़े होते हैं। उनके कारनामों की कथा महाभारत के समान है।

साधारणतः ठग शब्द का अर्थ ।धोखा या भुलावा देकर

किसी मनुष्य का मालमत्ता लेना है, परन्तु, वे ठग धन और प्राण दोनों लेते थे। वे जिसका सर्वस्व हरण करना चाहते थे उसे पहले फाँसी लगा कर मार देते थे, बाद को उसके माल-असबाब में हाथ लगाते थे। मनुष्य का प्राण लेने के लिए जैसे और अनेक हथियार हैं, उसी तरह फाँसी लगा कर मारने का भी एक शस्त्र है, ठग लोग उसी का व्यवहार करते थे। अभी तक यह निश्चय नहीं हुआ कि ठग लोग कब से इस घृणित कार्य को करते चले आ रहे थे। मुग़लों के ज़माने में विलायत से एक यात्री आया था। उसने अपने सफ़र के हाल में लिखा है कि उस ज़माने में सर्व साधारण को यात्रा करने में फाँसीगरों का बड़ा ही भय लगा रहता था। जब मुगलों के गिराव के दिन आये तब देश में बड़ी बेचैनी बढ़ गई। छोटे छोटे राजाओं की फ़ौजें दल बाँध कर लूट-मार करती थीं। प्रजा में से भी बहुतों ने निर्भय होकर लूट-पाट करना, डाका डालना और चोरी करने का काम करना शुरू कर दिया था। अवध से हैदराबाद तक और बुन्देलखण्ड से राजपूताना तक फाँसीगरों की टोलियाँ फैली हुई थीं।

हमारे देश में बुरे काम भी धर्म की आड़ में किये जाते हैं। अनजान लोग उनकी पवित्रता पर विश्वास करके उनके फन्दे में फँस जाते हैं। ठगी का आरम्भ भी इसी तरह हुआ, जिसकी आदि कथा इस प्रकार है :—

जब यह सृष्टि आरम्भ हुई तब इसके बनाने-बिगाड़ने के लिए

दो शक्तियों का जन्म हुआ। एक जीवों की रचना करती थी और दूसरी उनका विनाश करती थी। जो शक्ति सिरजनहार थी वह अपने कार्य में बड़ी फुरतीली थी। वह क्षण भर में लाखों प्राणी वना सकती थी। उसने अल्पकाल ही में पृथ्वी को बहुत बोझ से वेदम कर दिया। नष्टकारिणी शक्ति ने अनेक चेष्टा की; परन्तु, वह पृथ्वी का भार हलका न कर सकी। सृष्टि और भी बढ़ने लगी और ससार का काम पिछड़ता गया। तव वह पृथ्वी को साथ में लेकर शिवजी का शरण में गई और प्रार्थना की कि—"मैं अकेली सृष्टि का संहार करने में असमर्थ हूँ, मेरी सहायता कीजिए।" शिवजी ने आशीर्वाद दिया कि शीघ्र ही ऐसे प्राणी उत्पन्न होंगे जो तुम्हारे भक्त बन कर तुम्हारे सहायक होंगे। अब तुम जाओ और अपने भक्तगणों की सहायता से सृष्टि का नाश करो। वरदान पाकर काली भवानी फिर पृथ्वी का भार हलका करने में प्रवृत्त हुई। भक्त-गण भी आ पहुँचे। भवानी ने उनको फाँसी का शस्त्र दिखाया और समझाया कि इसका उपयोग किस प्रकार करना चाहिए। उनको यह भी कहा कि भवानी सदा उनके साथ रहेगी। आवश्यकता पड़ने पर उनके लिए सुन्दर शकुन भेजकर उनका उत्साह बढ़ावेगी। यह कथा ठग लोग विश्वासपूर्वक सच मानते थे और अपने पेशे को भवानी की शक्ति और कृपा का फल समझते थे। देवी की आज्ञा थी कि जितना माल उनको हत्या करने के बाद प्राप्त होता है उस पर उनका

पूर्ण अधिकार है। वे बहुत साधारण रीति से रहते थे। उनके पास कोई ऐसा हथियार दृष्टिगोचर नहीं होता था जिसे देख कर किसी को कोई सन्देह अथवा भय हो। वे या तो अपने को व्यापारी बताते थे, या कही किसी तीर्थ के जाने वाले यात्री। वह समय ऐसा था कि रास्ते में डाकू लोग यात्रियों को लूट लिया करते थे, इसी से यात्री गण अकेले-दुकेले नहीं चलते थे। टोली की टोली मिलकर चलते थे। इन टोलियों के साथ ठग लोग मिल जाया करते थे। जब कोई परिवार सराय आदि में टिका हुआ इस बात की चिन्ता में लग रहा हो कि कोई सग मिल जाय तो यात्रा करें तब ठग लोग उनके विचार से अपने विचार मिला कर उन्हें अपने साथ ले चलते थे। उन दिनों ऐसे यात्रियों की कुछ भी कमी नही थी। ठगों की सूरत-शक्ल ऐसी होती थी कि किसी को किसी प्रकार का सन्देह कदापि नहीं हो सकता था। वे लोग बड़े ही मिलनसार और हसमुख होते थे। यात्रियों की सब प्रकार की सहायता करना उन लोगों का एक ख़ास लटका था। वे जिस यात्री के प्राण हरण करना सोच लेते थे उसके साथ बड़े प्रेम से मिल जाते थे और सैकड़ों कोस उसके साथ-साथ यात्रा करते थे। जहाँ ठीक मौक़ा पाते थे वहीं अपना शस्त्र व्यवहार में लाते थे। उन्हें सफलता की बडी आशा इसी बात से होती थी कि उनके कार्य की सूचना अन्य किसी को नहीं हो सकती थी। कभी-कभी तो उनको ऐसा मौक़ा लग

जाता था कि वे तत्काल यात्री का काम तमाम कर देते थे और कभी उनको कुछ समय तक इन्तजार करना पड़ता था। सब से अच्छा फाँसी देने का अवसर वह समझा जाता था जब कि यात्री बिल्कुल बेखबर हो, भजन करता हो या प्राणायाम चढ़ा रहा हो अथवा नमाज पढ़ रहा हो या स्नान कर रहा हो। फाँसी ऐसे ढङ्ग से लगाई जाती थी कि यात्री का गला तत्काल घुट जाता था। अकेले-दुकेले के लिए तो अकेला ठग ही काफी होता था, परन्तु, जब कई यात्री होते थे तब ठग भी आवश्यकतानुसार इकट्ठे हो जाते थे। कभी-कभी उनकी टोली में ५०-६० तक ठग इकट्ठे हो जाते थे। वे इशारा मिलते ही दर्जनों आदमियों को एक क्षण में गला घोंट कर मार डालते थे। उनका काम ऐसे प्रयत्न और अवसर से होता था कि कभी कोई यात्री उनके फन्दे से जीता नहीं छूटा।

ठग लोग अपने बच्चों को बड़ी सावधानी से यह पेशा सिखाते थे। पहले-पहले बच्चे यात्रियों को बहकाने, फुसलाने, उनका भेद लेने तथा उनकी सेवा करने के काम में लगाये जाते थे। जब वे समर्थ हो जाते थे और सब दाव घात समझ जाते थे तब उनको फाँसी लगाने का काम सिखाया जाता था। परन्तु, यात्रियों पर फाँसी का व्यवहार करना अभ्यास पूरा होने के बाद ही सौंपा जाता था। जितनी सावधानी और एकान्त का आश्रय लेकर वे यात्रियों का गला घोंटते थे उतनी ही ख़बरदारी से वे लाशों को छिपाते थे। सिवाय ठगों के

और किसी ने उन लाशों का भेद नहीं पाया। ठगों के दल में ग़ैर आदमी दाख़िल नहीं किया जाता था। वे सब अपने ही नाते-रिश्तेदारों के आदमी होते थे। उनको इस बात का अटल विश्वास था कि यदि वे किसी ग़ैर आदमी को अपने इस गुप्त कर्म का भेद दे देंगे तो भवानी माता उन्हें जीता न रहने देगी। सर्व साधारण को इनका भय इस कारण से और भी बढ़ गया था कि उन दिनों किसी से कुछ ऐसा उपाय नहीं बन पड़ा कि इनका भेद लगावे।

ठगों के जो लड़के इस योग्य समझे जाते थे कि उन्हें भवानी के भक्तों में भरती किया जाय, उनको एक होशियार ठग "भटोट" अर्थात् फाँसी लगानेवाला बनाया जाय उस दिन यह कार्य होता था—पहले नये भक्त को स्नान कराया जाता था और उसके शरीर पर तेल, फुलेल मला जाता था। माथे पर रोली का टीका दिया जाता था। फाँसी लगाने का काम रूमाल से लिया जाता था। एक पैसा—रुपया अथवा ठीकरी रूमाल में लपेट कर एक सिरे पर गाँठ दी जाती और यह गाँठ बाँए हाथ में रहती और दूसरा कोना दाहिने हाथ में रहता। रूमाल को गले में डालने से बीच की रक्खी हुई चीज़ ठीक कंठ के सामने आ जाती और जब पीछे से दोनों सिरे दबाए जाते तो तत्काल गला घुट कर मृत्यु हो जाती थी। परन्तु कोई साधारण मनुष्य बिना अभ्यास किये इस तरह से किसी का गला नहीं घोट सकता था। यह हिकमत उन्हीं लोगों को मालूम

थी। वे यात्री को इतना भी समय नहीं देते थे कि जरा भी छटपटा सके। पहले पहल जब नया ठग इस कार्य को आरम्भ करता था तब उसकी सहायता के लिए तजुर्बेकार ठग आसपास लगे रहते थे।

जब ठग पकड़े गये और उनको भेद देने पर क्षमा करने की आशा दिलाई गई तब कहीं इनके इन भेदों का पता चला। उन्हीं की ज़ुबानी मालूम हुआ कि पहले पहल वे दिल्ली के आस-पास रहा करते थे। राजधानी होने के कारण बड़े-बड़े लोग दिल्ली आते-जाते रहते थे, इन्हीं दिल्ली आने-जाने वाले यात्रियों पर ठग लोग अपना हाथ साफ करते थे। जब बादशाह को इन वार-दातों की ख़बर मिली तब यात्रियों को विशेष चौकसी रहने लगी। जब ठगों को शिकार मिलने में बहुत बाधा हुई तब वे दिल्ली छोड़कर मध्य भारत और दक्षिण की ओर चल दिये। यहाँ पर कोई बाधक नहीं था। अपना काम निष्कंटक होकर करने लगे। राज्य-प्रबन्ध की गड़बड़ी के कारण इनका पता कोई व्यक्ति भी न लगा सका। छोटे-मोटे राजा और ज़मींदार इनसे मिल गये। बहुतों ने इनसे अपनी चौथ ठहराली, बहुतों ने अपने आदमियों को बचाने का वचन ले लिया। ऐसा होने से उनकी संख्या बहुत बढ़ गई। जब सर्कार अँगरेज की अमल्दारी में इनका अत्याचार फैला तब अँगरेज हाकिमों को बड़ी फ़िक्र हुई। उन दिनों लोग ठगों से बहुत डरते थे और जान-बूझ कर भी ठगों के भय से हाकिमों की सहायता नहीं करते थे।

लार्ड विलियम वेंटिक ने इस अत्याचार को मूल से नष्ट करने का काम अपने हाथ में लिया। नर्वदा के आस-पास जो अँगरेज़ी एजेंट था उसके अधिकार बढ़ाये गये। मेजर स्लीमन नाम के एक हाकिम की तैनाती ख़ास इसी काम पर हुई। हैदरावाद, बुन्देलखड और अवध में चतुर जासूस छोड़े गये। इन हाकिमों की चेष्टा से ६ वर्ष में दो हज़ार ठग पकडे गये। इनमें से डेढ़ हजार को फाँसी लगी या काले पानी भेजे गये। देशी राज्यों से इस विषय में पहले कुछ भी न बन पडा, परन्तु, जब अँगरेज़ों ने अपना चमत्कार दिखाया तब वे भी सहायता देने को आगये। अँगरेजों के डर से ठग लोग भाग कर देशी रजवाड़ों में ही शरण लेने लगे थे। जब उनके पीछे वहाँ भी जासूस पहुँचे तब उनके पैर उखड गये। फल यह हुआ कि ठगों का सब दल टूट गया। देश निष्कटक हुआ और यात्री आनन्द से यात्रा करने लगे। अब तो इस बात को पचासों वर्ष हो गये और ठगों की एक भी टोली कहीं नहीं दिखाई पड़ती।

यह पहले लिखा जा चुका है कि ठग लोग अपने पेशे में केवल अपने विश्वासी के आदमियों को ही शामिल करते थे और गैर आदमियों को अपना भेद नहीं देते थे। जब सरकार की चेष्टा से वे सब तित्तर-वित्तर हो गए तब उनकी सब सम्प्रदाय ही नष्ट हो गई, धर्म-भाव जाता रहा। जिस भवानी को वे अपना रक्षक समझते थे उसने उनकी कुछ भी सहायता नही

की। शिक्षा और मार्ग-विस्तार से अब आशा नहीं होती कि ठगों का सम्प्रदाय फिर खडा हो सके। इसमें सन्देह नहीं है कि ठगों के जडमूल से नष्ट करने में परिश्रम दूसरे ही हाकिमों ने किया था, परन्तु, उन सब का उत्साह बढ़ानेवाले लाट साहब ही थे। लार्ड विलियम बेंटिक ने जिस समय इस देश में पैर रक्खा था उस समय समस्त भारत में ठगों का एक जाल सा पुर रहा था और जब लार्ड महोदय अपना शासन-काल समाप्त करके विलायत को जाने लगे उस समय ठगों का सत्यानाश हो चुका था। ठगों का वही जमाना था जब कि मरहट्टे अपनी शक्ति बढ़ा रहे थे। पिंडारे लूट-मार कर रहे थे। उन दिनों कितने ही मनुष्य जब यात्रा के लिए घर से निकलते थे तब गाँव के लोग उनको रो-रो कर विदा करते थे क्योंकि वे जानते थे कि यात्रा से लौट कर आना किसी बिरले ही भाग्यवान् का नसीब होता है। सेतबन्धुरामेश्वर अथवा जगन्नाथजी हो आना उन दिनों एक आश्चर्य की बात थी। तीर्थयात्रा वे ही लोग कर सकते थे जिनके पास फूटी कौडी भी न होती थी और भीख माँग कर एक स्थान से दूसरे स्थान को जाते थे। लोगों की समझ में यह बात न आती थी कि उन लोगों की क्या दशा होती है जो घर से रुपया बाँध कर चलते हैं। वे सब तो लुटेरों के हाथ से मारे जाते थे अथवा वे इन ठगों के द्वारा लोप किये जाते थे। जब ठगों का भेद और उनके आचरणों की कथा सर्व-साधारण में फैली तब लोगों की आँखें खुलीं। ठगी महकमे के अफसरों

के पास उनके रिश्तेदारों की चिट्ठियाँ पहुँची जिनके सम्बन्धी घर से निकल कर फिर वापिस नहीं लौटे थे। बहुतेरे लोग यह चाहते थे कि यदि उनके रिश्तेदारों की मृत्यु का निश्चय उनकी लाश मिलने से हो जाय तो वे उनका क्रिया कर्म कर दें। ऐसे भी ठग थे जो नदियों पर अपनी नाव रखते थे, यात्रियों को नाव में भर कर, बीच धार में ले जाकर, उनको फाँसी लगा कर पानी में उनकी लाशें डाल देते थे। वे लोग ऐसा भी करते थे कि बड़े बूढ़ों को मार कर नासमझ छोटे बच्चों को इधर-उधर, बेंच डालते थे। पता लगने पर जब यात्रियों की लाशें खोदी गईं तब बड़ा घृणोत्पादक दृश्य दिखाई दिया। ऐसी-ऐसी जगहों में लाशें निकलीं जहाँ किसी को सन्देह कदापि भी नहीं हो सकता था।

परमात्मा का धन्यवाद है कि हमारे देश से अत्याचार के दिन विदा हो गए, यात्रा करने के लिए सब प्रकार की सुविधा होगई। आजकल चारों धाम (बदरीनाथ, जगन्नाथ, रामेश्वर और द्वारिका) की यात्रा करना कुछ भी कठिन नहीं है। स्त्रियाँ भी अब अकेली दूर-दूर की यात्रा कर आती हैं। तुम ख़ुद कितनी दूर-दूर हो आती हो और कभी किसी प्रकार का कष्ट नहीं भोगा। हमको सौभाग्य से ही ऐसी प्रजा-रक्षक और दयालु अँगरेज़ गवर्नमेण्ट मिली है जिसके शासन में हमारी सब प्रकार की रक्षा हो रही है।

बाप-बेटी का प्यार

पत्र नं० २५—

शिक्षा का प्रभाव—आठवें हेनरी यादगार (इङ्गलैंड का राजा)—सर टामस मोर की कन्या का पठन-पाठन – पिता पर विपत्ति और बेटी का साहस।

यह सच है कि अपनी सन्तान (चाहे लड़का हो या लड़की) सब को प्यारी लगती है। सभी माँ-बाप चाहते हैं कि उनकी सन्तान योग्य निकले और सुखी रहे। परन्तु, जितनी चेष्टा लड़कों के योग्य बनाने में की जाती है उतनी लड़कियों के लिए नहीं की जाती। लड़कियों की शिक्षा का भार उनकी माताओं पर रहता है। जो कुछ उनको आता है वह बेटियों को भी सिखा देती हैं। चौका बर्तन, पीसना-कूटना, रोटी पकाना, व्रत रखना, त्यौहार मनाना, छठी-बधाई, ब्याह-शादी के गीत गाना, नाक, कान, हाथ, पैरों को जेवर पहिरने का आदी बनाना, इसके सिवाय जो उन्हें आता हो तो सीना-पिरोना भी सिखा देती है। रहा, पढ़ना-लिखना सो न उन्होंने ख़ुद सीखा और न वे सिखा सकें। आजकल लड़कियों के पढ़ाने-लिखाने का ध्यान कुछ लोगों को हुआ है। इसमें सफलता प्राप्त करने की आशा तब ही सम्भव है जब पिता कहलाने वाले सज्जन ख़ुद इस काम को अपने हाथ में लें।

मनुष्य का दिमाग़ एक सुन्दर महल के समान है। जिसमें अनेक कमरे और कोठरियाँ हैं। विद्वान् मनुष्य यहाँ सद्गुणों को बसाता है। अभिमान तथा दुराचार जब यहाँ आते हैं तब उनसे कह दिया जाता है, "आगे जाओ, यहाँ जगह नहीं रही।" जो पिता स्वयं विद्वान् है वह चाहता है कि उसकी सन्तान भी विद्यानुरागी हो। वह लड़का-लड़की में अन्तर नहीं समझता। वह इस बात को नहीं मानता कि स्त्री तथा शूद्रों को ज्ञानाधिकार नहीं है। लड़कियों को पढ़ाने-लिखाने का फल अँगरेज़-समाज उठाती है। उनके घरों में सर्वत्र आनन्द बरसता है। स्त्री-पुरुष, लडके-लडकियाँ सब विद्यानुरागी होते हैं। सभ्य और सच्चरित्र होने के प्रभाव से उनके घरों में हमारे यहाँ की सी रें-रें, खें-खें नहीं मची रहती। जिसको जो करना है उसे वह प्रेमपूर्वक, धर्म समझ कर करता है। उनके घरों में कोई किसी पर हुक्म नहीं चलाता, अपना कर्तव्य सब समझते हैं। हमारे यहाँ तो यह सिद्धान्त है कि "बच्चे और स्त्रियाँ ताडना से ही ठीक रहते हैं" तथा "भय बिन प्रीति न होय"। ऐसे सिद्धान्त वाले बहुत से सज्जन वर्तमान हैं। घरों में देखिये बात-बात पर गाली चलती है। माँ लड़कियों को "राँड़" कह कर सम्बोधन करती हैं। बाप सबकी ही डंडों से ख़बर लेता है।

सभ्य देशों में विद्या के प्रताप से पारिवारिक प्रेम बहुत ही बढ़ा हुआ है। आज की चिट्ठी में "बाप-बेटी के प्यार" की एक कहानी लिखता हूँ। बात विलायत की है और कई सौ वर्ष

पहले की घटना है। आठवाँ हैनरी जिन दिनों इङ्गलेण्ड का राजा था, उन दिनों सर टामस मोर उनका प्रधान अफसर था। वह बड़ा ही धार्मिक और विद्वान् समझा जाता था। उसके तीन लड़कियाँ थीं। बड़े उत्साह से उसने उन्हें शिक्षा दी और उनको सुशिक्षित देख कर वह बड़ा ही प्रसन्न था। वह अपनी बेटियों को जो पत्र लिखा करता था (जिनका संग्रह अँगरेज़ी साहित्य में वर्तमान है) उन चिट्ठियों के पढ़ने से जान पड़ता है कि वह अपनी बेटियों को कितना प्यार करता था। अपनी लड़कियों की प्रशंसा सुन कर वह बहुत ही प्रसन्न होता था। उसकी बड़ी बेटी का नाम मार्गरेट था। संयोग से उसकी एक चिट्ठी सर टामस के एक मित्र पादरी ने देखी और पढ़ कर लड़की की योग्यता की बहुत सराहना की। बाप ने इस बात की चर्चा अपनी बेटी को एक पत्र लिख कर की। उस चिट्ठी का सार तुम्हारे पढ़ने के लिए लिखता हूँ।

"प्यारी बेटी मार्गरेट को टामस मोर का आशीर्वाद। प्रिय पुत्री! मुझे अब यह कहना पड़ता है कि तुम्हारे पत्र बड़े ही रोचक और हर्षवर्द्धक होते हैं। मेरी ख़ुशी का अन्दाज़ा तुम उस समय कर सकोगी जब तुमको यह जान पड़ेगा कि एक ग़ैर शख़्स ने तुम्हारे पत्र को कितना सराहा है। आज शाम को मैं अपने बड़े पादरी साहब के पास बैठा था। तुम ख़ुद जानती हो हमारा पादरी जैसा विद्वान् है वैसा ही धार्मिक भी है। किसी बात पर मुझे अपनी जेब से एक काग़ज़ का पुर्ज़ा

निकालना पडा। संयोग से उस काग़ज के साथ तुम्हारी एक चिट्ठी भी चली आई। चिट्ठी के सुन्दर अक्षर देख कर पादरी ने उस पत्र को मुझसे माँग लिया और पढ़ा। जव उनको वताया गया कि पत्र तुम्हारे हांथ का लिखा हुआ है तव उनका चाव वहुत ही वढ़ गया। उन्हें अत्यन्त आश्चर्य्य हुआ कि लड़की ने ऐसे सुन्दर अक्षरों में, ऐसे अच्छे आशय वाले पत्र को लिखा है। अक्षर, भाषा और भाव को देख कर वे भौचक से रह गये। उनके मुख को देख कर सिद्ध होता था कि तुम्हारी योग्यता की प्रशंसा करने को उनके पास शब्द न थे।"

एक वार मार्गरेट ने कुछ ख़र्च भेज देने के लिए वाप को लिखा। उत्तर में वुड्ढे वाप ने लिखा—"प्यारी वेटी! तुम ख़र्च माँगने में अपने वाप को क्यों इतना संकोच दिखाती हो और क्यों इतना डरती हो। तुमको रुपया देना मुझे कभी नहीं अखरता। तुम जो पत्र लिखा करती हो वे ऐसे होते हैं कि लेखक को जो कुछ दिया जाय सो सव थोड़ा है। मैंने पढ़ा है कि पिछले राजा-महाराजा जव किसी पडित पर प्रसन्न होते थे तव उसके एक-एक दोहे पर एक-एक अशरफ़ी देते थे। यदि मैं भी वैसा ही होता तो अपनी योग्य पुत्री के पत्रों पर एक-एक अक्षर के लिए दो-दो मुहरें देता।"

सचमुच मार्गरेट ऐसी ही थी। इसकी प्रशंसा अकेले वाप ही ने नहीं की, वरन् उस समय के नामी लेखकों ने भी इस लड़की के हृदय और मस्तिष्क की सराहना की है। ऐसी

योग्य लड़की जब एक भयानक रोग से पीड़ित हुई तब पिता के शोक का क्या वर्णन किया जाय। वह भयानक रोग ऐसा ही था जैसा आज-कल प्लेग है। प्लेग में गिल्टी निकलती है और ज़ोर का बुखार होता है, परन्तु, उस रोग में केवल ज्वर ही इतना तीव्र होता था कि छः घंटे ही में प्राण ले डालता था और २४ घंटे के पीछे तो जीने की आशा ही न रहती थी। ज्वर के वेग में बड़ी प्यास लगती थी, बेचैनी से रोगी छटपटाता था। दिल की धड़कन बढ़ जाती थी। शिर-पीड़ा और बौरान होकर मूर्च्छा आ घेरती थी। सिवाय पसीना लिवाने के और कोई चिकित्सा इस रोग की न थी। मार्गरेट की दशा बहुत बिगड़ गई, परन्तु, पिता ने चिकित्सा में कुछ कसर न छोड़ी। सब तरह का यत्न और ख़र्च किया गया। जब वैद्यों ने उस लड़की के जीवन की आशा दिलाई तब उसके प्यारे बाप की जान में जान आई।

कहा जाता है कि "विपत्ति अकेली नहीं आती।" इन्हीं दिनों में सर टामस मोर की ओर से उस समय के राजा हेनरी (आठवें) का मन बिगड़ गया। राजगद्दी पर बैठने के समय जो राजा के बड़े प्रिय पात्र थे उनमें बहुतों को राजा की पिछली अवस्था में घोर कष्ट सहने पड़े क्योंकि राजा की बुद्धि ठिकाने न रही थी। उसने अपनी रानी तक को त्यागने का सकल्प कर लिया था। इस कुविचार में सम्मति न देना ही मार्गरेट के पिता का अपराध था, तब ही से दुर्दशा का प्रारम्भ

हुआ। सर टामस समझ गया था, कि राजा से विरोध करके राज-दर्बार में टिकना असम्भव होगा। अस्तु, उसने इस्तीफ़ा दे दिया। उसने सोचा था कि अब वह सब झगड़ों से दूर रह कर अपना शेष जीवन पारिवारिक सुख और स्वच्छन्दता में व्यतीत करेगा। इधर राजा का आन्तरिक रोष घुमडता रहा, वह इस ध्यान में था कि किसी तरह अपने विरोधी का सर्वस्व नष्ट करे।

सर टामस ने अब तक कोई द्रव्य-संग्रह नहीं किया था। जो कुछ उसका मासिक वेतन था वह सब ख़र्च हो जाता था। इस्तीफ़ा देते ही गरीबी आ गई। सर टामस मोर ने अपने जीवन का प्रारम्भ भी गरीबी से काटा था इसलिए उसे कुछ घबराहट नहीं हुई। ऐश-आराम के सामान कम कर दिये गये, साधारण ग़रीबों की तरह रहने लगे। इसी बीच में राजा हेनरी ने प्रस्ताव उठाया कि उसको प्रजा का एक मात्र कर्ता-धर्ता समझा जाय, वह जो मन में आवे सो करे, कोई उसके कार्य में बाधा न दे। यह प्रस्ताव सर टामस के पास भी भेजा गया। उसने उसे बहुत अनुचित समझा और अपनी राय इसके विरुद्ध दी। इस पर राजा के क्रोध का ठिकाना न रहा, कारण हाथ लगते ही राजा हेनरी ने उसे जेलख़ाने में क़ैद कर दिया। बुड्ढे बाप को अपने प्यारे परिवार से अलग होने का जो कष्ट हुआ वह वर्णनातीत है। राजा से विरोध करना दिल्लगी नहीं है। उस समय ही सब को निश्चय हो गया कि अब प्राण-दण्ड हुए

विना छुटकारा न होगा। उस समय वेटी मार्गरेट ने वड़ी योग्यता से अपना कार्य किया। उच्च कर्मचारियों की मिन्नत-खुशामद से उसने इतनी आज्ञा प्राप्त करली कि वह अपने पिता को पत्र लिख सके तथा जव-तव उसे जेलखाने में देख सके। वह जानती थी कि उसका पिता उन महात्मओं में से है जो सत्य-मार्ग पर चलते हैं और कष्टों को चुप चाप सहते हैं और नियत पथ से वाल भर भी इधर-उधर नहीं होते। मार्गरेट जानती थी कि उसके पिता पर अन्याय किया गया है। उसने एक पत्र में अपने पिता को लिखा था—

"प्यारे वाप! तुम जानते हो कि आपके वियोग को हम सव किस तरह सहन कर रहे हैं। हमारा ध्यान आपके पवित्र जीवन पर है। हम ख़ूव जानते है कि आपके हृदय में वड़े-वड़े उच्च भाव भरे हुए हैं। आपके सदुपदेश, सुसम्मति और सुकर्मों का स्मरण ही हमारा अवलंवन है। हमको पूर्ण निश्चय है कि कठिन से कठिन विपत्ति में भी आपका मन उद्विग्न न होगा।"

वृद्ध पुरुष वेटी के पत्र में आश्वासन भरे ऐसे सुन्दर शब्द पढ कर कारागार में भी प्रमुदित हुआ। अपनी पुत्रियों को धार्मिक, सुशिक्षित और सहनशील वनाने के कारण आज उसे वडा सन्तोष था। वेटी की प्रेम भरी चिट्ठी कैदी पिता को वड़ी तसल्ली देती थी। वह इन पत्रों की लिखा-पढ़ी ही में अपना सव कष्ट भूला हुआ था। दुष्टों को उसका इतना सुख भी

अच्छा नहीं लगा। क़ैदी के कमरे से दवात, क़लम हटा दी गई। उसने इस पर भी मौनावलम्बन ही रक्खा तथा कोयले से लिख कर चिट्ठियाँ भेजता था और अपने चित्त को प्रसन्न रखता था। अन्त को वह दिन आ गया जब सर टामस मोर का सिर काटा जाना निश्चित हो गया। अन्याय और पाप की पराकाष्ठा हो गई। जब उसको सैनिक लोग ले जाने लगे तब मार्गरेट भीड को चीर कर सैनिकों को हटाती हुई पिता के पास पहुँची और गले से लिपट गई। उस समय उसे अपना कुछ ध्यान न था और न मुँह से बात निकलती थी। पिता ने आँखों से आँसू बहाते हुए कहा—"बेटी! धीरज धरो, मेरे लिए अब कुछ शोक मत करो। परमात्मा की जो इच्छा है सो हो रहा है। मेरी मुक्ति के लिए प्रार्थना करो।" बाप, बेटी के प्रेम का यह दृश्य देख कर पत्थर का कलेजा भी पसीज गया।

उन दिनों यह क़ायदा था कि सिर काट कर "लन्दन ब्रिज" पर लटका दिया जाता था। मार्गरेट ने इस समय ऐसी बड़ी हिम्मत का काम किया कि उस सिर को वहाँ से उतार कर अपने घर ले आई। गुप्तचरों ने इस बात का पता लगा लिया और कौन्सिल में ख़बर पहुँचा दी। मार्गरेट बुलाई गई, प्रश्न करने पर उसने बड़ी हिम्मत के साथ उत्तर दिया कि उसने अपनी जान पर खेल कर बाप के सिर को प्राप्त किया है। जो वह ऐसा न करती तो उसके प्यारे पिता का सिर नदी की मछलियाँ खा गई होतीं। सभासदों में कुछ ऐसे भी

थे जिनको उसकी इस दशा पर दया आई और क्षमा कर दिया।

वह अपने पिता के लिए सब प्रकार के कष्ट सहने को तैयार थी। जिस तरह पिता कह गया था तदनुसार उसके धड़ को जेलखाने की समाधि से उखड़वाया और अपने यहाँ के गिरजे की भूमि में उसको गड़वाया। सिर को बड़े यत्न और आदर से अपने कमरे में रक्खा। उसके लिए बाप की मुर्दा आँखें ऐसी थीं मानो पिताजी अभी स्नेहमय भाव से देखने को हैं। सूखे होंठ ऐसे जान पड़ते थे कि अभी बोल उठेंगे और आशीर्वाद देंगे।

मार्गरेट पिता के मरने के पीछे ६ वर्ष तक जी। जब मरने लगी तब भी पिता को न भूली। मरते समय भी यही इच्छा प्रकट की कि कफ़न में रखते समय उसकी गोद में उसके पिता का सिर रख दिया जाय, तदनुसार यही किया गया। उसकी समाधि को देख कर इस वाक्य की सच्चाई सिद्ध होती है कि देह नहीं रहती, परन्तु, नाम रहता है। उन दिनों इंगलैंड की जैसी दशा थी और जैसा अन्याय हो रहा था ऐसे समय में एक लड़की ने जो कुछ किया वह बड़े ही पौरुष का कार्य था। पिता ने शिक्षा देकर उसे सब प्रकार के कष्ट सहने के योग्य बनाया था। यदि मन दृढ़ न हो तो बलवान् मनुष्य भी कुछ नहीं कर सकता। यह बाप, बेटी के पवित्र सम्बन्ध की कहानी इतिहास में अकेली ही है।

विदुषीगण-प्रकरण

बेगम भूपाल

बेगम की विलायत-यात्रा

पत्र नं० २६—

भूपाल ताल—लन्दन में दरबार—विलायत की स्त्रियाँ—पर्य्यटन—कुस्तुनतुनिया में मुहम्मद साहब का चोगा—सुल्तान रूम से भेंट—लेडीज़ क्लब।

शायद तुमको याद होगा जब हम सागर से गुजरात के डीसा नगर को गये थे तब हमको भूपाल में गाड़ी बदलनी पड़ी थी और भूपाल में जो बड़ा-ताल है उसके सम्बन्ध में कहावत है:—

"ताल तो भूपाल ताल और सब तलैया"

उस भूपाल ताल को देखने की मुझे बहुत दिन से लालसा थी। तुम्हारी जीजी, तुम तथा हरदेवी भी मेरे साथ-साथ उस ताल को देखने गई थीं। इससे पहले इतना बड़ा तालाब हमने कभी नहीं देखा था। तालाब क्या है समुद्र का टुकड़ा है। तुम्हें याद है उसमें कैसी तरंगें उठ रही थी? बीच में

एक वडी नाव भी पडी थी जो समुद्र में जहाज की याद दिलाती थी। उन दिनों वर्षा ऋतु थी, तालाव के आस-पास की पहाडियाँ हरियाली से ढक रही थीं और वहुत ही सुन्दर जान पडती थीं। मुझे अव तक उस ताल का पूरा ख़याल वना है, शायद तुम्हें भी याद होगा। लौटते वक्त हम भूपाल शहर में होकर आये थे। उस समय मैंने तुम्हें वताया था कि भूपाल एक राज्य है और इसका शासन एक स्त्री करती है जो "भूपाल की वेगम" कहलाती है। ये वहुत पढी-लिखी हैं, मुँह पर वुरका रखती है। राजदरवार के सव काम संभालती हैं। पिछले दिल्ली-दरवार में सव रजवाड़े आये थे, वे भी आई थीं और अन्य राजाओं की भाँति वादशाह से मिली थीं। वादशाह ने इस देश में आने से पहले अपनी राजगद्दी का उत्सव लन्दन में भी किया था। वहुत से राजा-महाराजा भारतवर्ष से गये थे। वेगम भी वहाँ पहुँचीं थीं। २६ जनवरी को स्त्रियों की एक सभा में वेगम ने अपनी यात्रा के वारे में एक व्याख्यान दिया था। उन्होंने कहा कि विलायत में विद्या का वडा ही चमत्कार है, विद्या के प्रभाव से ही वहाँ के लोग सभ्य, स्वाधीन, शूर, वीर तथा उदार विचार के हैं। उस देश में वड़े बूढे ही नहीं, वच्चे तक पूर्ण सभ्य हैं। विलायतवालों ने जो इतनी उन्नति की है इसका मूल कारण वहाँ की स्त्रियाँ हैं। वे शिक्षिता और समझदार होती हैं, ससार की सव ऊँच-नीच वातों के वारे में जानती है। इसी से वच्चों को भी जन्म से ही अच्छी शिक्षा मिलती है, जिसके प्रभाव से वे

योग्य मनुष्य बनते हैं। बादशाही महलों से लेकर झोंपड़ियों तक यह देखा जाता है कि वहाँ की साधारण स्त्रियाँ भी शिशु-पालन और गृहप्रबन्ध बड़ी योग्यता से करती हैं। उस देश में स्त्रियाँ सफाई के लाभ समझती हैं, इसी कारण उनके घर, वस्त्र और शरीर ख़ूब शुद्ध रहते हैं। सफ़ाई के साथ बच्चों का पालन होने से वे भी बहुत आरोग्य रहते हैं। योग्य माताओं से उन्हें १० वर्ष की अवस्था में ही बड़ी-बड़ी शिक्षाएँ मिल जाती हैं।

सब से प्रेम रखना, देशभक्त होना, सत्य-भाषण और सभ्यता का व्यवहार करना, बड़ों को आदर देना सब बच्चों को सिखा दिया जाता है।

विद्वान्, शूरवीर और सदाचारी बनने की लालसा बच्चों के हृदय में माताओं के द्वारा ही जागृत की जाती है। दो-ढाई सौ वर्ष पहले इंगलैंड देश में स्त्रियों की ऐसी ही दशा थी जैसी आज हमारे यहाँ है। जब वहाँ विद्या का प्रचार हुआ तब लोगों को ज्ञान पड़ा कि जबतक लड़कियाँ भी लड़कों की तरह शिक्षिता न होंगी तबतक उन्नति नहीं होगी, तदनु-सार उन्होंने अपनी लड़कियों को पढ़ाया और योग्य बनाया। उनके योग्य होने से देश भी तत्काल सुधर गया। सौभाग्य से हमारा देश भी उसी बृटिश जाति के अधिकार में आगया है। गवर्नमेंट की बड़ी इच्छा है कि यहाँ विद्या का प्रचार हो। सम्राट् पंचम जार्ज के हृदय में भी यही अभिलाषा है, यदि ऐसा समय पाकर भी भारतवर्ष में ज्ञान

विस्तृत न हो तो दोष हमारा ही है। हमारी माता और बहिनों को चाहिए कि वे यदि अपना भला चाहती हैं तो विद्या की उन्नति में सहायिका बने। बेगम जब इंगलैंड में पहुँचीं तब उनका बडा सत्कार हुआ था। वे वहाँ उसी प्रकार ख़ुश रहीं जिस प्रकार अपने राज्य में। इङ्गलैंड में भारत-वासियों के साथ बडे स्नेह का व्यवहार किया जाता है। बेगम अपने साथ महारानी मेरी का एक चित्र लाई हैं जो महारानी ने उन्हें दिया है। लदन के दरबार का हाल तो समाचार पत्रों में छप ही चुका है। राजमहल में मेहमानों को जो दावतें दी गई थीं उनमें भी बेग़म साहिबा शामिल हुई थीं। सम्राट् जार्ज की माता का नाम क्वीन एलेक्ज़ेंडरा है। बेगम साहिबा उनसे भी मिली थीं। राजमाता ने बेग़म साहिबा का बडा आदर किया और इच्छा प्रकट की कि यदि सभव हुआ तो वे भी एक बार भारतवर्ष की यात्रा करेंगी। इङ्गलैंड के सिवाय बेगम ने जर्मनी, स्विटजरलैंड, आस्ट्रिया, हगेरी और फ्रांस की भी सैर की थी। इन देशों के व्यवहार एक दूसरे से भिन्न हैं। टर्की जिसको रूम भी कहते हैं मुसलमानों का प्रसिद्ध देश है। इसकी राजधानी कुसतुन-तुनिया है। बेगम ने राजधानी का अवलोकन किया। यह बडा पुराना शहर है तथा देखने योग्य है। यहाँ सब देशों के निवासी मिलते हैं; परन्तु, जो बात विलायती शहरों में देखी गई वह यहाँ नहीं मिली। यहाँ की स्त्रियाँ धीरे-धीरे विला-

यतवालियों का अनुकरण कर रही हैं, परन्तु, अभी तक उतनी सभ्य नहीं हुई है। मसजिदें अनेक है जिनमें मुल्ला लोग मौज़ूद हैं; परन्तु, मुल्लाओं के उपदेश आजकल के लोगों को प्रिय नहीं हैं। स्त्रियों में से पर्दे का प्रचार घटता जाता है।

मुसलमान धर्म के प्रचारक हज़रत मुहम्मद साहव का चोगा अभी तक कुस्तुनतुनियाँ में मौजूद है और शाही तोशख़ाने में रक्खा है। मुसलमानी महीना रमजान की १५ तारीख़ को वड़ी धूमधाम से उसके दर्शन कराये जाते हैं। वेगम को उसके दर्शन न मिलने का शोक रहा। उस नगर में एक जगह मुहम्मद साहव के "चरण-चिन्ह" दिखाये जाते हैं। एक जगह वह कुरान मौजूद है जो मुहम्मद साहव की गद्दी पर वैठनेवाले तीसरे ख़लीफ़ा उसमान के पास थी। दुश्मनों ने जव ख़लीफ़ा को मारा तव वे कुरान पढ रहे थे, उस पुस्तक पर ख़ून के दाग़ अव तक वर्तमान हैं।

वेग़म ने रूम के सुलतान से भेंट की थी, वहुत देर तक फ़ारसी भाषा में वातचीत होती रही। महलों के भीतर सुलताना से भी मुलाकात हुई, परस्पर की वातें सुलतान ने भाषान्तर कीं। पीछे सुलतान ने वेग़म से कहा कि "मैं अव जाता हूँ तुम वुरक़े में से मुँह खोल सकती हो।" सुलतान के चले जाने पर वजीरजादी ने भाषान्तर करने का काम किया। यह लडकी अँगरेज़ी समझती थी, वेग़म जो वात उससे अँग-रेज़ी में करती वह उसे टर्की की भाषा में सुलताना को समझा

देती थी। टर्की के वाद वेगम मिस्र देश में उतरीं और क़ाहिरा के वड़े मदरसे को देखा। इस मदरसे का नाम "अलहजर" है। हजारों विद्यार्थी पढते हैं। वेग़म को इस यात्रा में यह वात अच्छी तरह जॅच गई कि अँगरेज़ों के देशमें वहुत अच्छा न्याय, शान्ति और स्वतन्त्रता है।
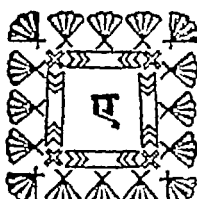
वेगम अपनी यात्रा का पूरा वृत्तान्त पुस्तकाकार प्रकाशित करने का विचार कर रही हैं। पायनीयर समाचार पत्र में छपा था कि टर्की के सुलतान ने वेग़म को जो उपहार दिया वह मुसलमानों के लिए एक अमूल्य पदार्थ है। वह एक वाल है जो मुहम्मद साहव की दाढ़ी का वताया जाता है। वेग़म की वड़ी इच्छा है कि उनके राज्य में शिक्षा का विस्तार हो। उन्होंने स्त्रियों का एक समाज क़ायम किया है, उसका नाम "लेडीज़ क्लव" है। यहाँ उनके राज्य की उच्च घरानेवाली स्त्रियाँ एकत्र होकर वार्तालाप करती हैं। वाइसराय लार्ड मिन्टो की मेम साहिवा ने इस क्लव को स्थापित किया था।

भगिनी निवेदिता

पत्र न० २७—

प्राचीन भारत—निवेदिता का बाल्य काल—भारतागमन—हिन्दोस्तानी मुहल्ले—प्लेग में काम—शिक्षा-प्रचार—मृत्यु का कारण—स्वदेशी-प्रचार ।

एक ऐसा समय भी हो गया है जब इस देश में हिन्दुओं का शासन था, सब लोग वेद शास्त्रानुकूल आचरण रखते थे। पुरुष के धर्म कार्यों में सम्मिलित होने का स्त्रियों को भी अधिकार था। गृहस्थ का कोई काम ऐसा न था जिसमे केवल पुरुष ही एकत्र हुआ करते हों। बाल्यकाल में सबको समान रूप से शिक्षा मिलती थी, उन दिनों ब्राह्मणों का आदर विद्या से ही था। धन की तृष्णा केवल वैश्यों मे थी। ऋषि-लोग वेद की शिक्षा को अपने आचरण द्वारा सर्व साधारण में फैलाते थे। जो कुछ धर्मोपदेश होता था उसी के अनुसार चलकर हम लोग अन्य लोगों के लिए दृष्टान्तस्वरूप होते थे। आजकल तो ऐसे मनुष्यों का अभाव सा है, इसीलिए तुलसीदास ने लिखा है:—

पर उपदेश कुशल बहुतेरे। जे आचरहिं ते नर न घनेरे॥

हमारे उन प्राचीन महर्षियों के रचे हुए ग्रन्थों का प्रचार

सब सभ्य देशों में फैल गया है। विलायत से प्रति वर्ष सहस्रों यात्री इस देश में आते हैं और आश्चर्य करते हैं कि जिनके पूर्वज ऐसे धार्मिक और विद्वान् हो चुके हैं उनकी सन्तान आज किस दुर्दशा को प्राप्त हो गई है। उन यात्रियों में ऐसे भी अनेक हैं जो हमारी दशा पर दया करके हमारे उद्धार का विचार करते हैं।

भगिनी निवेदिता यहाँ के धार्मिक सिद्धान्तों से स्वदेश में ही परिचित हुई थीं। उनके पिता आयर्लैंड निवासी थे जिन्होंने बाल्यकाल से ही अपनी कन्या को धर्मशिक्षा दी। बुद्धिमती कन्या ने अपने धर्म-ग्रन्थों के सिवाय भारतीय धार्मिक विचारों का भी अनुशीलन किया था। भाग्य से उन्हीं दिनों प्रसिद्ध स्वामी विवेकानन्द अमेरिका पहुँचे। उनके सत्संग से भगिनी निवेदिता के हृदय में हिन्दू धर्म पर अपार श्रद्धा बढ़ गई। इनके परिवार के नाम पर उनका पहला नाम मार्गरेट इनोविल था, जब उन्होंने स्वामी विवेकानन्द का उपदेश ग्रहण किया तब उनका नाम भगिनी निवेदिता हुआ। जब वे भारत में पहुँचीं तब उन्होंने यहाँ स्त्रियों की बड़ी दुर्दशा देखी। यहाँ आकर उनको मालूम हुआ कि इस देश में जन्म से ही लड़कियों का निरादर किया जाता है। उनको आवश्यक शिक्षा भी नहीं दी जाती। विवाहोपरान्त भी उनको कुछ विशेष सुख नहीं मिलता। सर्वथा निरक्षर रहने के कारण वे वर्तमान समय के ज्ञान-विस्तार से कुछ लाभ नहीं उठा सकतीं। भगिनी निवे-

दिता के हृदय में उस समय यह धारणा दृढ़ हो गई कि उनको जीवन भर के लिए यहाँ यथेष्ट कार्य है। तदनुसार उन्होंने अपने शेष जीवन को इस परोपकारी कार्य में लगा देने का दृढ़ संकल्प कर लिया।

वह सभ्य देश की कन्या थी, उन्होंने विचार किया कि अपने आचरण से वे यहाँ की स्त्रियों को बतावेगी कि घर को किस प्रकार साफ़-सुथरा रक्खा जाता है। इसी विचार से उन्होंने एक हिन्दू मुहल्ले में साधारण घर लिया। इस बात को सब लोग जानते हैं कि विलायती सज्जन जब इस देश में आते हैं तब शहर से दूर बङ्गलों में रहते हैं। शहर की गन्दगी में घर लेकर रहना उनको नर्क सा प्रतीत होता है। परन्तु, भगिनी निवेदिता में इतना अभिमान न था। वह इस देश में अपना वैभव दिखाने अथवा ऐश्वर्य भोगने के लिए नहीं आई थी। उनकी इच्छा तो जैसों में तैसा बनकर सुधार करने की थी। हम लोगों की तन्दुरुस्ती पर हमारे घरों का बड़ा असर होता है। बच्चे और स्त्रियों के अनेक रोगों का कारण हमारे मैले घर ही हैं। निवेदिता को तन्दुरुस्ती पर भी गन्दी हवा में रहने का यह नतीजा हुआ कि वे बीमार हुईं, आरोग्यता के लिए वे बाहर गईं और समर्थ होने पर फिर वही कार्य करना आरम्भ कर दिया।

एक हिन्दुस्तानी मुहल्ले में घर लेकर उसे आदर्श घर बनाया जिससे अड़ोस-पड़ोस की स्त्रियाँ जान लें कि उन्हें अपने घरों में किस प्रकार की सफ़ाई रखनी चाहिए, दूसरे घरों में

इसी तरह जब दुर्भिक्षरूपी विपत्ति आई तब उसके लिए भी भगिनी तैयार हुई। भूखों को अन्न पहुँचाया, रोगियों की चिकित्सा का प्रबन्ध किया।

भगिनी निवेदिता को शिक्षा से बड़ा प्रेम था। स्वयं शिक्षिता होने के कारण वे समाज में जो कुरीति देखती थीं उसको लिखकर सामयिक पत्रों में उसके निवारण का उपाय बताती थीं। बच्चों की पाठशालाओं पर उनकी बड़ी दृष्टि थी। इस देश में विधवा लड़कियाँ और स्त्रियाँ कहीं-कहीं बड़े कष्ट और निरादर से अपना जीवन काटती हैं। भगिनी निवेदिता ने उनके लिए विधवा आश्रम खोले। सच तो यह है कि इस देश में जो कुछ काम उन्होंने किया उसके करने के लिए सहस्रों निवेदिता दरकार हैं। देश की रीति के अनुसार हमारे यहाँ सब लडकियों को बाल्यकाल से ही विवाह-बन्धन में बाँध दिया जाता है। गृहस्थ की दशा ऐसी है कि विवाहिता लड़की इच्छा करने पर भी कोई परोपकार का काम नहीं कर सकती। पुरुष तो ऐसे हैं जिनको सब प्रकार की स्वतंत्रता है, परन्तु, उनका प्रवेश अन्य घरों के भीतर नहीं हो सकता और वे नारी जाति की आवश्यकताओं को भी नहीं समझ सकते हैं। विलायत में अनेक लड़कियाँ हैं जो शिक्षिता बन कर जन्म भर क्वारी रहती हैं और अपने प्रेम को अपनी बहिनों के सुधार में लगा देती हैं। भगिनी निवेदिता ने अपने कार्य में घोर परि-श्रम किया और इसी में प्राण दिये। कलकत्ते के विद्वानों

हमारी सहायिका वनीं, हमारी लडकियों को उन्होंने उच्च-भाव भरी पवित्र शिक्षा दी। स्वदेश में उन्होंने हमारे प्राचीन गौरव का स्वप्न देखा था। वह हमारे ऋषि-मुनियों की पवित्र शिक्षा और सदाचरण पर मोहित हुई थी और स्वय उस प्रणाली पर चलने के लिए आर्य्यवर्त्त में आई। आज सहस्रों प्राणी उनको अपनी सच्ची वहिन की तरह स्मरण करते और उनके गुणानुवाद गाते हुए उनके वियोग में आँसू वहा रहे हैं। उनकी आन्तरिक इच्छा यही रही कि भारत फिर वही उच्च भारत वन जाय। उन्होंने इस इच्छा की पूर्त्ति क लिए जो यत्न किया है वह कदापि निष्फल न जायगा। हमारी सन्तानों में अव अनेक उनके दिखाये हुए मार्ग पर चलेंगी। भारतवर्ष मे अव जो कुछ जागृति जान पडती है उसमें भगिनी निवेदिता का ही परिश्रम है। हमारा देश पूर्वकाल मे सर्वोपरि गिना जाता था, यहीं से सव अच्छी-अच्छी वातें फैल कर दूसरे देशों में पहुँची हैं, चेष्टा करने से इसके दिन फिर फिर सकेंगे।

निवेदिता ने जो सवसे वडी वात सिखाई है वह यह है कि हम लोग स्वार्थ भूल कर प्रिय भगिनी की भाँति अपने जीवन को परोपकार में लगाने का व्रत लें। ऐसा किये विना इस देश का कल्याण न होगा। वहिन अपने मुँह से जो कुछ कहती थीं वह कर भी दिखाती थी। मन के लड्डू पकाने की अपेक्षा अपनी इच्छाओं को कर्तव्य में परिणत करना उन्हें प्रिय था। भारत-वासियों की वड़ी इच्छा है कि ऐसी परोकारिणी वहिन का

कोई दृढ स्मारक स्थापित करें जिससे उनकी कीर्ति हमारी आँखों के सामने हरीभरी बनी रहे। बहिन निवेदिता के उपकार भारतवासियों के हृदय पर अंकित हैं और वे अमिट हैं। जिन बहिनों ने भगिनी निवेदिता के बताये हुए मार्ग पर चलने का सकल्प किया है उनको वह आराध्या देवी रहेंगी। सद्विचार, परोपकार और स्वार्थत्याग के सच्चे दृष्टान्त देने के लिए भगिनी निवेदिता का स्मरण सबसे पहले होगा। शोक है कि हमारी ऐसी शुभाकांक्षिणी बहिन की मनोभिलाषा पूरी होने से पहले ही उन्हें मृत्यु ने आ ग्रसा।"

यह कोई नई घटना नहीं है। सभी परोपकारी, भारत-हितैषियों को अपने मन की अभिलाषा मन ही में लेकर इस लोक से जाना पड़ा। उसकी दशा के ऊपर मशाल का उदाहरण घटता है। जब तक मशाल में तेल रहता है तबतक वह प्रकाश फैलाने में आलस्य नहीं करती, जब तेल चुक गया तब स्वय जल कर भस्म हो गई। उसका कार्य दूसरों के लिए प्रकाश करना स्वय उसके लिए घातक है।

सन् १९११ को १८ अक्टूबर को भगिनी निवेदिता ने शरीर त्यागा। उनको सग्रहणी का रोग हुआ था। संग्रहिणी उस रोग को कहते हैं जिसमें खून के दस्त आते हैं, आँतों में घाव पड़ जाते हैं। यूरोप वालों को जब यह रोग इस देश में होता है तब बहुतों के प्राण ही को ले बैठता है। जल और खाद्य पदार्थों द्वारा इस रोग का विष शरीर में प्रवेश करता है। भगिनी

निवेदिता जिस दशा में रहती थीं उसमें उन्हें यह रोग हो जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। हम लोगों में अनेकों को यह रोग होता है और अच्छे भी हो जाते हैं; पर, दुर्भाग्य से बहिन निवेदिता ने आरोग्यता लाभ नहीं की।

उनको शायद इस बात का ध्यान होगा कि हम लोगों के बर्ताव में जितने पदार्थ आते हैं वे सब इसी देश में नहीं बनते, उनमें की बहुत सी चीज़ें विलायत से से बन कर आती हैं। विलायती कारीगर और मज़दूर हमारे देशवालों की अपेक्षा अधिक विद्वान् हैं, उनकी बनाई हुई चीज़ें भारत में बनी हुई चीज़ों की अपेक्षा साफ़-सुथरी और दिखावटी होती हैं। इसके विरुद्ध वही चीज़ें जो यहाँ के कारीगर बनाते हैं भद्दी रहती हैं। यही कारण है कि देशी कारीगरी दिन पर दिन घटती जाती है, लोग अपना पुश्तैनी काम छोड़ कर मज़दूरी करते फिरते हैं।

बहुत दिनों की बात नहीं है कि हमारे गाँव में कोलियों का एक अलग मुहल्ला था जो अब भी कुरिहाने के नाम से मशहूर है। इसमें कई कोली कपडे बुना करते थे, परन्तु, जब से लोगों ने देशी कपड़ा पहिनना छोड़ दिया तब से उनका काम बन्द सा हो गया। वे लोग बुनने का काम छोड़ कर किसानों के खेतों पर मज़दूरी करने लगे। उन दिनों खेत की कपास किसान लोग अपने घर ही रहँटी के द्वारा उटवा लिया करते थे। बिनौले गाय-भैंस के खाने के लिए रहते थे और रुई कोलियों को दे दी जाती थी। कोली उसको

गजी वना कर लाते थे, उसी गजी में से मिर्जइयाँ, दोहर, धोतियाँ आदि चीजें वन जाती थीं। ये कपड़े वड़े मज़बूत होते थे। एक धोती का जोड़ा किसान के पास वर्ष दिन अच्छी तरह चलता था। स्त्रियों के पहरने की धोतियाँ छीपी के यहाँ छपा कर काम में लाई जाती थीं, इसी गजी से लहँगे और ओढ़नी वनती थीं। सब काम अपने लोग ही करते थे, परन्तु, अब सब चीजें विलायती हैं, यहाँ तक कि हाथों की चूड़ियाँ भी अन्य देशों से वन कर आती हैं। तुम्हारे स्कूल में शायद तुम्हारे हाथ में ही मनिहार की वनाई चूड़ियाँ होंगी, नहीं तो सब के हाथों में वे ही विलायती नगदार चूड़ियाँ पाई जायँगी। भगिनी निवेदिता का ध्यान इस ओर गया था और उन्होंने स्वदेशी चिजों के व्यवहार की ओर सर्वसाधारण का ध्यान खींचा। वहिन ने समझाया कि स्वदेशी चीज़ों का काम में लाना अपनी सहायता आप करना है। एक भाई चीज़ तैयार करता है और दूसरा उसे खरीदने के लिए परिश्रम करके द्रव्य कमाता है। यहाँ के लोगों की समझ में अभी तक स्वदेशी की महिमा पूर्णरूप से नहीं आई है, इसीसे अभी तक भोले लोग विलायती माल खरीदते हैं। भगिनी निवेदिता का विश्वास था कि भारतवासी स्वदेशा चीजों को अधिक मूल्य देकर भी ख़रीदेंगे, उनको यह वात मालूम है कि देश की वनी हुई चीजें यद्यपि देखने में सुन्दर नहीं दीखतीं, परन्तु, टिकाऊ खूब होती है।

भगिनी निवेदिता इस देश की स्त्रियों को सुशिक्षिता वनाने

के लिए बडी व्याकुल थीं। कन्या-पाठशालाओं का विस्तार उन्हें बड़ा हर्षदायक था। उनकी एक निजकी पाठशाला भी मौजूद है। इस सब लेख का सार यह है कि बहिन निवेदिता का जीवन सफल हुआ है। न जाने कब इस देश में ऐसी ब्रह्म-चारिणी कन्याए उत्पन्न होंगी जो अपनी बहिनों के कल्याण के लिए अपना जीवन समर्पण करेंगीं। भगिनी निवेदिता जो मार्ग दिखला गई है उसी पर चलनेवाली कन्याओं के परिश्रम से इस देश में स्त्रियों का कुछ भला होगा। निवेदिता की मृत्यु को सुन कर लेडी मिन्टो जो इस देश के वाइसराय की धर्मपत्नी थीं, अपने एक पत्र मे लिखा था—"निवेदिता का आश्चर्य्य भरा और परोपकारमय जीवन था। वह ससार के भले के लिए जीती थी। उसकी मृत्यु से संसार भर की हानि हुई है।"

हेमन्त कुमारी

पत्र न० २८—

महारानी मेरी—गोंडाल नरेश-कन्या भाकु वेरवा।

बहुतेरे सज्जन कहा करते हैं कि लडकियाँ पढ़ने-लिखने में चाहे जितनी बढ़ जायँ परन्तु वे पुरुषों की बराबरी नहीं कर सकतीं। पिछले सप्ताह मैंने श्रीमती सरलादेवी की चर्चा की थी, आज मैं एक हिन्दी लेखिका की बात लिखता हूँ। प्रयाग में जो प्रदर्शिनी हुई थी उसके लाभों पर लेख लिखने वाले को ५००) का इनाम देना निश्चित हुआ था। आश्चर्य का विषय है कि कोई पुरुष लेखक उस इनाम को नहीं ले सका। उसको श्रीमती हेमन्त कुमारी देवी ने—जो एक बङ्गालिन हैं—प्राप्त किया और अपनी कीर्त्ति को हिन्दी ससार में फैला दिया। इसी देवी ने एक और उपहार प्राप्त किया था, वह भी एक हिन्दी लेख को सर्वोत्तम लिखने का का पुरस्कार था। लेख का शीर्षक "आदर्श पुरुष रामचन्द्र" था।

यह साहित्य की बात हुई। साइन्स अर्थात् विज्ञान में भी स्त्रियों की बुद्धि अपना चमत्कार दिखाने लगी है। तुमने "रेडियम" धातु का नाम अपनी किसी पाठ्य पुस्तक में न पढ़ा होगा। यह एक नया तत्त्व है। इसमें से प्रकाश और उष्णता।

निकला करती है जिससे यह धातु कई रोगों को अच्छा कर देने में सफल हुई है। यदि इसका मिलना सुगम होजाय तो और भी कई उपयोगी काम इससे लिये जा सकते हैं। इस अद्भुत धातु को खोज कर संसार में फैलाने वाली एक फ्रांस देश की स्त्री है। साइन्स जानने वालों में मेडेम कूरी का नाम प्रसिद्ध है। श्रीमती कूरी ने रसायन शास्त्र मे सब से बड़े दो पुरस्कार ऐसे पाये हैं जो अब तक किसी को नहीं मिले।

तुमने एक बार लिखा था कि मोती महल में लड़कियों के खेल हुए थे और मिठाई तथा तमगे सब स्कूलों की लड़कियों को मिले थे। इस तमगे पर सम्राट् जार्ज पंचम और महारानी मेरी की मूर्ति है। यद्यपि महाराज और महारानी अपने देश को चले गये हैं;परन्तु,उनके आगमन का स्मरण हम लोगों को जन्म भर नहीं भूलेगा। क्या इस देश की स्त्रियाँ यह जान कर विस्मित नहीं होंगीं कि महारानी मेरी बड़ी निरभिमान हैं। वे सर्वसाधारण प्रजा से मिल कर बहुत प्रसन्न होती हैं। कलकत्ते की बात है कि एक दिन ये चिड़ियाघर देखने गईं; वहाँ इन्हें वह जगह बड़ी ही सुनसान मालूम हुई, साथ वालों के सिवाय कोई भी दर्शक वहाँ नही पाया। महारानी ने पूछा—"आज इस जगह और कोई क्यों नहीं आया?" उत्तर दिया गया—"आज आपको आना था, इसीलिए दर्शकों को हटा दिया गया।" महारानी चिड़िया घर के अध्यक्ष से बोलीं—"आपने हमारा आज का दिन ही नष्ट कर दिया।"

समय की वलिहारी है कि लोग अपनी कुरीतियों को छोडते जाते है। वङ्गाल में देवी का वडा मान है। साथ ही यह भी विश्वास है कि देवो के सामने वकरा काटने से वे वहुत प्रसन्न होती हैं। वकरा तो स्वर्ग को चला जाता है और उसके मांस के खाने से भक्त लोगों का कल्याण होता है। जहाँ-जहाँ वङ्गाली हैं वही "काली वाडो" है और विशेष तिथियों पर देवी के सामने वकरे वध किये जाते हैं। हर्ष की वात है कि फीरोज़पुर में वसने वाले वङ्गालियों ने वलिदान में पशुवध न करना निश्चय किया है। हमारे प्रान्त में कहीं-कहीं पर देवी के सामने भैंसे मारे जाते हैं। देवी, जो कि जगन्माता है, क्या पशुओं को माता नहीं है? मा के सामने उसके पुत्र का मारना और उसे प्रसन्न करने की इच्छा रखना न जाने क्यों भक्त लोगों की समझ में आ जाता है।

सरस्वती में गोराडाल के राजपरिवार का हाल छपा था। गोराडाल काठियावाड़ गुजरात का एक सूवा है, वहाँ के राजा ठाकुर साहव कहलाते हैं। वर्तमान ठाकुरसाहव ने अपने परिवार के लोगों को खूव शिक्षा दी है। उनकी एक लडकी अव फ्रांस में पढ़ रही है और दो लडकियाँ घर पर हैं। दोनों शिक्षिता और काम-काज में दक्ष हैं। इन्होंने भी पूर्ण शिक्षा पाई है। चित्र और मूर्त्ति वनाने में उन्हें वडे-वडे इनाम मिले हैं। जिस कन्या का नाम वाकुवेरवा है वह अपने पिता को वहुत सहायता देती है।

कभी उनको मोटर गाड़ी पर विठा कर घुमाने ले जाती है। कभी उनको दफ़्तर के काम मे मदद देती है । कभी बाग़ की निगरानी करती है । कभी कुछ करती है, कभी कुछ। पिता के न मालूम वह कितने काम करती है। आजकल वह अपने मा-वाप के चित्र अङ्कित कर रही है। लडकी वडी ही परिश्रमी है। उसे पिता का दाहिना हाथ कहना चाहिए। रात हो या दिन, किसी समय, कहीं भी ठाकुर साहिव हों वाकुवेरवा सदा उनके साथ रहती है। राजकुमारियाॅ आभूषणों को पसन्द नही करती। हाँ, साड़ियाॅ वे अच्छी-अच्छी पहनती हैं। घर में तो मोज़ा व जूता भी नहीं पहनतीं। इनका अन्तःकरण वहुत शुद्ध है। लकडियों की मा श्रीमती नन्दकुवेरवा भी अपनी विद्वत्ता के लिए प्रसिद्ध है। इस देश की रानियों में सवसे पहले उन्होंने संसार भर की यात्रा की है और सव हाल एक किताव में लिखा है। उन्हें सीने-पिरोने और घर के काम-काजों से वडा प्रेम है। अन्य स्त्रियों के कष्ट दूर करने और उन्हें सुख पहुॅचाने का वे सदा यत्न करती हैं। उन्हें अपनी मातृभाषा से वडा प्रेम है। अपने निज के ख़र्च से वे एक अनाथालय चलाती हैं। सन् १६०० के घोर दुर्भिक्ष में नाना कष्ट सहकर उन्होंने भूखों मरती हुई प्रजा का कष्ट कम किया, इसी से महारानी विक्टोरिया ने उन्हें एक ऊॅची पदवी दी।

पत्र नं० २९—

सरला देवी—फ्रांस निवासिनी पण्डिता नील सिस टेनेंट।

पुरुषों की सभा में आदर पाने वाली गार्गी का यश तो मैंने सुना था, परन्तु अपनी आँखों से ऐसा दृश्य देखने का अवसर मुझे एक बार ही मिला है। जो कुछ मैंने देखा वह मुझे इस जीवन में कभी न भूलेगा। जिन दिनों में लखनऊ में था उन्हीं दिनों की बात है। "विद्या सागर" लाइब्रेरी में मैंने एक विज्ञापन देखा जिसका आशय यह था—लखनऊ के बङ्गाली श्रीमती सरलादेवी को आज एक अभिनन्दनपत्र देंगे।

सरलादेवी उन दिनों "भारती' पत्रिका की सम्पादिका थीं, इसीसे मैं उनके नाम से परिचित था, आज अचानक उनके दर्शन होने का अवसर पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। नियत समय पर मैं सभा में पहुँचा। सब स्थान खचाखच भरा हुआ था। बङ्गालियों ने जो अभिनन्दनपत्र भेंट किया उसके उत्तर में श्रीमतीजी ने उचित शब्दों में धन्यवाद दिया और फिर पियानो बाजे पर "वन्देमातरम्' गीत गाया जिसको सुन कर दर्शक अवाक् होगये, सब का कंठ प्रेम से घिर गया। उसी समय मुझे यह

यान हुआ कि यदि अपने देश की लड़कियाँ पूर्ण शिक्षिता नाई जायँ तो क्यों न सब प्रतिष्ठित घरों में ऐसी ही विदुषी दृष्टि पड़ने लगें।

श्रीमती सरला-देवी ने इस देश की स्त्रियों के उपकार के लिए "भारत स्त्री महामण्डल" नाम की एक बड़ी सभा स्थापित की है। जिस समय उसकी कलकत्ते वाली शाखा सभा का वार्षिकोत्सव हुआ था उस समय बाँकीपुर, अमरावती, लाहौर, लखनऊ मदरास तक की महिलाएँ उसमें उपस्थित थीं। महा-मण्डल को स्थापित हुए थोड़ा ही समय हुआ है। अब उसकी शाखाएं लाहौर, इलाहाबाद, दिल्ली, फ़िरोज़पुर, कराँची, हैदराबाद (सिन्ध), कलकत्ता, हजारीबाग, मेदिनीपुर में भी खुल गई हैं।

महामण्डल की ओर से कलकत्ते में सयानी लड़कियों की शिक्षा के लिए उन को घर पर ही पढाने का प्रबन्ध किया गया है। इस कार्य में २००) मासिक ख़र्च किया जाता है।

तुम्हे यह जान कर आश्चर्य होगा कि संस्कृत का आदर दूसरी विलायतों में भी है। मेडम एलैक्ज़ेंडा डेविड नील नाम की एक विदुषी फ्रांस देश में अध्यापिका का काम करती थी उसको वहाँ की गवर्नमेंट ने वेदान्त-शिक्षा ग्रहण करने के लिए इस देश में भेजा था।

अमरीका की (कुमारी) टेनेंट ने इस देश के सब बड़े शहरों में घूम कर जो निश्चय किया वह इस प्रकार है—

इस देश में स्त्रियों की शिक्षा के लिए विशेष उद्योग नहीं होता, यहाँ के पुरुषों में स्त्री-शिक्षा का उत्साह ही नहीं है। वे नहीं जानते कि नारी जाति को उन्नत किये बिना वे अपनी उन्नति नहीं कर सकते। लड़कियों को गृहप्रबन्ध, चित्रविद्या सूचिकार्य, रन्धन आदि की शिक्षा अवश्य देना चाहिए।

गहने से स्त्रियाँ जो लाभ समझती हैं वह दूसरी बात है; परन्तु, इसमें सन्देह नहीं कि गहनेवाली स्त्री को सर्वदा लुटने का डर रहता है। एक ऐसा सन्दूक तैयार किया गया है जिसको उठाते ही घोर शब्द होने लगता है, जबतक स्वामी युक्ति से बन्द न किया जाय तबतक यह शब्द होता ही रहेगा। चोर घबरा उठेगा। मैं समझता हूँ कि इसकी खूब बिक्री होगी। जो स्त्रियाँ केवल विद्या रूपी भूषण धारण करती हैं उन्हें ऐसे झंझट में कभी न पड़ना चाहिए।

भूगोल-प्रकरण
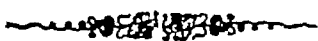
संयुक्त प्रान्त का संक्षिप्त वर्णन (१)

पत्र न० ३०—

जन-संख्या—रेलमार्ग—रेल से लाभ-हानि—शहर बसने-उजड़ने के कारण—परिवार-प्रथा—मकानों की बनावट—फ़सल—नदी-नहरें—मजदूरी—कलकारखाने ।

सन् १९११ में दस मार्च की रात्रि को जो मनुष्य गणना हुई थी उसका तुम्हें ध्यान होगा । उस दिन तुम्हारे वोर्डिंग हौस में लडकियों को अपने-अपने सम्बन्ध में अनेक बातें बतानी पड़ी होंगी । यथा—नाम, धर्म, उम्र, ब्याही, विधवा अथवा क्वारी, जाति, पेशा, मातृ भाषा, जन्मभूमि, पढ़ी-लिखी कि निरक्षरा, अँगरेज़ी भाषा जानती हो कि नहीं ? पगली, बहरी, गूँगी, अंधी, अथवा कोढ़िन तो नहीं हो । यही बातें पुरुषों से भी पूछी गई थीं । अब सरकार ने उन सब बातों को एकत्र करके प्रकाशित किया है । हमारे संयुक्त प्रान्त की रिपोर्ट अलग निकली है । जिसके पढ़ने से अनेक बातें ज्ञात होती हैं । संयुक्त प्रान्त का क्षेत्र फल १०७२६७ वर्ग मील है । इसमें से रियासतों को छोड़

कर ४ करोड ७१ लाख ८२ हजार ४८ मनुष्य रहते है। पश्चिम की अपेक्षा पूर्व में घनी बस्ती हैं। कारण यह है कि सरकारी राज्य इस प्रान्त में पूर्व की ओर से प्रारम्भ हुआ था। बनारस का इलाका सन् १७७५ में ही अँगरेज़ों के अधिकार में आगया था। अँगरेजी राज्य में प्रजा को बहुत सुख मिलता था, इसी कारण उस समय से ही लोग वहाँ अधिक बसने लगे थे। अवध प्रान्त हमेशा से बहुत घना बसता रहा है क्योंकि यहाँ की धरती बहुत ही उपजाऊ रहा है। उच्च जातियाँ और धन-सम्पन्न लोग पश्चिम में ही अधिक हैं। हमारे इस संयुक्त प्रान्त में पाँच रेलों का सिलसिला है। गोरखपुर से छोटी लैन लखनऊ होती हुई कानपुर जाती है। अँगरेजी इसका नाम Bengal North-Western Railway है। इसकी शाखाएँ काशी, प्रयाग, और अयोध्या तक जाती हैं। दूसरी बडी लैन है जो मुगलसराय से लखनऊ होती हुई सहारनपुर तक जाती है। इसमें से भी इलाहाबाद और फैज़ाबाद को शाखा जाती हैं। देहरादून को और अलीगढ़ को शाखा निकलती हैं, इसकी अन्य शाखा भी है। यह अवध रुहेलखण्ड रेलवे कहलाती है। तीसरी लाइन छोटी गाडियों की है जो अनवरगञ्ज कानपुर से आगरे तक है। अँगरेजी में इसका नाम *Bombay Barauda* and Central India Railway है। मथुरा से भरतपुर को इस रेल की नई लैन खुली है जिसको नागदा लैन कहते हैं। चौथी लैन ईस्ट इण्डिया रेल है जो कलकत्ते से चलकर मुग़लसराय,

इलाहाबाद, कानपुर गाज़ियाबाद होती हुई कालका-शिमला लैन में जा मिलती है। पाँचवीं लैन बम्बई की बड़ी लैन है जिसको जी० आई० पी० अर्थात् Great Indian Peninsul› Railway कहते हैं। यह लैन बम्बई से झाँसी, आगरा और मथुरा होती हुई दिल्ली तक जाती है। झाँसी से इसकी एक शाखा कानपुर में भी मिली है। इनके सिवाय पंजाब लेन जिसका अँगरेजी नाम North Wostern Railway है दिल्ली से गाज़ियाबाद, मेरठ और सहारनपुर होती हुई पंजाब को चली जाती है।

यद्यपि यह बात सच है कि रेल के कारण देशी सवारियाँ और पैदल सड़कों के दूकानदारों का रोज़गार बहुत घट गया है। सड़कों पर जो रौनक़ पहले देखने में आती थी वह नहीं है। इन यात्रियों की ख़ातिर धनी लोगों ने सड़क के किनारे अनेक बाग़ लगाये थे, धर्मशाला बनवाईं थीं, जगह जगह पर प्याऊ थीं, पुलिस की चौकियाँ थीं अब उन सब की कुछ आवश्यकता नहीं रही और वे सब उजाड़ और बेमरम्मत होने के कारण खंडहर रूप में पड़ी हैं। केवल एक गाँव से दूसरे गाँव को जानेवाले लोग ही कभी-कभी इन सड़कों पर दिखाई देते हैं, कभी कभी बरातें इन सड़कों पर होकर जाती-आती हैं। आजकल मोटर गाड़ियाँ इन सड़कों पर धूल उड़ाती हुई देखी जाती हैं। इसके सिवाय सूनसान रहा करता है। बड़े-बड़े तीर्थों पर पहले लोग इक्के और गाड़ियों पर ही चढ़ कर आते थे, अब वह बात नहीं रही। बड़े-बड़े ज़मदार रथ, बहली, इक्के रक्खा करते थे। अब उनको

इनकी आवश्यकता नहीं रही। रेल के चलने से यह रौनक़ तो गई, परन्तु, इसके साथ कई उपकार भी हुए हैं। रेल खुल जाने से शहरों की आबादी बहुत बढ़ गई है। गाँव वालों को जब खेती में नुकसान होता है तब वे शहरों में ही जा बसते हैं। अब माल का एक जगह से दूसरी जगह जाना भी बहुत सुगम होगया। वर्षा न होने के कारण जब अकाल पड़ जाता है तब लोग अन्न के लिए भूखे नहीं मरते। रेल के द्वारा दूसरे प्रान्तों से मनमाना अन्न आजाता है। पुराने ज़माने में जब खेतों में अनाज पैदा न होता था तब लोग भूखों मर जाते थे अथवा घर बार छोड़ कर उन शहरों में चले जाते थे जहाँ अन्न अधिक उत्पन्न हुआ हो। अब केवल उन्हीं को कष्ट होता है जिनके पास धन नहीं है। धनवाले के लिए सब तरह के पदार्थ रेल द्वारा सर्वदा विद्यमान रहते हैं।

हमारे प्रान्त में शहर बसने के तीन मुख्य कारण हैं। सबसे प्रथम वे शहर हैं जिनको बादशाहों ने अपनी पसन्द से बसाया था। लखनऊ को नवाब आसिफुद्दौला ने रौनक दी। इससे पहले फ़ैज़ाबाद अवध की राजधानी था। आगरे को अकबर ने प्रसिद्ध किया। इसी प्रकार जौनपुर, बरेली, शाहजहाँपुर, फर्रुख़ाबाद, मुरादाबाद, सहारनपुर, बदायूँ, अमरोहा, सम्भल, बहराइच, बाँदा शाहाबाद आदि मुसलमान अधिकारियों द्वारा बसाए गये। अब तक इन शहरों में कई जगह पुराने ख़ानदानों के रईस मिलते हैं। दूसरे वे शहर हैं जो तीर्थस्थान होने के

कारण बढे हैं, यथाः—काशी, प्रयाग, अयोध्या, मथुरा विन्ध्याचल, हरिद्वार आदि। तीसरे शहर वे हैं जो व्यापार का केन्द्र-स्थान होने के कारण बढ़ती को पहुँचे हैं। उनमें केवल कानपुर ही एक उदाहरण है। अन्य शहर भी व्यापार के कारण जीते हुए हैं, जहाँ से व्यापार उठ गया है वहाँ की रौनक़ भी घट गई है। फ़र्रुखाबाद पहले बड़ा आबाद था। उसका व्यापार घट जाने से उसका वैभव भी कम हो गया। नवाबों के ज़माने में लखनऊ ख़ूब आबाद था। परन्तु अब उसकी शोभा व्यापार के कारण ही बढ़ रही है। यहाँ कई कल-कारख़ाने खुल गये हैं और चारों ओर से रेल द्वारा माल आता-जाता है। पहले केवल एक नवाब था, अब व्यापार से लाभ उठा कर अनेक धनी लोग यहाँ बस रहे हैं और सब प्रकार की उन्नति हो रही है। दूसरे शहरों का भी यही हाल है। व्यापार के कारण उनकी सम्पन्नता दिन-दिन बढ़ती जाती है। हाथरस पहले एक छोटा सा क़सबा था, परन्तु, अब व्यापार का विस्तार होने से कानपुर के समान होता जाता है। नये-नये पुतली घर बनते जाते हैं।

शहर के रहने वालों में मुसलमानों की सख्या बहुत पाई जाती है। कारण यह है कि मुसलमानों ने अपना प्रभाव अधिकतर शहरों ही में रक्खा। किसानों को जो हिन्दू थे किसी तरह से नहीं छेडा, वे बराबर अपना खेत जोतते रहे और बादशाहों को लगान देते रहे। मुसलमानी धर्म की बढ़वारी शहरों ही में रही। अमीर-उमरा कितने ही गाँवों के मालिक

होते थे, परन्तु वे रहते शहरों ही में थे। जिन शहरों में मुसल-मानों का अधिक प्रभाव नहीं हुआ वहां अब भी मुसलमान कम हैं।

हमारे देश में कई परिवार एक ही घर में रहा करते हैं और चेष्टा होती है कि सब अपनी कमाई घर में बड़े को दें और सब एक ही चूल्हे पर खायें, परन्तु, घरों में जब कलह बढ़ जाती है तब परिवार अलग बट जाता है। कहीं-कहीं दूकान या व्यापार साथ-साथ रहता है, रोटी अलग होती है। बहुतेरे नौकरी करने चले जाते हैं और इस तरह अलग हो जाते हैं। परिवार अलग होने का सबसे ज़बर्दस्त कारण स्त्रियाँ हैं जो सास अथवा जिठानी के आश्रय में रहना पसन्द नहीं करतीं।

जहाँ पत्थरों का सुभीता है वहाँ मकान पत्थर से ही बने हुए होते हैं। पहाड़ी इलाक़ों, बुंदेलखण्ड तथा आगरे और मथुरा में मकान बनाने में प्रायः पत्थर काम में लाये जाते हैं। जहाँ पत्थर नहीं मिलते वहाँ पक्की ईंटों के घर बनते हैं। कोई कोई लोग कच्ची ईंटों से भी अपने घर बना लेते हैं। गरीब लोग मट्टी की दीवार बना कर उसे पाट लेते हैं अथवा खपरैल के छप्पर डाल लेते हैं। छप्पर फूस के भी होते हैं। पक्की ईंटों का मकान अमीरी की निशानी है। मट्टी की दीवार ऊपर से लीप दी जाती है, ऐसा करने से उन पर वर्षा के पानी का असर कम होता है। कहीं-कहीं केवल टट्टियाँ खड़ी करके ऊपर से छप्पर डाल लेते हैं। घर साधारणतः छोटे-छोटे होते हैं और कोठरी बहुत सकरी होती हैं, उनमें रोशनदान नहीं होते,

भीतर अंधेरा रहता है। गाँव में छत के ऊपर अट्टा अथवा अटारी होती है, उसमें बहुत से किसान नाज, कपास अथवा भूसा रख देते है। गर्मियों में यह जगह सोने के काम भी आती है। शहरों में बड़ी-बड़ी हवेलियाँ होती हैं, उनमें बड़े-बड़े कमरे होते है। एक हवेली में कई-कई परिवार रहते है। अँगरेज़ों के यहाँ परिवार शब्द का अर्थ केवल उस कुटुम्ब से है जिसमें स्त्री, उसका पति और उसके बच्चे हों। हमारे देश में एक परिवार में कई स्त्रियाँ, उनके पति और उनके बच्चे शामिल होते हैं। साधारणतः एक परिवार में ५ प्राणी होते है। कही तो केवल मियाँ-बीबी दो ही एक घर में रहते है और कहीं सास-ससुर, देवरानी-जेठानी अपने बाल बच्चों समेत एक ही जगह होती हैं; परन्तु, सब को मिला कर हिसाब फैलाने से एक परिवार में ५ ही प्राणी आते हैं।

यदि समय पर प्रति वर्ष वर्षा हो जाया करे तो भारतवर्ष के समान धन, धान्यपूर्ण देश इस पृथ्वी पर और कोई भी न रहे। जुलाई, अगस्त और सितम्बर में अच्छी वर्षा होकर फिर थोड़ा सा पानी दिसम्बर में बरस जाया करे। अच्छी फसल को बरबाद करने का एक दैवीकारण शीत की अधिकता है। सन् १६०५ के आरम्भ में मैंने झेलम से लखनऊ तक पैदल यात्रा की थी, उस समय देखा था कि खेतों में फ़सल बड़ी ही अच्छी थी। उस वर्ष वर्षा इच्छानुसार हो हुई थी, परन्तु अचानक शीत की अधिकता होकर ठण्डी वायु बड़े प्रबल वेग से बहने

लगी, फल यह हुआ कि हरे खेतों का रंग एक दम सफ़ेद हो गया। किसानों को उस वर्ष जो मानसिक कष्ट हुआ था वह कहा नहीं जा सकता। अरहर की फसल तो प्रायः प्रतिवर्ष ही सर्दी से मारी जाती है। चनों को भी नुक़सान पहुँच जाया करता है। वर्षा ऋतु ठीक होने से दोनों फसल बन जाती हैं। जो अन्न कातिक में कटता है वह ख़रीफ और जो वैसाख सिमटता है वह रबी की फसल कहलाता है। सूखा से बचाने का उपाय चतुर अँगरेजों ने नहर निकाल कर कर दिया है। ३५ लाख एकड़ धरती नहरों से सींचने का प्रबन्ध विद्यमान है। गंगा, जमुना के सिवाय केन, बेतवा, आदि नदियों से भी नहरें निकाल दी हैं। पहले इस देश में लोग नील की खेती बहुत करते थे। नील का रंग यहीं तैयार होता था। जब से यूरोप के एक विद्वान् ने रसायन क्रिया से इस रंग का बनाना सुगम कर दिया है तब से नील की खेती बहुत ही कम हो गई है। चावल, मक्का, और ज्वार ख़रीफ की फ़सल के नाज हैं और जौ गेहूँ, चना रब्बी की फसल के मोटे नाज हैं। किसान को रुपया देने वाली खेती ऊख, कपास और अफीम की है। सरसों से भी उसको बहुत रुपया मिलता है। तुमने सुना होगा कि अब चीन वालों ने अफीम न खाने का मसूबा कर लिया है। हमारे देश से बहुत सी अफ़ीम चीन को ही जाती है यदि वहाँ इसकी खपत कम हो जायगी तो फिर इस देश में फीम का बोना भी कम हो जायगा।

मुझको अच्छी तरह याद है कि पहले ३) मासिक पर खेत के लिए मज़दूर मिल जाता था, उसको जब कलेऊ के लिए एक रोटी मिल जाती थी तो वह और भी .खुश होता था। अब मज़दूरी बहुत बढ़ गई है। कभी कभी तो ५-६ आने रोज़ पर भी मजदूर मिलना कठिन हो जाता है। इसका एक कारण तो यह है कि प्लेग के कारण गाँव के गाँव ख़ाली हो गये हैं। दूसरे शहरों में कल-कारखाने खुल जाने से बहुत से गाँव के ग़रीब लोग शहरों मे चले गये हैं। ग़रीब किसान प्रायः उतनी ही खेती करते है जिसे वे अपने परिवार की सहायता से स्वयं कर सकें। अदला-बदला भी कर लेते हैं। एक किसान दूसरे किसान का काम बदले पर कर देते हैं। हमारे यहाँ ऐसे भी अभिमानी ब्राह्मण थे जो हल जोतना पाप समझते थे और सब काम मज़दूरों से कराते थे। परन्तु जब से मज़दूरी बढ़ गई है और लोगों को विद्या-प्रचार द्वारा यह भी निश्चय हो गया है कि हल जोतना बुरा कर्म नहीं है तबसे वे अपने लड़के वालों को कृषिकार्य में लगाने लगे हैं। मज़दूरों के अभाव से ही अब खेती को यूरोपियन ढंग से करने का शौक़ बढ़ता जाता है। ऐसे औज़ार और कलें लोग काम में लाने के उत्सुक हैं जिनसे थोड़े आदमियों द्वारा बहुत काम निकले। आज कल अकाल पड़ने पर भी मज़दूर दुखी नहीं होते क्योंकि उनको मज़दूरी तो .खूब मिलती है और अन्न का भाव प्रायः एक सा ही रहता है। प्लेग के कारण गाँव के गाँव ख़ाली हो गये है, जिन लोगों का काम

मजदूरी पेशा है उनमें से बहुतेरे महामारी की भेंट हो गये हैं। यह भी कारण है कि अब मजदूर महँगी उजरत पर मिलते हैं। सार यह है कि आजकल यदि कोई मेहनत करना चाहे तो भूखा कदापि नहीं मर सकता। बाजार में जो मोटे-ताजे आदमी भीख माँगते फिरते हैं और अपने को कंगाल बनाते हैं उनका सिद्धान्त यह है—"करे मजूरा आवे चोट, सब ते भले भीख के रोट।"

कल-कारखानों की अब बहुत बढ़ोतरी है। नील का कारबार तो अस्त हो चला, परन्तु, रुई के कारखाने बढ़ते जाते हैं। पिछले दस वर्षों में यह रोजगार दूना हो गया है। कपास में से रुई कल से निकलती है, रुई को कल से दबा कर गठरियाँ बनाते और अन्य देशों को भेजते हैं। रुई का कल से सूत काता जाता है, कल से ही कपड़े बुने जाते हैं। घास-भूसा भी पेच के द्वारा दबा कर रवाना होता है। लोहे तथा पीतल के सामान ढालने के कारखाने भी खुल गये हैं। चमड़े को साफ करना और रँगना भी यहाँ होने लगा है। कल के द्वारा तेल निकालने के कोल्हू चलते हैं। दरी और गलीचों के भी कारखाने बढ़ गये हैं। इस प्रान्त में जितने का माल आता है उसकी अपेक्षा अधिक माल यहाँ से जाता है। रेल के द्वारा आमद-रफ्त का हिसाब जाँचने से ऐसा निश्चय हुआ है कि इस प्रान्त से जितना रुपया बाहर जाता है उसकी अपेक्षा यहाँ की उपज का दाम अधिक आता है। इससे सिद्ध होता है कि यहाँ धन बढ़वारी पर है।

संयुक्त प्रान्त का संक्षिप्त वर्णन (२)

धर्मभेद—ईसाई—मुसलमान—हिन्दुओं में वर्णविभाग—पौराणिक धर्म—आर्य समाज—अछूत जातियाँ।

पत्र नं० ३१—

संयुक्त प्रान्त में मुख्य करके हिन्दू, मुसलमान, ईसाई तीन धर्म्मों के मनुष्य पाये जाते हैं। ब्राह्मण भक्त, आर्य्य, ब्राह्म, जैन, सिक्ख और बौद्ध इस देश के पुराने धर्म है। मुसलमान, ईसाई, पारसी और यहूदी लोगों का धर्म्म भारतवर्ष से वाहर का है। ब्राह्मण भक्त अथवा पौराणिक लोग ४ करोड ७ लाख ५ हज़ार ३ सौ ५३ हैं। आर्य समाजियों की सख्या १ लाख ३१ हजार ६३८ है, मुसलमान ६६ लाख ४ हज़ार ७ सौ ३१ हैं। ईसाई एक लाख ७६ हज़ार ६ सौ ६४ हैं। जैनी ७५७३५, सिक्ख १५, १८६ हैं। अन्य धर्म वालों की संख्या थोडी है। बौद्ध केवल कमाऊँ के इलाक़े में पाये जाते है। मेरठ, रुहेलखण्ड, आगरा, फ़र्रुखाबाद, जौनपुर, अवध में मुसलमानों की भरमार है। आर्य और ईसाइयों की अधिकता मेरठ, आगरा और रुहेलखण्ड में पाई गई है। इतिहास पढ़ने वालों से यह वात छिपी नहीं है कि वादशाह अक़-वर सव धर्मवालों का आदर करता था। उसी समय सन् १५८० में रोमन कैथलिक सम्प्रदाय के ईसाई आगरे में आये,

सब बादशाह उनको आदर करते रहे, केवल शाहजहाँ इनसे राजी न था। जिस दिन से ये आगरे पहुँचे उस दिन से इनका सिलसिला जारी ही रहा। मुसलमानों का राज्य उठने पर जब ईसाइयों का शासन होगया तब तो इनकी रक्षा खूब हो रही। वर्तमान समय में ईसाई निरादर की दृष्टि से नहीं देखे जाते। शूद्र यदि ईसाई हो जायँ तो फिर उतना बुरा नहीं समझा जाता। नीच जातियों के लोग अनेक ईसाई हैं और वे अब घृणित दृष्टि से नहीं देखे जाते। मुसलमानों की बढ़वारी का कारण यह है कि ये लोग विशेष कर शहरों में रहते हैं जहाँ रोजगार का कभी घाटा नहीं होता। अकाल-दुकाल का प्रभाव भी उनको इतना नुकसान नहीं पहुँचाता जितना हिन्दू किसानों पर पहुँचाता है। खाना भी इनका पुष्टिकारक होता है। भङ्ग, गाँजा, चड्डू मुसलमान कम पीते हैं। इनके यहाँ बाल-विवाह की बुरी रीति नहीं है। यह बात मालूम हुई है कि ७० वर्ष की उम्रवालों में हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमान बहुत हैं। शादी-गमी के ख़र्च पर हिन्दू बहुत तबाह होते हैं। मुसलमान इस दुःख से बचे हुए हैं। प्लेग से निस्सन्देह मुसलमानस्त्रियाँ अधिक मरी हैं। कारण यह है कि गरीब मुसलमान भी अपनी स्त्रियों को पर्दे से बाहर निकालना बहुत बुरा समझते हैं। अन्य लोग तो भाग कर दूसरी जगह चले जाते हैं परन्तु गरीब पर्देदार मुसलमान के लिए यह बहुत मुश्किल होता है कि वह अपनी बीवी को पर्दे में से निकाल कर कहीं ले जाय। हिन्दुओं में से आजकल मुसलमान बहुत

कम होते हैं। कोई-कोई नीच जाति के लोग भले ही मुसलमान हुए हों, परन्तु, जो होते है वे धर्म को ख़ातिर नहीं होते केवल किसी ख़ास मतलव से होते हैं। हिन्दुओं में से आर्य और ईसाई वहुत होते हैं।

भारतवर्ष में वैदिक काल से केवल चार वर्ण हैं। ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र। परन्तु, आजकल पेशे के लिहाज से अनेक जातियाँ वन गई है। यथा—सुनार (स्वर्णकार) जो सोने का काम करते है। धोवी जो कपडे धोते है, भडभूंजा जो भाड में भूँजते हैं, हलवाई जो हलवा वनाने हैं, लोहार जो लोहे का काम करते हैं, धुनिया जो रुई धुनते है, चमार जो चमड़े का काम करते हैं, तमोली जो ताम्बूल (पान) वेंचते हैं, कुम्हार (कुंभकार) जो कुम्भ अर्थात् घडे वनाते है, तेली जो तेल निकालते हैं, ग्वाला-गायवाला, जोइसी (ज्योतिषो) ज्योतिष जानने वाला आदि आदि। इन लोगों में पठन-पाठन का अभाव होने से धर्म के प्राचीन विचार कम हो गये, अपना अलग समुदाय वनाकर आपस में ही सम्बन्ध करने लगे और इस तरह से कितनी ही विरादरी हो गईं।

हिन्दू शब्द असल में इस देश के रहने वालों के लिए है। जिस तरह से चीन के रहने वाले चीनो, जापान के रहने वाले जापानी उसी तरह हिन्दोस्तान के हिन्दू। सिन्धु नदी इस देश की एक सीमा है। सिंधु नदी के पार रहने वाले हिन्दू कहलाये। क्योंकि स और ह का वदला हो जाता

है। जैसे सप्ताह और हफ्ता, मास और माह। अँगरेजी में सिन्ध का नाम इंडस है और इसीसे यूरोप के लोग इस लोगों के देश को इण्डिया कहते हैं। हिन्दू शब्द में धर्म की कोई बात नहीं है। परन्तु, अब यह बात नहीं रही। हिन्दू होने के लिए तीन बातें चाहिएँ। हिन्दोस्तान में हिन्दू के घर पैदा हुआ हो, किसी जाति में हो और एक ख़ास धर्म को मानता हो। केवल धर्म से हिन्दू नहीं हो सकता। काशी की मिसेज़ बसन्त बहुत दिन से हिन्दू धर्म पर चल रही है, परन्तु, वे हिन्दू नहीं हो सकतीं। पारसी इस देश में बहुत दिनों से रहते हैं तो भी हिन्दू नहीं है। जैनी यद्यपि यहाँ पैदा भी हुए हैं, परन्तु, उनका हिन्दू धर्म के सिद्धान्तों से भेद है अतः वे अलग समझे जाते हैं। सिद्धान्तों में बड़ी गड़बड़ी है। न एक विश्वास है, न एक पूजा। एक परमेश्वर पर विश्वास करने वाले भी विद्यमान हैं, और और देवताओं में विश्वास रखने वाले भी विद्यमान है। भारतवर्ष से बाहर भी जितने धर्म-विश्वास हैं उन सब का अंकुर यहाँ मौजूद है। हिन्दुओं में विश्वास पर इतनी लड़ाई नहीं है जितनी जाति-पाँति के बन्धन पर है। ब्राह्मणों का आदर सर्वोपरि है। गौ को पवित्र समझना भी हिन्दुओं के लिए परमावश्यक है। पढ़े-लिखे मनुष्य पुराण और शास्त्र पढ़ कर गो-ब्राह्मण के भक्त होते ही हैं, परन्तु, अनपढ़ नीच जातियों में भी इन दोनों बातों पर श्रद्धा रखना सच्चा हिन्दू बनना है। अच्छा हिन्दू वही समझा जाता है जिसका पुरो-

हित ब्राह्मण हो, उसने ब्राह्मण से मंत्रोपदेश लिया हो, पुराण लिखित देवताओं को पूजता हो, मदिरों मे प्रवेश करने का अधिकार रखता हो, मुर्दे जलाता हो। किसी किसी पंथ में समाधि के भीतर भी मुर्दे रखते है।

पौराणिक विश्वास के अनुसार परमात्मा के तीन रूप हैं। ब्रह्मा, विष्णु और महेश। ब्रह्मा को अपना इष्ट मानकर चलने वाले सज्जनों का अभाव है। विष्णु और शिव के उपासक बहुत हैं। विष्णु के उपासक वैष्णव कहलाते हैं और शिव का इष्ट रखने वाले शैव। इस संसार को छोड देने पर आत्मा की क्या दशा होती है? वैष्णव समझते है कि वे वैकुण्ठ को जायँगे, शैव कैलाश की आशा करते हैं। परन्तु, पापियों को नर्क-यातना भुगतनी होगी। नर्क का विस्तारपूर्वक वर्णन गरुड़ पुराण मे है। मोक्ष उसी मनुष्य का संभव है जिसने कोई भी पाप न किया हो। अन्य लोगों को नर्क और स्वर्ग भुगत कर फिर इसी लोक में आना पड़ता है।

शैव और वैष्णवों के सिवाय अब नये-नये नाम भी निकले है। यथा-सनातनी, वेदान्ती, वैदिक। ये सब वे लोग हैं जो अपने को आर्य-समाज के विरुद्ध होना प्रकाशित करना चाहते हैं। नीच जातियों में कई शाखा धर्म-विश्वास की हैं। यथा कालू-पंथी, कहार, चमार और गड़रिये इस पथ में विशेष हैं। भगियों का गुरु लाल वेग है, उसे लाल गुरु भी कहते है। मियाँ साहब, जाहिर पीर, गूंगा पीर, भूमिया इनको पूजने वाले भी इस प्रान्त

में है। बढ़ई और लुहार विश्वकर्मा को अपना पूजनीय समझते हैं। राधास्वामी नाम का एक और मत प्रचलित हुआ है।

हिन्दू धर्म की ऐसी दुर्दशा पर स्वामी दयानन्द सरस्वती का ध्यान गया। उनका जन्म गुजरात में हुआ था, परन्तु, शिक्षा मथुराजी में पाई थी। शिक्षा पाकर उन्होंने खूब विचरण किया। कलकत्ता और बम्बई के बीच के सब देश की सैर की। उन्हें यह निश्चय होगया कि इस देश में अविद्या के प्रताप से मूर्ति-पूजा और मिथ्या विश्वास फैल गये हैं। इनको वेद की शिक्षा दिये बिना इनका उद्धार न होगा। उन्होंने लोगों को बताया कि केवल एक परमात्मा ही पूजनीय है जिसका ज्ञान वेद में है। भागवत और पुराण लोगों की मनगढ़न्त पुस्तकें हैं। मुक्ति का साधन शुभ कर्म है। न्हाने-धोने और तीर्थों में फिरने से मुक्ति न होगी। गाय मनुष्य के लिए बड़ा लाभदायक जीव है, उसका मारना बड़ा हानिकारक है। पहले पहल सन् १८७५ में आर्य-समाज स्थापित हुआ जो बम्बई में खुला। सन् १८८३ में जब स्वामी दयानन्द सरस्वती मरे तब ३०० समाज स्थापित हो चुके थे। अब अकेले संयुक्त प्रान्त में २६० सभा हैं, ७३ उपदेशक दूर दूर जाकर लोगों के सन्देह दूर करते हैं, बिगड़े हुए धर्म के दोष दिखाते हैं और आर्यों का प्राचीन गौरव दरसाते हैं। इस प्रान्त में ५ गुरुकुल हैं। वृन्दावन, सिकन्दराबाद, बदायूं, बिलारसी और ज्वालापुर। इनमें पढ़कर जब विद्यार्थी निकलेंगे और उपदेश का काम करेंगे तब

आर्य-समाज का और भी प्रभाव वढेगा। कन्याओं के लिए पाठशाला भी हैं। आर्य लोग वाल-विवाह नहीं करते।

संयुक्तप्रान्त में सवसे पहला हमला मुसलमान वादशाह महमूद गज़नवी ने किया था। उन दिनों मुसलमान केवल लूट-पाट के लिए आते थे; परन्तु, साथ ही वहुतों को मुसलमान भी वना जाते थे। मुगलों से पहले जितने वादशाह हुए वे लोगों को ज़वर्दस्ती से मुसलमान वनाते थे। अव तक ऐसी अनेक जातियाँ मौज़ूद है जो आधे व्यवहार हिन्दुओं के और आधे मुसलमानों के पालती है। आगरे के आस-पास मलकाने ऐसे ही लोग हैं। मुसलमानों में शीया और सुन्नी दो हैं। वाज़ मुसलमान अपने को वहावी कहते हैं, वाज़ इमानी हैं। अली के मानने वाले हैदरी कहलाते हैं। कुछ ऐसे लोग भी हैं जो अपने को अलाउद्दीनमुहम्मद गोरी के वश में जन्म लेने के कारण गोरी कहते हैं। यद्यपि मुसलमानों के धर्म में केवल अल्लाह और उसके पैगंवर हज़रत मुहम्मद साहव का मानना लिखा है, परन्तु, अव वे और और पीरों को भी मानने लगे हैं। आगरे के पास जो फ़तहपुर सीकरी है वहाँ शेख़ सलीम चिश्ती की दर्गाह है। हरसाल वहाँ अनेक मुसलमान पहुँचते हैं। जिस तरह अकवर ने फकीर की दुआ से जहाँगीर को पाया था उसी तरह अन्य लोग भी सन्तान पाने की प्रार्थना करते हैं। ईसाई हमारे प्रान्त में विशेष करके नीच जातियों में से होते हैं।

ईसाइयों का धर्म फैलाने के लिए यूरोप, अमरीका से आये

हुए अनेक दल काम कर रहे हैं। उन्होंने अनेक अनाथालय, अस्पताल और मदर्से खोल रक्खे हैं। स्त्रियों में ईसाई-धर्म फैलाने के लिए जनाना मिशन काम कर रहा है। यूरोपियन लेडियाँ घर-घर जाकर धर्मोपदेश देती हैं। इनका एक दल साल वेशन आरमी कहलाता है। भाषा में इनको मुक्तिदल अथवा मुक्ती फौज कहते हैं। ये अछूत जातियों में काम करते हैं। नीच जाति डोम, चमार, भङ्गी, कजर जिनको हिन्दू अछूत समझते हैं उनको सालवेशन आर्मी सुधारती है। गोरखपुर के पास एक डोम लोगों की वस्ती बसाई गई है। ये लोग पहले बड़े ज्वारी, चोर और शराबी थे। यहाँ रहकर इनके आचरण बहुत बदल गये। पहले इनका कोई खास काम न था अब वे कपड़ा बुनते हैं, जाल बुनते हैं, रस्से बटते हैं, बढ़ई का काम करते हैं। इन सब को मजदूरी सालवेशन आरमी देती है और उनके तैयार किये हुए माल को ख़ुद बेच देती है। अलीगढ़ के पास भी ऐसा ही एक गाँव है उसमें भी ऐसे ही लोगों की वस्ती बसाई गई है जो पहले चोरी-चकोरी पर गुजर करते थे। साल वेशन आर्मी के आधीन उनके भी आचरण सुधर गये हैं। जेल-ख़ाने से नीच जाति के मनुष्य जब निकलते हैं तब फिर चोरी ही करते हैं और फिर जेल जाते हैं क्योंकि उनको और रोज-गार कुछ आता ही नहीं। सालवेशन आर्मी से सरकार ने कहा कि एक ऐसा गाँव बसाया जाय जहाँ जेलख़ाने से छोड़े हुए कैदी रक्खे जायँ और उनको कुछ ऐसा काम सिखाया

जाय जिसके द्वारा वे अपना उदर-पालन कर सकें। साल्वेशन आर्मी ने ऐसा ही किया और लाट साहब के नाम पर उस गाँव का नाम हेवटपुर रक्खा। यहाँ उन छूटे हुए क़ैदियों से ग़लीचा, दरी, मूढ़ा, कपड़ा, रस्सी बनाने का काम लिया जाता है। छोटे लड़के-लडकियों के लिए भी एक स्कूल है। इन बच्चों के बाप-दादों को कभी पढने-लिखने का सुभीता नहीं हुआ था। चोरी करना इनके यहाँ कुल परम्परा से चला आता था। एक मैन साहब और उनकी स्त्री ने पतित जाति के उद्धार के लिए अपना जीवन दे रक्खा है, वे किसी से घृणा नहीं करते, सब के साथ भाइयों का सा व्यवहार करते हैं। क्या इसके बराबर कोई और पुण्य-कार्य है ?

हर्ष है कि आर्य समाज का ध्यान भी अछूत जातियों की ओर गया है और वे उनके सुधार की चेष्टा कर रहे हैं। साल्वेशन आर्मी की तरह काम करने से उनको बड़ी सफलता प्राप्त होगी। हम लोग देशवासी होने के कारण विशेष प्रबन्ध कर सकते हैं। शूद्रों में विद्या-प्रचार का अभाव रहने के कारण ही उनकी यह सब दुर्गति हुई है। विद्या-प्रचार होने से अछूत जाति भी देश की प्यारी सन्तान बन सकेंगी।

संयुक्त प्रान्त का संक्षिप्त वर्णन (३)

पत्र न० ३२—

पचायत प्रथा—बिरादरी के ओहदेदार—अधिकार—दण्ड विधान—पेशेवालों की पंचायत—सामाजिक सुधार-सभाएँ—शिक्षा का विस्तार—स्त्री-शिक्षा।

तुमने सुना होगा कि अँगरेजों के देश में पचायत की सलाह से सब राज-काज चलते हैं। हमारे देश में भी भाई-बिरादरी के बहुत से काम पचायत की सलाह से होते हैं। जब कोई मनुष्य बुरा काम करता है तब बिरादरी उसका हुक्का-पानी बन्द कर देती है। उसको कोई ब्याह-शादी में नहीं बुलाता और न उसके यहाँ कोई जाता है। पंचायत शब्द से अर्थ तो यह निकलता है कि पाँच मनुष्यों की सलाह। कहावत है—'पाँच पञ्च तहाँ परमेश्वर" परन्तु, साधारणतः पचायतों में बहुत से आदमी बैठा करते हैं। घर-घर बुलावा जाता है। बड़े बूढ़ों की बात विशेष आदर से सुनी जाती है। बहुधा ऐसा देखा जाता है कि पचायत में बोलने का शऊर बुलावा थोड़े आदमियों को ही होता है और वे ही सब फैसला निबटाते हैं। पचायत में जो बात निर्णय होती है उसको सुनाने का काम सरपच का है। सरपच की आज्ञा से ही पंचायत इकट्ठी होती है। ये

सरपच सर्वदा के लिए नियत होते हैं। उनका नाम चौधरी भी है। आजकल सरकार ने छोटे-छोटे गाँवों के सरपंच का नाम मुखिया कर रक्खा है। कहीं-कहीं गाँव के धनी और बड़े जमींदार सरपंच होते हैं। इनको जुदी-जुदी जगह जुदे-जुदे नामों से पुकारते हैं। यथा—प्रधान, जमादार, मुक़द्दम। सरपंच के नीचे जो काम करता है उसके भी कई नाम हैं, जैसे—नाइब सरपंच, दरोगा, छड़ी बरदार, चोबदार, दिवान, मुख़्तार आदि आदि। हमारे यहाँ ऐसा क़ायदा है कि जब किसी के यहाँ शादी या गमी हो जाती है तब वह अपने भाइयों को इकट्ठा करता है, उस समय वह अर्ज करता है कि मेरी इच्छा इस काम में इतना इतना रुपया ख़र्च करने की है। भाई लोग कृपा करके आज्ञा दें। तब पच मजूर करते हैं और काम शुरू होता है। पचों की सलाह से ही निमत्रण दिया जाता है। जब किसी ने कोई बुरा काम किया होता है तो भी पंच इकट्ठे होकर उसका फ़ैसला करते हैं। पिछले दिनों हमारे पास के कसबे में ब्राह्मणों की कई पंचायतें हुई थीं। कारण यह था कि हमारे गाँव के एक भाट की मा मर गई थी, वह भाट छिका हुआ था। उसके यहाँ गाँव का तो कोई ब्राह्मण भोजन करने नहीं गया, परन्तु, क़सबे के ब्राह्मण जीम गये। जब यह चर्चा फैली तब पचायत बैठी और उसका हुक्का-पानी बन्द कर दिया गया। उन भाइयों पर भी पचायत बैठा करती है जो छिके हुओं के साथ रोटी-बेटी का व्यवहार कर लेते हैं। किसी ने किसी की सगाई छोड़ दी हो

और दूसरी जगह सम्बन्ध कर लिया हो तो बिरादरी पर पुकार करनी होती है। जो पुरुष अपनी स्त्री को खान-पान न देता हो तो भाई लोग उसे लाचार करते हैं। कहीं-कहीं पचायतें कर्ज का निबटारा भी कर देती हैं। मारपीट के झगड़े भी निबटा दिये जाते हैं। बनिये लोग भाव घटाने वाले को भी चौधरी के सामने लाते हैं। गाय और कुत्ता या बिल्ली को जान से मार देने वाले भी पंचों के सामने पेश होते हैं।

पचायत जो दड देती है उसका उदाहरण यह है—किसी से गाय मर गई तो ४० दिन तक भीख माँग कर खाय, अपने को हत्यारा पुकारे, गगा नहाय, ब्रह्म भोज दे और भाइयों को भोजन दे। किसी गैर का हुक्का पी लिया—गंगा जी नहाय ब्राह्मणों और भाइयों को भोजन करावे। सगाई छोड दी हो तो वह लाचार किया जाता है कि विवाह करे अथवा खर्च लौटावे।

कंजर एक नीच जाति के लोग हैं, उनमें भी गाय मारने की हत्या लगती है। यह जानने के लिए कि उसने गाय की हत्या जानबूझ कर की है अथवा नहीं, पचायत के सामने उसके हाथ पर ७ पीपल और ७ पान रख कर धागे के साथ बाँध दिये जाते हैं और एक खुरपी लाल, गरम करके ऊपर रख दी जाती है यदि हाथ जल जाय तो समझा जाता है कि उसने जानबूझ कर मारी है और दण्ड का भागी होता है। भीख माँगने में ब्राह्मण तो कभी नहीं शरमाते और इसको अपना पुराना पेशा

बताते हैं। परन्तु एक चमार जो भीख माँगता देखा गया तो भाइयों ने विरादरी से उसे छेक दिया और मरने में उसके यहाँ कोई नहीं गया। बेटे ने पचायत बुलाई और बाप के अपराध से अपने को बचाना चाहा। पंचों ने उसको विरादरी में तब लिया जब उससे ५ सीधे (भोजन का सामान) ब्राह्मणों को दिलवाये लिये और ४) दण्ड ले लिया। आजकल चमड़े की माँग बहुत है। बहुत से दुष्ट चमार चमड़े के लालच से विष देकर पशुओं को मार देते हैं। सरकार से ऐसे कई अपराधियों को सज़ा हुई है, जब वे छुट कर आते हैं तब पंचायत उनका हुक्का-पानी बन्द कर देती है और बहुत रुपया ख़र्च करने पर भी उनको क्षमा नहीं किया जाता।

दोषियों पर जो नकदी का दण्ड लगाया जाता है वह रुपया कई प्रकार से ख़र्च होता है। कहीं तो उसकी मिठाई मँगा कर बाँट दी जाती है। नीच जाति के पच शराब मँगा कर पीते-पिलाते हैं। कोई कोई पच रुपया एकत्र करके भाइयों को खिला देते हैं, कहीं ब्याह-शादियों में बर्तें जाने के लिए पंचायती बर्तन ख़रीदते हैं, फर्श बनाये जाते हैं। पचायती मकान की मरम्मत भी इसी रुपये से होती है। मन्दिर, कुआ, धर्मशाला की मरम्मत भी की जाती है। ब्रह्मभोज भी कर देते हैं।

जिस तरह जाति-जाति की पचायतें हैं उसी तरह पेशेवालों की भी पंचायतें हैं। एक गाँव के गूजरों ने कुछ नाइयों को अलग कर दिया, नाइयों ने पचायत करके उनकी हजामत

बनानी बन्द कर दी। एक शहर में नया इंतजाम यह हुआ कि मैला इकट्ठा करके बेच दिया जाय और पैसा शहर की सफाई में खर्च किया जाय। मेहतरों ने पंचायत करके शहर का झाडना छोड दिया, फल यह हुआ कि उनका जैसा दस्तूर चला आता था वही क़ायम रहा। पटे में एक दर्जी से किसी मनुष्य को किसी बात पर तकरार हो गई। दर्जी ने कटा हुआ कपडा वापिस दे दिया। कपडा लेकर भला मानुष सब शहर में फिरा, परन्तु, किसी दर्जी ने उसको बनाने के लिए ग्रहण नहीं किया। एक साहूकार का मकान बन रहा था जो भिश्ती मिट्टी में पानी डालता था एक दिन देर से आया। साहूकार ने उसको ऊँच-नीच कहा। भिश्ती काम छोडकर चला गया। साहूकार ने बडी चेष्टा की, परन्तु, कोई भी भिश्ती उसके यहाँ पानी देने न आया। लाचार होकर उसको क्षमा माँगनी पडी।

जब से स्वामी दयानन्द सरस्वती ने समाज जोडने की प्रथा निकाली है और लोगों का उनकी सामाजिक बुराइयों की तरफ ध्यान दिलाया है तब से प्रति वर्ष ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, कायस्थ, कुर्मी तथा अन्य जातियाँ अपनी-अपनी महासभा करने लगी हैं। इनमें पढे-लिखे लोग एकत्र होते और सामाजिक कुरीतियों की हानि कहते-सुनते हैं, परन्तु, इन सभाओं का असर अभी तक सर्व साधारण तक नहीं पहुँचा है। जैसा लोग अपने गाँव की पचायत को मान्य करते हैं उतना अभी

इन सभाओं को नहीं करने। इन सभाओं में बाल-विवाह रोकने, छूआछूत हटाने, विदेश जाने आदि विषयों पर व्याख्यान हुआ करते हैं। इनमें काम करने वाले वही लोग हैं जिनको स्वामी दयानन्द सरस्वती का उपदेश लग चुका है।

कहावत है "यथा राजा तथा प्रजा" जबसे इस देश में अँगरेज़ शासनकर्ता हुए हैं तबसे इस देश में शिक्षा फैलाने का बहुत ही प्रयत्न हो रहा है। क्योंकि वे जानते हैं कि शिक्षित प्रजा को वश में रखना बहुत सहज है। हमारे देश की जैसी दशा है वैसी कभी इङ्गलेण्ड को भी थी। वहाँ पर २५ लाख की आबादी होने पर भी केवल ८०३० विद्यार्थियों के पढ़ने का प्रबन्ध था। दूकानदारों के लड़के केवल "पक्का बनिये का है" समझ कर बहीखाते की योग्यता प्राप्त करने के लिए पढ़ते थे। सन् १६९९ में ईसाई धर्म-प्रचारकों के उद्योग से नये मदरसे खुले। तुमको यह बात ज्ञात न होगी कि एक समय यूरोप में भी ऐसा था जब कि पोप की आज्ञा राजा से भी बढ कर मानी जाती थी। लोग पादरियों पर बड़ा विश्वास करते थे क्योंकि लोग इतने पढे-लिखे न थे और पढे-लिखे बिना किसी में विचार शक्ति पैदा नहीं होती। जिस प्रकार अब आर्यसमाज के विस्तार के लिए शिक्षा उपयोगी समझी गई है उसी प्रकार इङ्गलैण्ड में भी लोगों को पोप के जाल से मुक्त करने के लिए उन्हें पढाना-लिखाना आवश्यक हुआ और चालीस हज़ार विद्यार्थियों को मुफ़्त पढ़ाने की व्यवस्था हुई। इन मदरसों में ग़रीब लोग पढते थे। १९वीं

शताब्दी ... आरम्भ में जान लॅंकेस्टर नाम के एक ...
अपने जीवन का यह उद्देश्य बनाया कि देश में ...
फैलाना सब से परमोत्तम कार्य है। पहले उसने ...
से दो मदरसे खोले। उन दिनों तीसरे जार्ज ...
राजा थे। वे लॅंकेस्टर के स्वार्थ त्याग और उत्साह ...
रीझे और इच्छा प्रकट की कि मेरे राज्य में ऐसा ...
न रहे जो धर्म पुस्तक न पढ़ सके। राजाज्ञा सुन कर लॅं...
कपडर ने उत्साह से व्याख्यान देने लगे और प्रजा से
... फिरदा करके साढ़े चार लाख रुपया इकट्ठा किया ...
इक... ...विद्यालय नये-नये स्थानों में खुले। अकेले ही प्राणी
विद्या... ... १४२०० दरिद्र बालक शिक्षा-लाभ करने लगे।
उद्योग से ... को ... पढने-लिखने लगे और पुराने विचार वाली
जब लोगों ...
सम्प्रदाय के दोषों ... को देखने लगे तो धर्मसमाजी लोग
चौ... हुए, उनको ... भय हुआ कि यदि गरीब लोग भी
... तो फिर सर्वसाधारण में उनका प्रभाव बहुत कम
जायगा और सब लोग विचार, बुद्धि छोड़ कर अन्धभ...
उनकी बातों को नहीं मानेंगे। जिन लोगों का ऐसा विश्वा...
वे केथोलिक पादरी थे। उन्होंने चेष्टा की कि नीच लो...
बाइबिल न पढ़ाई जाय। यह ठीक वैसी ही बात हुई
मारे देश में शूद्र और स्त्रियों को वेद पढ़ने से रोकने की
... पादरियों के सिवाय इंगलैण्ड के धनी लोग भी नहीं च...
कि गरीब पढें। उनका कथन था कि पढ़ने से गरीब ...